अष्टात्मक बोध अधिकार

[सुत्र]

प्रणेता—

परमपूज्य आत्मार्थी सत्पुरुष

श्रीमद् ध्यानविजय जी

प्रतियाँ १००० } आश्विनपद, वीर नि० स० २४८३ { मूल्य ५) रु०

प्रकाशक
श्री कुन्दकुन्द जैन स्वाध्याय मन्दिर,
मु० पो० उज्जैन (म० प्र०)

मूल्य ५) रु०

[ओक्टूबर, १९५७]

मुद्रक—
पं० परमेष्ठीदास जैन
जैनेन्द्र प्रेस, ललितपुर।

अष्टात्मक बोध अधिकार

[सुत्र]

श्रीमद् ध्यानविजय जी प्रणीत

卐

प्रभु-प्रार्थना

अहो प्रभु ! तु पूर्ण स्वरुप ।
स्मरु ते पद हु सुख रुप ॥अहो०॥१॥

पुर्णात्मज्ञ पदे तु स्थित ।
सर्वज्ञ पदथी तुं अलकृत ॥२॥

तुज पदथी स्फुर्यो स्व ख्याल ।
हु ज्ञाता स्व-परनो त्रीकाल ॥३॥

ते निज पदमा थईने एकतार ।
पुर्णात्मक थऊ सर्व प्रकार ॥४॥

ए उर्मी पोषु सुखकार ।
अप्रहित भावे विश्वाधार ॥५॥

अंतिम याचु हे भगवत !
सुधर्म रहो सदा जयवत ॥६॥

कही एम तुजने हे कृपाळ !
वंदुं तुज पद हु त्रीकाळ ॥७॥

सत्यमय जीवन थवा ग्रंथकारनो अंतर

(उद्गार)

卐

सत्यना शोधक बनो, सत्यना पोषक बनो ।
सत्यना धारक बनो, सत्यना प्रेरक बनो ॥
सत्यना साधक बनो, सत्यना बोधक बनो ।
सत्यमय जीवन थवा, सत्यना सेवक बनो ॥

निवेदन

आ पवित्र भारतक्षेत्रना विषे अनेक एवा आत्मज्ञ पुरुषो स्वहीतनी सिद्धी करी स्वरूपस्थ दशाने पाम्या छे। अने तेज हेतुथी एटले तेमना पवित्र चरणोथी स्पर्शायेली एवी आ भुमीने पण तिर्थ-सम क्षेत्र होवाना एवा गौरव भर्या नामथी संबोधवामां आवी छे। भगवान महावीरना निर्वाण बाद आवा स्थितिप्रज्ञ पुरुषोनी संख्या उत्तरोत्तर घटती ज रही छे। तो पण अल्पांशे पण तेनी अस्खलित विद्यमानता आवा दुषम काळना विषे पण टकेली होवानु तेवा आत्मार्थी जीवने पोताना गुण विशेष परिणमनना बळे जोवामा आवे छे। अने ए पण सर्व कोई आत्मार्थी जीवो माटे परम हर्षनु कारण छे।

हुं जे विभुतीने आत्मज्ञ पुरुष तरीके ओळखु छुं, तेओश्रीनु नाम श्रीमद् ध्यानविजयजी छे। तेओश्रीना प्रत्यक्ष सुयोगे मारा जीवनमा शु शु परिवर्तन थयुं? अने तेओश्रीना कया गुणोना लीधे हुं तेओश्रीने सत्पुरुषना बिरुदथी बिरुदावुं छुं, ते सुज्ञ वाचकोने मारा आ विवेचना लेखथी समजाशे।

प्रातःस्मरणीय परमपुज्य सद्गुरुदेव श्रीमद् ध्यानविजयजीनो प्रथम परिचय मने संवत २००८ ना श्रावणवद् अमासे थयो। महापुण्यना उदये ते धन्य दिवसे मने अपुर्व वाणीनो सुयोग संप्राप्त थयो। अमावसनी ते शाम्ली-रात्रीए ते ज्ञानरुपी दिव्य प्रकाशमय वाणीए अनादिना अज्ञान-तिमीरने दुर करवा अपुर्व मार्गदर्शन आप्यु। ते पहेला मारु जीवन वर्तमान दुषित शिक्षणप्रणालीथी आध्या-त्मिक तथा धार्मिक दृष्टीथी लगभग लक्ष्य विहीन हतु। जिनाशय सद् श्रुतनी उत्कृष्टतानु अने तेना धारक पुरुषनुं कंई भान ज न हतुं, अने ते तरफ खास रुची पण न हती। कुलगत संस्कृतिथी प्रेराई मात्र जिनदर्शन अने साधारण व्रत नियम करवा पुरतो ज,लक्ष हतो जगतकर्ता ईश्वर होवानी दृढ मान्यता हती। कोई एक महान शक्ति वीना आ विश्व-लीला केम चाली शके? ते प्रश्न आ जीवने दृढ मान्यता रुपे वर्ततो हतो। वर्तमान विज्ञानीओनी सिद्धीओ जोई तेमना प्रत्ये सहज बहुमान थतु। कोई इच्छीत वस्तुनी प्राप्ती माटे कुदेवादीनी सेवनामा पण जीवन प्रेराई अंध श्रद्धाना पोषक बनतुं।

सद्भाग्ये पुज्यश्रीनो सुयोग अने तेमना अपुर्व आत्मार्थ गुणप्रेरक वचनोनु पान थता उपरोक्त सर्व रुढीगत मान्यताओ पर दृढ प्रहार थयो। जीवन विकासना क्रमनु कंईक भान आव्यु। पुज्यश्रीनी सौम्य-सुखमुद्रा, निरालसता, निर्दोषता, उत्तम काव्यशक्ति, अति संक्षेपमा जिनाशय सत्श्रुतना सुक्ष्म

रहस्यार्थ भावोनु प्रतिपादन करवानी शैलीओ मनं आश्चर्यचकित करी मुक्यो। अध्यात्मरसथी ओत-प्रोत स्वानुभवे रचेला आपश्रीना पदोनुं आपश्रीना मुखे श्रवण थता मारा हृदयना तार झणझणी उठ्या। अने तथा प्रकारना प्रत्यक्ष योगथी दृष्टीगोचर थयेला एवा आ परम गुणोत्कृष्ट जीवननी मारा हृदय पट पर उंडी अने अमीट छाप पडी।

पुज्यश्रीनी परम कृपाओ मने तेमना रचेला ग्रथोनु बालबोध अनुवाद करवानु परम सौभाग्य नप्राप्त थयु। ते परम पुनीत ग्रथोनु अनुवाद करता पाने पाने अने शब्दे शब्दे शुद्ध चैतन्यघन स्व-भावनो महिमा ज्ञान सुधारसथी ओतप्रोत निरुपण, अने स्वानुभवरसथी छलोछल चैतन्यविलासना अपुर्व महात्म्यनो घउनाद समज्यायो अने ते साथे तेमना विर्यरुचीनुं वलण शुद्धात्म सन्मुख होवाना अप्रतिहत वेगनु अने ते अनुसार साध्यनी सिद्धी करवाना-परम एवा ते स्वरुप साधनना विर्य उल्लासनु दिग्दर्शन तथारुप ग्रथना अपुर्व गुथनशैलीपुर्वक अवलोकता तेमना प्रत्ये भक्तिनु विशेष स्फुरवापणु थयुं।

परम एवी आ आध्यात्मीक मुर्तिना प्रत्यक्ष सुयोगे जेम जेम मने वस्तु-विज्ञानना बोधनुं परमार्थ सिंचन अतर-दृष्टीपुर्वक थतु गयु तेम तेम हुं यथार्थ सतनो अनुयाइ बनतो गयो। अने सतना निमीत्तमा देव गुरु शास्त्र केवा प्रकारना होवा जोइये, तेनु पण ते साथे यथार्थ भान आवता हु सहज आतमभावे श्वेतांबर आम्नायनो व्यक्ति होवा छता सहज तेनु परिवर्तन करी दिगम्बर आम्नायनो साधक बन्यो। अने एज ते महाभाग्य बोध-दाताना अनहद उपकारनु परम एवुं आ फल छे।

उज्जैन (म० प्र०)
बसन्त चर्तुदशी, सं० २०१३

वेलजी।

गयरार—

आत्मार्थी सत्पुरुष श्रीमद् ध्यानविजयजी

ग्रन्थकारनो संक्षिप्त जीवन परिचय

जन्मकाल संवत १९४६ मागसर वद अष्टमी राधनपुर
दिक्षाकाल " १९८५ कार्तक वद दसमी पाळनपुर
परिवर्तनकाल " २००६ कार्तिक सुद पुर्णीमा उज्जेन

परम पुज्य सद्गुरु देवनो शुभजन्म विक्रम संवत १९४६ ना मागसर वद अष्टमीए गुजरात प्रांतमां राधनपुर क्षेत्रे वैष्णव सम्प्रदायमा थयो हतो। माता पिताये तेमनु नाम प्रभुलाल राख्यु हतु 'पुत्रना लक्षण पारणामा' ए कहेवत अनुसार आपश्रीमा बाळ वयथीज भविष्यनी महानतानी शाखीनुं दिग्दर्शन थतु हतु, बालवयथी तेमनुं जीवन सहज वैराग्यमय होवाथी अन्य समवयी बाळको साथेनी रमतगमतनो तेमने खास लक्ष नहोतो. छ वर्षनी लघुवयना बाळ समये एकवखत माताये तेमने उतावलथी भोजन आपी समाजमा थयेला एक मृतक देह सस्कार अर्थे तेना गृहक्षेत्रे जवानु सुचव्यु मृत्यु एटले शुं ? ते संबंधीनो प्रश्न माताने पुछता तेमणे तेनो उत्तर 'जीवनुं सरिरमाथी नीकळी जवुं ते मृत्यु' एम सखेपमा जणानी तेमणे ते तरफ प्रयाण कर्युं. प्रश्ननो सखेप उत्तर तेमनी समाधानी अर्थे पुरतो न होवाथी ते संबंधीनी वधु विचारणा उत्तरोत्तर तेमना अतरमां स्फुरवा मांडी, पण समाधानीनु एक पण साधन त्या विद्यमान न होवाथी ते उपस्थित गुचवणनो खास सरळपण निकाल ते समये करी शकायो नहि, तो पण पुर्वकृत संस्कृतिना अनुसंधानरुपे आपण तेमनी एक ऊँच जीवनधारा होवानु दिग्दर्शन करावे छे. आपश्रीनी करुणाप्रधान दृष्टी होवाथी आवी लघुवयमां पण मार्गमां दृष्टीगोचर थता नाना जंतुओना बचाव अर्थे सहज दयामय लागणीनु स्फुरवु थतुं, अने तथाप्रकारनु जैनधर्मनु दयामय तत्व जोइ तेमनु ते तरफ सहज गुण विशेष परिणामे ढळवापणुं रहेतुं।

तेमनुं गृहस्थ जीवन मुबई जेवी मोहमयी विलासप्रिय नगरीमा व्यतित थवा छता तेमने चा, तवाकु जेवु एकपण व्यसन के नाटक सीनेमा अवलोकवानो खास लक्ष नहोतो। रस्तामा कोई पण बाई भाई पर आवेली अकस्मात आफतना बचाव अर्थे तेओश्री तेनो त्या बनतो प्रयत्न करता। एक समय तेओ वालकेश्वरना निवास स्थानथी नजीक आवेली बाणगगा पर आवश्यक पाणीनी पुरती अर्थे सुमारे रात्रीना नव वागे गया, त्या दिवाल पाछना अधकारमा बंगडी जेवा अवाजनु श्रवण थता कोई युवती आवा समये केम आवी हशे ? ते प्रश्ने पुज्यश्रीने शंकाशील कर्या, अने तेनी समाधानी अर्थे ते तरफ

शरिरनु प्रेराइ थयु। त्या उमेली युवतीने अवलोकता उपस्थित शकानु समाधान हृदयगत थयु। अने ते सननी बाइने पण पुछ्युं. प्रत्युतर न मडवाथी तेनो हाथ पकड़ी नजीकनी लाइट सनमुख उभी करी आ समय अहिं आववानो हेतु पुछता तेणे मुंगु रुदन शरु कर्युं. ते समय पाणीनो डोल साथे तेनो हाथ पकडी उपरना माळ पर पोताना निराम स्थाने तेने लइ गया, अने त्या बाजुमां रहेती बाइओना समुदायमा तेने बेसाडी, पुज्यश्री पोताना कार्यनी निवृत्ति थयाबाद ते बाइने शातमन आपी तेनी सर्व माहीती मेळवी. ते उपरथी साबरमतीमा डुबीमरवा माटे त्या आवी हती ते सिद्ध थयु रात्रिना ते बाइनु निवासस्थान उपरोक्त समुदायीक बाइओना समीपांज रह्यु अने बीजे दिवसे सवारे तेना निवासस्थाननी जग्याये तेने साथे लइ जइ तेना श्वसुरपक्षी जीवोने योग्य भलामण करी ते बाइ तेना हवाले करवामा आवी।

आ उपरथी निष्कर्ष एज ग्रहण करवा योग्य छे के उपरोक्त युवान बाइनी मुलाकात रात्रीना नव वागे एकांत स्थानमा थवा छतां, बाइ सौन्दर्यवान अने सुवर्णादि शृंगारथी युक्त छतां अने पुज्यश्रीनी वीमयी बात्रीस वर्षनी युवावस्था होवा छता तेमने प्रलोभनना एक पण कारणे असर उपजावी नहि अने एज तेमाथी परमार्थ बोध ग्रहण करवा योग्य छे।

मुंबइमा प्रथम आपनी गवर्नमेन्ट सर्विस हती। सन १९१४ नी व्रॉ डोकटर थयाबाद तेमणे ते सर्विस छोडी फ्रोमर रोड पर दवाखानु खोलवामा आव्यु, त्या फुरसदना समये धर्मनी शोध अने भीन्न भीन्न दर्शनकारनी समालोचना पण करता। व्यहारनी शोधथी के क्रियाथी धर्मनी सिद्धी थाय के केम ? जो थाय तो तेनो पुरावो शु ? अने न थाय तो पाणी वलोववाना जेम ते क्रियाथी लाभ शुं ? आ प्रश्नो अनेक प्रसंगे स्फुरायमान थता। अने तेना समाधान अर्थे सतत मथन पण करता। आर्यसमाजनुं सत्यार्थ प्रकाश वाचवामा आव्यु। पण आपश्रीनो झकनाने अनुरुप एवुं मार्गदर्शन तेमाथी मळी शक्युं नहि. आखीर मुंबइना कटालेला जीवने त्याथी हमेशना माटे विदायगीरी लीधी अर्थात् संवत १९८० नी आखरीये तेमणे मुंबइनो परित्याग कर्यो अने थोडा वखत माटे अमदावादना एक निवासस्थानमा कुटुंबनी शारिरीक असातांना अंगे विश्रांती लीधी। त्या तेमना गृहपत्निनुं अवसान थयु, त्यारबाद पालनपुर जइ त्या दवाखानु खोलवामा आव्यु, अने निवास तरीके त्याज रहेवु तेमणे उचीत गण्यु. अहीं आव्या बाद संतानमा आशरे चौद वर्षनी जे एकज पुत्रि हती तेनु पण अवसान थयु। दरमीयान गमगीनीना आ चालु समयमा तत्वनी वास्तविक शोध माटे तेमने विशेष तालावेली उत्पन्न थइ। अहिंना वतनी भोगीलाल गोदडभाई नामना एक गृहस्थ के जे तेज विचारना साधक अने शोधक हता, अने तेथी तेमनो परिचय पुज्यश्रीने तत्व मन्मुखता माटे विशेष उपकाररुप थयो। ते भाइए

श्रीमद्राजचन्द्र नामनो एक ग्रन्थ पूज्यश्रीने वाचवा विचारवा माटे आप्यो । जेनुं अति जागृतिपूर्वक अध्ययन थता जीवन एकाएक परिवर्तनशीलपणाने पाम्यु । जैनधर्मनो स्वीकार अने तेनी साची मन्मुखता आत्मभावे थई । ते साथे आजीवन ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञानो पण अगधार तेज दिवसे एटले सवत् १९८३ ना महासुद अष्टमीए थयो । दवाखानानी पण सर्व प्रकारे निवृत्तिनो लक्ष प्रधान करी तेनी सर्व प्रकारनी नवीन योजनानो प्रतिबन्ध करवामा आव्यो । दरम्यान समयमा राधनपुर जई त्या मकान विगेरे सर्व बाह्य परिग्रहरुप विद्यमान सामनोनु वेचाण करी, तयारप सबंधनु सर्व प्रकारे निवृतिपणु कर्युं । त्यार बाद त्याथी पालनपुर आवी दवाखानानो सर्वथा निकाल अने ते साथे गृहस्थ जीवनने लगता लेवामनो पण सर्वथा परित्याग कर्यो अने ते जग्याए त्रण वस्त्रनो आदर एटले म्हाटीनु एक वढियान एक पछियु अने ओढवा माटे पछेडी एम त्रण वस्त्रना स्वीकार साथे, सिर मुड अने खुल्ला पगे विचरवानुं सरू कर्युं । दरम्यान त्याथी एटले सवत् १९८४ ना चैत्री पुर्णिमाए आबू पर जई देलवाडानी एक गुफामा भगवान महावीरना फोटा सन्मुख रूपस्थ ध्याननी सरूआत करी । ते समय विजयकेशरसूरिजी महाराजश्रीनो त्या सहज मेळाप थयो । तेमना सरल परिणामी जीवनने अवलोकता अने ते साथे तेमनी तत्व जिज्ञासु वृत्तिनु निरीक्षण थता ते सबधी पूज्यश्रीने घणोज हर्ष थयो । अने तेमना प्रत्ये प्रेम पण स्फुर्यो । त्या अमुक माम तेमना समर्गमा पसार थया बाद तेमने गुजरात तरफ आववानु नक्की थता तेओश्रीए ते तरफ विहार कर्यो । दरम्यान समय पूज्यश्रीए पण पाळीताणा जई त्या चातुर्मास माटे स्थिरता करी । अहीं तेमने चार मास मौन अने ते साथे एक वखत आयंबिलनो खोराक लई, समयनो लगभग उपयोग ध्यानस्थ दशामा व्यतीत कर्यो । त्यार बाद विजयकेशरसूरिजी महाराजश्री साथे पत्र समाचारीथी घडायला प्रोग्राम अनुसार कार्तिक वद २ तेमणे पालनपुर तरफ प्रयाण दीक्षा माटे कर्युं । अने त्या जई भोगीलाल गोदडभाईने त्या ते अर्थे स्थिरता करी । दरम्यान महाराजश्री विशनगरथी विहार करी समय पर तेओश्री पण पालणपुर पधार्या अने त्या धारेला दिवसे एटले सवत् १९८५ ना कार्तिक वद १०मी ए पूज्यश्रीए श्वेताम्बर जैन दीक्षा ग्रहण करी । दीक्षा थया अगाऊना समीप काळमां समय मेळवी पूज्यश्रीए विजयकेशरसूरिजी समक्ष एक पोतानो अन्तर उद्गार जाहेर कर्यो हतो । ते ए के मारू ध्येय केवल आत्मार्थ सन्मुखता अने ते पूर्वकनी आत्मार्थ साधना छे । तेमा मने कोई पण बाह्य निमित्त आत्मार्थ विरुद्ध देखाशे तो हुं तेज वखते तेनो परित्याग करीश । आवा प्रकारना सूचननो महाराजश्री तरफथी स्वीकार थया बादज उपरोक्त दीक्षा अंगीकार करवामा आवी हती । पोताना लक्षबिंदुनी के शुद्ध साध्यनी सिद्धि अर्थे तेओश्री केटला जागृत, निडर अने स्पष्ट वक्ता हता, ते उपरोक्त कथनथी सिद्ध

थाय छे। अने एज तेमना प्रामाणिक जीवननो चितार सुज्ञ वाचकोए अन्तर्गत करवा योग्य छे। अस्तु।

पूज्यश्री दीक्षित थया बाद विजयकेशरसूरिजी महाराजश्री साथे तेमणे विहार करी ईडर प्रांतमा वडाली क्षेत्रे जई स्थिरता करी। अने पहेलु चातुर्मास पण त्यांज थयु। त्यार बाद महाराजश्री साथे विहार करी तेओश्री तारगा हिल पधार्या। अने त्यांनी एक श्वेताम्बर धर्मशालामा मुकाम कर्यो। दरम्यान समय त्यां तपास करता एक दिगम्बर गुफा होवानु विदित थयु। अने स्वरूप ध्यान माटे ते अनुकूल होवाथी ते अर्थे त्यां अमुक कलाको रहेवानो प्रबंध पण कर्यो। दरम्यान एक समय महाराजश्री साथे सांजना प्रतिक्रमण समय धर्मशाला तरफ पाछा फरता, वचमा आवेली दिगम्बर धर्मशालाना नाके बहार सरीआम रस्ता पर एक निग्रन्थ मुनि अने ते साथे एक आर्यिका परस्पर वातो करता उभेला पूज्यश्रीए अने तेमनी साथे महाराजश्रीए जोया। महाराजश्रीने आ घटना विपरीत देखावाथी रस्तामा जरा आगळ जई बोल्या, के नग्न साधुनो आर्यिका साथे सरीआम रस्ता वच्चे वार्तालाप ए केटली शरम भरेली वात छे। पूज्यश्रीनु रस्तामा नियमा मौन रहेतु होवाथी तेमणे तेनो काई पण प्रत्युत्तर ते समय आप्यो नहीं। निवासस्थाने जई, प्रतिक्रमणना समये पूज्यश्रीए महाराजश्रीना ते विचारनो प्रतिरोध करता जणाव्यु के आपनो ते विचार विमुख भावे उपस्थित थयेलो होवाथी यथार्थ रूप नथी। तो पछी सन्मुखभावे तेनु यथार्थपणुं कई रीते घटी सके, एम महाराजश्रीए पूज्यश्रीने नम्रभावे पूछ्यु। उत्तरमा तेमणे जणाव्यु के सन्मुखभावे उपस्थित थयेला विचारमा एकज अवर उद्गार स्फुरवा योग्य छे के निग्रंथ नग्न दिगम्बर साधुनो सरीआम रस्ता पर आर्यिका साथे वार्तालाप थवा छता शरीरनु कोई पण चिह्न के तेनी मुखमुद्रा विकारग्रस्त दृष्टिगोचर थती नथी। एज तेना जीवननी महत्ता प्रशंसवा योग्य छे। सन्मुखभावे आ एकज विचारने आत्मार्थी जीवे अवधारवा योग्य छे। अने ते करता विशेष शुद्ध स्वभावना लक्षे ते ज्ञेयरूप घटनाने मात्र ज्ञाताभावे जाणवा योग्य छे।

उपरोक्त स्थाननी क्षेत्र स्पर्शणा पूर्ण थया बाद त्यांथी पूज्यश्रीए महाराजश्री साथे विहार करी देहगाव क्षेत्रे आवी चातुर्मास माटे स्थिरता करी। त्यार बाद पूज्यश्रीनी महाराजश्री साथे अहमदाबाद क्षेत्रे स्थिरता थई। अहीं महाराजश्रीनी शारीरिक प्रकृति अस्वस्थ रहेवाथी तेमने तेमनी सारवार माटे वधु वखत रहेवानी फरज पडी। त्यारबाद महाराजश्रीनी अनुमति थता तेओश्रीए एकाकी विहार करी। वडाली क्षेत्रे आवी चातुर्मास माटे स्थिरता करी। अहिं आव्या बाद महाराजश्रीनी मांदगी एकाएक वधवाथी तेमनु आखिर अहमदाबाद मुकामेज संवत् १९८७ ना श्रावण मासमा अवसान थयुं। त्यारबाद पूज्यश्रीनु रहेवु अने विचरवु सर्वथा एकाकीपणे थयु। अस्तु।

उपरोक्त चातुर्मास पूर्ण थया बाद पूज्यश्रीनु अनेक ग्रामानुग्राम क्षेत्रे सर्वथा एकाकीपणे विचरवु थयुं। तेना आज सुधीना अनुक्रममा वडाली, देहगाव, पाटण, माडल, पालनपुर, खेटब्रह्मा, मोयणी, व्यारा, ओलपाड, मरार, बोरसद, मोरवी, एदलाबाद, वणी मूर्तिजापुर, करजगाव, उज्जैन, मण्डवा, खांमगाव अने ललितपुर विगेरे क्षेत्रनो समावेश थई जाय छे। तेमा खास अपायेला उपदेशनुं के कोई उपस्थित घटनानु अहीं क्षेत्र प्रधान दृष्टिए निरुपण करवामा आवे छे।

पाटण क्षेत्रे खास अपायेला उपदेशनुं निरूपण।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करता एक समय एटले सवत् १९९० मा पाटणक्षेत्रे पधार्या। अने त्या थोडा वखत माटे स्थिरता अने उपदेश प्रवृत्ति चालू प्रवाहरूपे रही। सघ अने सोमायटीना परस्परना उपस्थित क्लेशनु शमन केम थाय अने जीवो धर्मना सत्यार्थ मार्गने शी रीते पामे? ए विषयनी पूर्ति अर्थे अहिं पूज्यश्रीनो खास उपदेश हतो। त्रण मासनी अंदरनी स्थिरता पूर्ण थयेथी विहारना आखिर समये पूज्यश्रीए सर्व जैन भाइयोंने नीचे प्रमाणे करुणात्मक सूचन कर्युं।

"बन्धुओ! अने बहेनो! रामसूरि अने वल्लभसूरि ए बन्नेना पक्षथी रहित हु एक आत्मार्थी जीव छु में आज पर्यंत जे जे उपदेश कर्यो छे अने करूं छु ते ते परस्परना पक्षनी के कोई एक पक्षनी पुष्टि अर्थे नथी। पण ते उपस्थित थवाना मूल कारणरूप भूलनी निवृत्ति अर्थे छे। ते मूल बीजभूत भूलमा मात्र एक मिथ्यात्वनो के ते पूर्वक थता रागादि वा क्रोधादि कषायनो समावेश थाय छे। साधु साध्वी श्रावक अने श्राविका आजे ते भूलथी ग्रस्त होवाथी सौ कोई पोतपोतानो मार्ग भूल्या छे, अने तेज कारणथी परस्पर क्लेशमय वातावरण प्रसर्युं छे। अने प्रसरतु जाय छे। तेनु सघ अने सोमायटी बन्ने पक्षो कइक शात चित्ते विचार करशे तो ते वात सहज सौ कोईने समजाशे। अने ते द्वारा परस्पर थता दोषारोपणनी निवृत्ति पण आत्मभावे थशे। अने तेम थवा माटे सर्व कोई बन्धुओ अने बहेनोने मारुं आत्म भावे करुणात्मक एवु आ नम्र सुचन छे। अस्तु।

खेडब्रह्मा क्षेत्रे उपस्थित घटनानु चित्रपट।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करता एक समय एटले सवत् १९९२ मा खेड ब्रह्मा क्षेत्रे पधार्या। अने त्या चातुर्मास माटे स्थिरता करी। आ क्षेत्रमा जैन करता पण जैनेतर लोको अने तेमा पण मुख्यपणे ब्राह्मण बाइओनु उपदेश माटे विशेष आवागमन रहेतु हतु। तेथी पूज्यश्रीनी उपदेश-प्रवृत्ति चार मास पर्यंत चालू प्रवाह रूप रही। ब्राह्मण बाईओनु विशेष आवागमन जोई अहींना

ब्राह्मण वर्गमा एटले मुख्यत्वे करी पुरुषोमा मोटो खळभळाट शरु थयो। अने तेना प्रतिरोध माटे अहींनो ब्राह्मण समाज एकत्र थई तेना कानूनरूपे—कोई पण स्त्री वा पुरुष महाराजश्रीना स्थाने जशे तेनो पाच रुपया दण्ड लेवामा आवशे। आवा प्रकारनो कानून पसार थवाथी बाइओ पूज्यश्रीना व्याख्यानमा जती जोके अटकी। पण तेना बदले तेओए महाराजश्री गोचरी समय बाहर निकले त्यारे सरीआम रस्ता पर तेमने वन्दन करवानुं शरु कर्युं। मतलब के आखिर ते कानून तेनो टकी शक्यो नहीं। अने ते पण ते बाइओनी जैनधर्म प्रत्ये अने तना बोधक पूज्यश्री प्रत्ये दृढ श्रद्धान होवानु सुचन करे छे। अस्तु।

मांडल क्षेत्रे उपस्थित घटनानुं चित्रपट।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समय एटले संवत् १९९३ मा मांडल क्षेत्रे पधार्या। अने त्या थोडा वखत माटे स्थिरता अने उपदेश प्रवृति चालू प्रवाहरूपे रही। दरम्यान एक समय व्याख्यान बाद एक बाईए थोडी अगत्यनी वात माटे समयनी याचना करी। ते समय अनुकूल होवाथी, पूज्यश्रीए तेने पोतानी वात जाहेर करवानुं फरमाव्यु। बाईए ते समय पोतानी वात नीचे प्रमाणे शरू करी :—

"हुं अहींनी वतनी छु। मारु नाम धेलीबाई छे। मने लगभग ५ वर्षथी द्वादश अनुप्रेक्षाना चिंतननथी समार प्रत्ये वैराग्यनु स्फुरवुं थयु छे। लग्नथी बन्धन ग्रस्त न थवानो सद्‌विवेक पण मने तेज समयथी स्फुर्यो हतो। अने ते वात मैं प्रथमथी ज मातापिताने जाहेर पण करी हती छता तेओए लगभग त्रण वर्ष पर मारी विरुद्ध थईने मारू लग्न अहमदावाद क्षेत्रे कर्युं। ते लग्न अहीं माडल थया बाद मने ते प्रसगे अहमदाबाद जवु पडयु। तेज रात्रिए लग्न ग्रस्त पुरुषना शयनगृहमा मारो प्रवेश थया बाद तेणे मारी साथे विकारवृत्तिनी इच्छा दर्शावी में ब्रह्मचर्यना लक्षे तेनो सदंतर इन्कार कर्यो। आम थवाथी तेने मारा पर अति इतराजी थई। अने ते साथे आ शरीर पर तेणे मार-पीटरूपे प्रहार पण कर्यो। रात्रि जेम तेम पूरी थया बाद सवारमा ते उपस्थित तकरारना फलरूपे अत्रेना गृहस्थेनेमा सर्व वातावरण बदलाई जवाथी हुं तेमने सूचन करी अहीं मांटल आवी। अहीं पण मातापिताने मारा पर विशेष अणगमो आव्यो। अने तेओए पण मारा पर मारपीटनो विशेष प्रहार कर्यो। अने ते साथे तेमणे मने पुनः अहमदावाद जवानु कह्यु। ते बदल मारो सर्वथा इन्कार थवाथी तेओए श्वसुर पक्षने आ वात जाहेर करी। त्यार बाद तेमणे पण मने अहमदावाद लई जवा अहीं आवी अनेक उपायो योज्या। अने ते साथे मारा चलणने ते तरफ वाळवा अनेक गुप्त प्रयासो पण

कर्या । अने लाबो वखत तेमणे मारी राह पण जोई । छेवटे ते सौ निष्फल थवाथी थाकीने तेओए मारो कबजो लेवा माटे दीवानी कोर्टमां केम दाखल कर्यो । जे हाल चाले छे । हवे हुं आपनी पासे मारा हित सबधी उपायनी याचना करु छुं । तेनो मने योग्य उत्तर आपशो ।"

पूज्यश्रीए उत्तर आपता कह्यु के—तारा माटे ठीक उपाय जैन आर्यिका थवुं ते छे । के जेथी बन्ने पक्षनो छुटकारो सहज थई शकशे । बाइए उत्तर आपता कह्यु के मारो पण हवे तेज विचार छे । ते माटे मारे कोर्टमा शुं कहेवुं उचित छे ते मने कृपा करी जणावशो । पूज्यश्रीए उत्तर आपता कह्यु के कोर्टमा तारे शुं कहेवु तेनु संक्षेप सुचन नीचे प्रमाणे छे ।

"लग्न थया त्यारथी ते आज पर्यंत लग्न थवा छ्ता मारो तेनी साथे कोई पण प्रकारनो ससारी सबध नथी । संसार प्रत्येना वैराग्यथी हुं प्रथमथीज लग्नना बन्धनने इच्छती न होती । ते वात में मातापिताने जाहेर पण करी हती । तेम छ्ता तेमणे जबरजस्तीथी मारु लग्न कर्युं छे । हवे हु ते संबधनो छुटकारो करी वैराग्य मार्गे विचरवा एटले जैन आर्यिका बनवाना दृढ निश्चय पर आवी छुं । अने ते माटे कोर्ट मारा मार्गने पूरतु उत्तेजन आपशे । ए मारु नम्र निवेदन छे ।

ऊपर प्रमाणे सर्व समाधान थया बाद बाई पोताना गृहस्थान तरफ विदाय थई । त्या माताए गृहस्थेने आववां थयेला विलम्बनु कारण पुछ्यु । बाइए अक्षेनी सर्व वात स्पष्ट जाहेर करी । माता तरफथी ते वात पिताने जाहेर थता तेने ते विपरीत देखावाथी तेणे पुत्रीने पूज्यश्री पासे जवानो प्रतिबध कर्यो । तेम छ्ता पुत्री शौर्य वापरीने पूज्यश्रीना दर्शनार्थे आवी । पिताने आ तेनुं विरुद्ध आचरण देखावाथी, ते तुरतज तेनी पाछळ आवी, तेने बलात्कारथी घेर लई जवा आग्रह कर्यो । ते समय पुत्री मौन रहेवाथी ते वधारे आवेशमा आवी तेना शरीर पर पूज्यश्री समक्ष मारपीट रूपे प्रहार कर्यो । पूज्यश्रीए ते समय बाईने घेर जवा सुचव्यु । बाई ते अनुसार तेना पिता साथे घर तरफ विदाय थई ।

आवी घटना पूज्यश्री समक्ष बनवाथी, तेमने ते बाई पर अत्यत करुणा भावनु स्फुरण थयु । अने ते अनुसार तेमणे ते बाई ज्या सुधी बन्ने पक्षथी मुक्त न थाय के आर्यिका न बने त्या सुधी अनाजनो परित्याग करी केवळ दूध पर रहेवानो अभिग्रह तेज दिवसे एटले सवत् १९९३ ना वैशाख शुक्ल चतुर्दशीए कर्यो ।

उपरोक्त वात माडल क्षेत्रमा जाहेर थता क्रमे ते बाईना श्वसुर पक्षमा पण विदित थई । अने तेथी ते बाईना ससराए पोताना एक मुनीमने तेनी तपासणी माटे माडल मोकल्यो । अहीं मुनीमने पूज्यश्रीना अभिग्रह संबधी सर्व वात स्पष्ट समजाता तेणे अमदावाद जाई, ते बाईना ससराने

अंगेनी सर्व वात स्पष्ट जाहेर करी । तेने आ वात अति दुखरूप देखावाथी ते भाई समय मेलवी लगभग जेठ वदमा अहीं माडल आव्या । अने पूज्यश्रीनी तेणे खानगी मुलाकात लीधी । पूज्यश्रीए ते भाईने अंगेनी सर्व बिना स्पष्ट निदित करी । अने ते साथे ते बाईनी मक्कमता पण दर्शावी । ते उपरथी ते भाइए पूज्यश्रीने नम्र भावे कह्यु के आ सबधमा आप जेम कहो तेम करवा हवे हुं तैयार छु । पूज्यश्रीए ते भाईने बाईने दीक्षा अपाववानुं सूचन कर्युं । ते वात तेने कबूल थतां पूज्यश्रीए तेने ते कार्य माटे हाल तुरतमा ते बाईने साथे लई—देहगाम आर्यिका पासे जवानु कह्यु । अने ते साथे आर्यिका उपर पत्र लखीने पण पूज्यश्रीए तेने आप्यो । अने ते साथे ते बाईने पण सासरा साथे देहगाव जवानु सूचव्यु । ते अनुसार तेज साजे तेओ बन्ने देहगाम तरफ रवाना थया । अने त्यां आर्यिकाने अंगेनो पत्र आपता बीजे दीवसे ते बाईने दीक्षा पण अपाई । अस्तु ।

भोयणी क्षेत्रे उपस्थित घटनानु चित्रपट ।

पूज्यश्री अंत्रेथी विहार करी असाड सुदी पंचमीए भोयणी क्षेत्रे पधार्या अने त्या चातुर्मास माटे स्थिरता करी । अने अन्न अहारना प्रतिबंधरूप अभिग्रहनी निवृति पण त्या तेज दिवसे थई । अहीं एक मास तो निर्विघ्ने पसार थयो । त्यार बाद भोयणी तीर्थनी कमीटीना एक जैन भाइए अहमदावादथी अहीं आवी पूज्यश्रीनी मुलाकात लीधी । अने पूछयु के आप एकला केम छो । अने नियमित मन्दिर जाओछो के केम ? पूज्यश्रीए तेनु योग्य समाधान कर्युं पण ते अबोध भाईने ते वात न समजावाथी तेणे बीजे दिवसे अहमदावाद जई अहींनी कमीटीने अंगेनी बीना पोतानी समज प्रमाणे जाहेर करी । कमीटी ते वातनो योग्य विचार न करी शकवाथी तेओए तुरतज एकल-विहारी साधूने चातुर्मास माटे कमीटी मजूरी आपती नथी । एवो एक पत्र भोयणी तीर्थना मुनीमने लखी ते जग्या खाली करावबानु सूचन कर्युं । मुनीमने पत्र मळता ते सत्यनो साधक होवाथी तेने अत्यन्त खेद उपस्थित थयो । आखिर नोकरीनी पराधीनताने वश थई अति खेद पूर्वक पूज्यश्री पासे आवी पोताने कमेटी तरफथी मळेला पत्रनी बीना रजु करी । पूज्यश्रीए मुनीमने शान्त्वना आपी कह्युं के श्रावण पूर्णिमाए आ जग्या खाली थई जशे । एम तमे कमीटीने जाहेर करो । ते अनुसार मुनीमे ते वात कमीटीने जाहेर करी ।

उपरोक्त वातना चालु विषयमा अहींना स्टेशन मास्टरनी हाजरी होवाथी भक्तिवश तेने पण आ वाते अति खेद उपस्थित कर्यो । अने ते साथे तेना सबधी वेदान्तियोने अहीं एक मकान शोधवा सूचव्यु । ते अनुसार तेनो योग्य बदोबस्त थता श्रावण पूर्णिमाना सवारे तेमणे पूज्यश्रीने त्या पधारवा विनती करी अने ते अनुसार पूज्यश्रीनी त्या पधरामणी पण थई । अस्तु ।

एदलाबाद क्षेत्रे उपस्थित घटनानुं चित्रपट।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समय एटले सम्वत् २००१ मा एदलाबाद (पूर्व-खानदेश) क्षेत्रे पधार्या। अने त्या चातुर्मास माटे स्थिरता करी। अहीं जिज्ञासुओ वधु प्रमाणमा होवाथी। उपदेश प्रवृति चार मास पर्यंत चालु प्रवाहरुपे रही। दरम्यान एक समय एटले आसो मासनी शरुआतमा एक जैन भाईए आवी—अने दर आसो सुद नोमना दिवसे हेलो (पाडो) मारवानी प्रथा छे, अने ते कार्य हलकी जातना लोको करय करे छे, एम पूज्यश्रीने कह्युं। पूज्यश्रीने आ वातनु श्रवण थता अति खेदनु स्फुरवु थयु। अने ते समये आ क्षेत्रे न रहेवानु पण चिंतव्यु। अने जाहेर पण कर्युं। जैनोमा आ वात फेलाता तेओ घभराईनो पूज्यश्री पासे आव्या। अने कोई रीते अत्रेज तेना प्रतिकारनो उपाय योजाय तो जैन सघने परम हर्षनु कारण थाय। एम नम्रभावे विनवी पूज्यश्रीना उत्तरनी राह जोता बेठा। ते समय पूज्यश्रीने एक विचार उपस्थित थता पृछयु के अहीं मेजीस्ट्रेट कोण छे ? उत्तरमा "एक हिन्दु दक्षणी ब्राह्मण छे।" एम ते जैन भाईए कह्युं। जाओ तेमने कहो के महाराजश्री हाल आपने याद करे छे। एम पूज्यश्रीनु फरमान थता ते भाई तुरत तेमना गृहस्थाने जई तेमने ते प्रकारे सूचन कर्युं। समाचार मळता तुरत ते भाई (मेजीस्ट्रेट) पूज्यश्री पासे आव्या। अने पोताने बोलाववानु कारण पूज्यश्रीने पूछर्युं। उपरोक्त सर्व बीना पूज्यश्रीए तेमने अति खेद साथे जणावी। उत्तरमा तेमणे नम्रभावे कह्यु के ते लोकोनी आ मतबीनी अर्जी हु मजूर नहीं करूं। एटलु हु बराबर करी शकीश। आप हवे ते माटे नचींत रहेशो। एम कही ते भाई पूज्यश्रीनी रजा लई स्वस्थानके विदाय थया। क्रमानुसार समय व्यतीत थता आसो सुद अष्टमीनु प्रभात थयु। हिंसक पार्टिए हेलो पण हाजर कर्यो। रजाना दिवस होवाथी मेजीस्ट्रेटनी पण त्या हाजरी न होती। दरम्यान समये पूज्यश्रीए विचार करीने जैन सघने नीचे प्रमाणे सूचन कर्युं—नोम दसम वे दिवस सर्व जैन भाइयोनी दूकानो सर्वथा बंध रहे। सौ भाई बहेनो वे दिवस उपवास के आयबिल करे। एम पूज्यश्रीए पण पोताना अगन जीवनमा तेम वर्तवानो दृढ निश्चय करीने कह्यु। तेमना सूचन प्रमाणे सर्व जैन भाइयोए तेम कर्युं। दरम्यान समयमां हिंसक पार्टिए जे अर्जी पोलिसमा रजु करी हती तेनी मेजिस्ट्रेटनी सूचन प्रमाणे मंजूरी न मळवाथी। ते पार्टिए ते बदल जलगाव हेड पोलीस कमिश्नरने एक तार कर्यो उत्तरमा ते बदल "एदलाबादना मेजीस्ट्रेटने मळो" आवु त्यानुं स्पष्टार्थ व्याख्याण मळवाथी अने ते साथे पोतानो मुकरर समय पसार थई जवाथी। ते पार्टीने फरजियात ते हेलो सहीसलामत घेर लई जवो पडयो। मतलब के ते दिवसथी आ अधम प्रथानो हमेशना माटे छुटकारो थयो। अस्तु।

उज्जैन क्षेत्रे उपस्थित घटनानु चित्रपट ।

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करतां एक समय एटले संवत् २००५ मां उज्जैन क्षेत्रे पधार्या अने त्यां अवंती पार्श्वनाथनी धर्मशालामा चातुर्मास माटे स्थिरता करी । अहीं जिज्ञासुओ वधु प्रमाण मां होवाथी उपदेश प्रवृत्ति चार मास पर्यंत चालु प्रवाह रूपे रही । दरम्यान समयमा आवनार श्रोताओ मुख्यपणे श्वेताम्बर होवाथी त्यां श्रवण थयेला बोधनु परिणमन पण तेमने ते रूपे कहेतां तथा प्रकारना मतार्थ भावेज थतुं । अने ते परिणमनमा पोतानी भूलो तत्वशोधक दृष्टिना अभावे लक्ष्यगत न थती होवाथी तेओ विशेष मतार्थ भावने दृढ करी पूज्यश्री प्रत्ये उपेक्षित भावे वर्तवा उद्यमवंत थता । अने क्रमे तथा प्रकारना विमुख वर्तनना फल रूपे, पूज्यश्रीने ते जग्या खाली करावाना मुख्य विचारने अवलंबित थई अने ते अनुसार त्यां आवी तेमने अषाढ सुद तेरसना रोज जग्या खाली करवानु सूचन पण कर्युं । पूज्यश्रीए उदयनी जबरजस्ती आ कार्यमा मूल हेतुरूप होवानु विचारी तेनो सहर्ष स्वीकार कर्यो ।

उपरोक्त वातना चालु विषयमा श्वेताम्बर छता परमार्थ बोधना साधक एवा जे जीवो अहीं हाजर हता तेओने भक्तिवश आ वातनु श्रवण अति खेदरूप थयु । अने तुरत ज तेओ चातुर्मास माटे अनुकूल जग्या शोधवाना प्रयत्नमा योजाया । बे दिवसना परिश्रमे ते कार्य सफल थता पूर्णिमाना सवारे तेमणे पूज्यश्रीने त्यां पधारवा विनती करी । अने ते अनुसार पूज्यश्रीनी त्यां पधरामणी पण थई । अस्तु ।

पूज्यश्रीनी अंतिम समालोचना

पूज्यश्री दीक्षित थया त्यारथी ते आज पर्यंत तेमनो मार्ग तत्वशोधक दृष्टिनो अने ते अंगे विशेष अन्तर्मुख विचारणानो हतो । शोधक दृष्टिमा तेमणे श्वेताम्बर अने दिगम्बर आ बे विभाग मा तत्वदृष्टिए शु शु तफावत छे, अने न्यायदृष्टिए ते उभयना तोलनमा तेमानो क्यो विभाग सत्यार्थ रूप होवानु सिद्ध करे छे, तेनु तेमणे विशेष बारीकाईथी खूबज शोधन कर्युं । अने ते उपरथी दिगम्बर तत्वनु सत्यार्थपणु सिद्ध थता त्यां एक महत्वनो प्रश्न हाल जे विभाग मां पूज्यश्री छु विचरतु थई रह्यु छे, ते दृष्टिए उपस्थित थयो । अने ते ए के दिगम्बर तत्वनो अवधार श्रद्धा रूप अने देवादि त्रयना आचरणरूप एम बन्ने प्रकारे परमार्थ लक्षे थया विना श्रीजिने निश्चय सम्यग्दर्शननु जे निरूपण कर्युं छे तेनी सिद्धि थाय के केम ? जो थाय तो बाह्यांतर दिगम्बर मार्गना स्वीकारनो काई पण हेतु रहेतो नथी । अने न थाय तो तेना स्वीकार विना स्वसिद्धिनो अन्य एक

पण उपाय नथीं। मतलब के दिगम्बर तत्वनो अवधार एज गृहीतागृहीत मिथ्यात्वना अभावनो हेतु छे। अने त्याज सम्यग्दर्शननी सिद्धि उभय ग्रन्थी भेदपूर्वक उभय प्रकारे (निश्चय अने व्यवहार रूप) थती होवानु श्रीजिने फरमाव्यु छे। अने तेथी बाह्यांतर दिगम्बर मार्गना स्वीकार विना एटले श्रद्धारूप अने देवादि त्रयना आचरणरूप एम बन्ने प्रकारे तेनु परमार्थ आराधन थया विना स्व सिद्धिनो अन्य एके उपाय नथी। आवा प्रकारनी पूज्यश्रीनी अंतर समालोचना थता ते द्वारा तथा-प्रकारना तत्वशोधनथी तेना फलरूपे थयेलु एवु जे अंतर-स्फुर्ण ते ए के असत्यार्थ निमित्तना लक्षे उपादान जे भूलरूपे परिणम्यु छे तेनु सत्यार्थ निमित्तना लक्षे भान थता ते भूलना अभाव पूर्वक तेना बाह्य एवा असत्यार्थ निमित्तोनु पण श्रद्धा अने आचरणमा अभावपणु थवु एज तत्वशोधक दृष्टिना धारक एवा आत्मार्थी जीवना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनु परम एवु आ फल छे। आवा प्रकारनी अन्तर-समालोचना पूज्यश्रीनी थया बाद तेनो निशंकभावे अभिप्रायमा स्वीकार श्वेताम्बर आम्नायनु बाह्यलिंग तेमनु होवा के देखावा छता पण घणा ज लावा वखतथी थई चुक्यो हतो, तेम छता आज पर्यंतना व्यतीत थयेला काळमा तेओ श्वेताम्बर-लिंगे अमगपणे रही पोतानी अंतरग तैयारीने पुष्ट बनाववाना प्रयत्नमा ज योजायेला हता। जेनी आज उज्जैन क्षेत्रना विषे पूरती तैयारी थता सं० २००६ ना कार्तिकी पूर्णिमाए शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावना अतर्मुख लक्षे पोते पोतानी भूलरूप अवस्थानु परिवर्तन कर्युं अर्थात् दिगम्बर मार्गना परमार्थ आराधनमा उपयोगनी अतर्मुख स्थिरता करी। अस्तु।

मूर्तिजापुर क्षेत्रे उपस्थित घटनानु चित्रपट

पूज्यश्री ग्रामानुग्राम विहार करता एक समये एटले सवत् २०१२ मा मूर्तिजापुर क्षेत्रे पधार्या। अने त्या चातुर्मास माटे स्थिरता करी अहीं जिज्ञासुओ बहु प्रमाणमा होवाथी उपदेश प्रवृत्ति चार मास पर्यंत चालू प्रवाहरूपे रही। दरम्यान एक समये व्याख्यान बाद एक बाइए थोडी अगत्यनी वात माटे समयनी याचना करी। ते समय अनुकूल होवाथी पूज्यश्रीए तेने पोतानी वात जाहेर करवानु फरमाव्युं। बाइए ते समये पोतानी वात नीचे प्रमाणे शरू करी:—

" हु कच्छनी वतनी छुं। माता पिता अहीं रहेता होवाथी हुं पण केटलाक वखतथी अहीं तेमनी साथे छुं। मारु नाम चम्पा छे। मने थोडा वखतथी ससार-परिस्थितिनो विचार करता वैराग्यनु स्फुरवु थयु छे। अने तेना तात्कालिक समयमा आपनु अहीं पधारवुं थवाथी अने ते साथे सतत आपना बोध-श्रवणनो लाभ मळवाथी मारा वैराग्यग्रस्त जीवनने विशेष पुष्टी मळी छे। अने

तेथी हवे हु लग्नना विकारात्मक जीवनने इच्छती नथी । पण निर्विकार एवा आत्मकल्याणना मार्गने इच्छुं छुं । आ समयमा कोई वखत मने श्वेताम्बर आर्यिकानो मार्ग योग्य देखाताथी तेनी पसदगी आपी हती । पण आपना बोधे मने दिगम्बर मार्गनु सत्यार्थपणुं जणाताथी हवे मारे दिगम्बर-मार्गनो अने तेना बोधक एवा आप सत्पुरुषनो आश्रय लेवो एज मने इष्टरूप जणायु छे । आवा प्रकारना मारा विचारथी अजाण माता पिताए हाल तुरतमा अमुक जग्याए मारा लग्न करवानी पत्र लखी ते भाईने अहीं बोलावेल छे । आ वात मने विदित थता हुं तेना तात्कालिक छुटकारा माटे आपनी पासे आवी, ते सबधी सलाहनी याचना करु छु । तेनो मने योग्य उत्तर आपशो ?"

उत्तरमा पुज्यश्रीए ते बाईने कह्युं के लग्न न करवानी एटले कायम ब्रह्मचारी रहेवानी ते तारी मक्कमता दृढ करी होय, तो तेना तात्कालिक छुटकारा माटे "हु लग्नगस्त थवा कबूल नथी" ते वात माता-पिताने स्पष्ट जाहेर करवी ते योग्य छे । अने ते साथे हाल तुरतमा ब्रह्मचर्य-प्रतिज्ञा लई लेवी ते पण अति आवश्यकरूप छे । के जेथी गृहक्षेत्रमा आ वात पुनः उपस्थित थवानु कारण रहेतुं नथी । एटले हवे तने आम करवु ते योग्य छे । आवा प्रकारनी पूज्यश्री द्वारा ते बाईने सर्व समाधानी थता तेणे तेनो सहर्ष स्वीकार कर्यो । अने लग्न न करवा सबधीनो पोतानो स्पष्ट निर्णय माता पिताने जाहेर करी तुरत तेणे अमुक कच्छी भाई बहनोनी हाजरीमां ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञानो नियम प्रथम सामान्य प्रकारे पुज्यश्री पासे लीधो । अने त्यार बाद पोताने पोताना जिवननी सर्व तैयारीनु निश्चयात्मकपणु आववा अने पूज्यश्रीने पण तेनी सर्व प्रकारे खात्री थता तेमनी अनुमति अनुसार ते बाईए देशव्रत तरीके अहिंसादि पाच प्रकारनी प्रतिज्ञाओ, केश बंगडी आदि शरीर-शृंगारना परित्यागपूर्वक लीधी । अने ते अनुसार पोते पोतानी आत्मार्थ सन्मुखता कहेता जिनाशय तत्त्वार्थ-बोधना अभ्यासमा उपयोगनी अतर सन्मुखता करी । ए तेनी आत्मिक जीवन-सुधारणा माटे ते जीव विशेष प्रशसवा योग्य छे । अस्तु ।

●

पूज्यश्रीनी तत्त्वशोधक दृष्टीना फलरूपे आज पर्यंत उपस्थित थयेला ग्रथोनु दिग्दर्शन

पूज्यश्रीनी तत्त्वशोधक दृष्टिना फलरूपे आज पर्यंत तेमनी तरफथी जे जे ग्रथो उपस्थित थया छे ते ते अपूर्व आत्मार्थ गुण प्रेरक, शान्तरसोत्पादक अने अत्यंत वैराग्यभावना पोषकरूप होवाथी सर्व कोई आत्मजिज्ञासु जीवोने पोतानी प्राथमिक भूमिकानी शरुआतमा अने क्रमे ते द्वारा सम्यक्त्वादि

गुण विशेष परिणमनमा अने अन्तिम सपूर्ण वीतरागत्व भावनी स्थिरतामा अति उपयोगी छे। तथारुप ग्रंथनो अनुक्रम नीचे प्रमाणे छे:—

१—अष्टात्मक बोध अधिकार सूत्र,
२—चैतन्यात्मक षडअधिकार सूत्र,
३—चैतन्यात्मक पञ्च अधिकार सूत्र
४—बोधी अधिकार सूत्र,
५—वस्तुविज्ञान अधिकार सूत्र।

एम क्रमानुसार लखायेला आ पाच ग्रन्थो पैकी अष्टात्मक बोध अधिकार सूत्र ए नामना ग्रंथनु आ पहेलु प्रकाशन छे। जेनो आत्मजिज्ञासु जीवो पूरो लाभ लेवा उद्यमवंत थाय एज अहीं प्रकाशननो अंतिम उद्देश्य छे।

ज्ञानपञ्चमी
सं० २०१४

विनीत—
वेलजी।

❀ उपोद्घात ❀

卐

अमुक वर्षो उपर कोई एक पुर्वाचार्यकृत एवी आठ दृष्टीनी सज्झाय ए नामनु एक नानकडु पुस्तक सप्राप्त थयु । ते पुस्तकनु आंतरिक दृष्टीए अवलोकन थता, तथारूप बोधनुं मात्र एक सामान्यपणु जणायु, अने ते उपरथी तथारुप लक्षे कोई एक आत्मार्थ प्रेरक एवा नवीन ग्रन्थनु उपस्थितपणु थाय तो ठीक, एम विकल्पनु स्फुरवु थयु, अने क्रमे तेनी तथाप्रकारनी योजना मोटा फेरफार साथे एटले उपरोक्त ग्रन्थ करता कोई एक विशीष्ट एवा परमार्थ लक्षबिंदुने अनुसरीने यथार्थ एवी जैनत्व-दृष्टीए करवामा आवी । तथारूप जैनत्व-दृष्टीए थयेली एवी आ ग्रन्थनी योजना ते तथारुप दृष्टीप्रधान शैलीने अनुसरीने होवाथी तेमा खास सप्रदायीक वाद-विवादनी के मत-भेदनी अपेक्षा रहेती नथी, पण मात्र एक जिनेश्वर देवना सत्यार्थ बोधनी ज अपेक्षा रहे छे, अने ते सत्यार्थ बोधनी आंतरिक सिद्धी पण परस्परना सप्रदायीक शास्त्रोनु संप्रदाय–बुद्धीथी सशोधन करवाथी नहिं, पण अपक्षपात दृष्टीए न्यायनु तोलन एटले पोताना ज्ञानथी तेनो (आ ग्रथमा प्रतिपादन थयेला बोधनो) वास्तविक निर्णय करवाथी ज थई शकवा योग्य छे, अने एज स्वसिद्धीनो सम्यक् उपाय होवाथी सर्व कोई आत्मार्थी जीवे तथारुप लक्षे पोताना वीर्य बळने स्फुरवुं एटले तेनो वास्तविक निर्णय करवामा उजमाळ थवु एज पोताने योग्य अने परम कल्याणकारी छे ।

—ग्रन्थकार ।

धर्मनुं निश्चयात्मक लक्ष

卐

धर्म धर्म सौ कोई कहे, धर्म न जाणे कोय।
धर्म शुद्ध स्वभावमा, समजे सिद्धी होय॥

— ग्रन्थकार।

प्रस्तावना

चैतन्यात्मक वस्तुना मुख्य स्वभाव तरफ दृष्टी करी विचारीए तो मोक्ष ए जीवनो स्वभाव छे, अने स्वभाव होवाथी तेनी सिद्धी पण पोताना शुद्ध स्वभावने अवलंबवाथीज थाय छे। आम वस्तु-स्थिति होवा छता, आजे जैन नामथी ओलखाता जीवो तथारुप बोधना अंतर्मुख चिंतनना अभावे तथारुप मार्गना वास्तविक मर्मने भुली, एकांत पर-लक्षे वस्तु स्वभावनी मुढता अने विमुखतापूर्वक चरणानुयोगनी शुभोपयोगरुप एवी योगाश्रीत बाह्य सेवनाने गुणधर्मना अस्तित्वरुप के मोक्षमार्गरुप कल्पी, तेने उपादेय बुद्धीपुर्वक सेवी रह्या छे, अने ते द्वारा मिथ्यात्वादि भावोने विशेष दृढ करी पराश्रितानी जंजीरने भावसंसारनी वर्द्धमानतापुर्वक पोषी रह्या छे, तेवा जीवोने पोतानी मुळ बीज-भुत भुलनु सम्यक भान थवा अर्थे, अने ते द्वारा एटले तथारुप भुलना अभावपुर्वक पोताना वस्तु-स्वभावने अवलंबीत थई सम्यक्त्वादि गुणविशेष परिणमननी अंतर स्थिरतापुर्वक, यथार्थ एवा भाव-मोक्ष-मार्गने, अने तेनी पुर्णतारुप सिद्धीने पामवा अर्थे आ ग्रन्थना विषे चैतन्यात्मक बोधनी पृथक पृथक एवी आठ अवस्थाओ उपस्थित करी तेनु गाथारुपे गुथन करवामा आव्यु छे, अने ते द्वारा बाह्यांतर सर्व भावनात्मक क्रियानुं भेदाभेद दृष्टीए भान करावी सम्यकज्ञान दर्शनादिरुप एवा भाव-मोक्षमार्गनु वास्तविक स्वरुप समजाव्यु छे, एटले सर्व कोई स्वरुपसाधक जीवने पोतानी आत्मीक भावनमा आदिथी अंत पर्यंत आ ग्रंथ एक सरखो उपयोगी थई पडे ए सहज अने स्वभावीक छे, अने एज लेखकनो मुळ हेतु छे।

— ग्रन्थकार।

❀ विषय-सूची ❀

पहेली बोध अवस्था

बीजी बोध अवस्था

त्रीजी बोध अवस्था

चोथी बोध अवस्था

○

पंचम बोध अवस्था

★

छट्ठी बोध अवस्था

*

सप्तम बोध अवस्था

*

अष्टम बोध अवस्था

○

(उपसहार)

समर्पण

शुद्धात्म पद श्री मेरना, सदा सु निग्रय मार्ग में ।
वह सु पथी सत्पुरुषको, आज यह अर्पु ग्रंथ मे ॥

卐

परमपूज्य आत्मार्थी सत्पुरुष श्री कानजी स्वामिनी सेवामां–

आप प्रभु ! शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मना, के तेना सामान्य विशेषात्मक बोधना
अत्यत गुढ अने सुक्ष्म रहस्यार्थ भानतु पुर्वापर अविरोध दृष्टीए स्व-लक्षनी
अती उज्ज्वळ जागृतिपुर्वक श्रोताजनोने अमृतसिंचन करी, अने ते
द्वारा अनेकांतना वास्तविक स्वरुपनुं भान करावी, जीवना निज
उपयोगनी विपरितक रुचीनुं वलण मात्र एक सम्यक् एकांत
एवा स्वभाव प्रत्ये ढळे, ए मुळ उद्देशनी विजयताना
सम्यक् लक्षपुर्वक वीतराग विज्ञान भावरुप एवा
शुद्ध आत्मधर्मनी प्रभावना करी रह्या छो, ते
आपनी परम गुणातीशयरुप एवी निर्ग्रंथ
मार्गदर्शक शैलीने अने स्वभावसन्मुखता-
रुप लक्षने सहज अतर्मुख लक्षे
वियोंल्लासपुर्वक विचारी आ लघु
पुस्तक अत्यत भक्तिभावथी
आपना कर कमळमां
अर्पण करु छुं ।

सेवक—
ध्यानविजय ।

वस्तु-विज्ञान अंतर्मुख

(श्रेणी)

वस्तु स्वभाव धर्मनो, वास्तविक निर्णय जे करे।
सर्वज्ञ सत्तानो त्या निर्णय, होय अविरोध अतरे ॥ १ ॥
स्वतत्ररुप स्वभावने, अवलबी वस्तु मात्रनी।
क्रमवद्ध अवस्था जे थती, होय ज्ञानमां ते पात्रनी ॥ २ ॥
ते दृष्टीए जैनधर्मनु, महत्व जाणी अतरे।
भक्ति अनन्य भावथी, ते बोधने अनुसरे ॥ ३ ॥
अनेकांतनु स्वरुप ते, जाणी स्व-पर विज्ञानथी।
शुद्धने अवलबी ते सदा, वर्ते स्वरुप भानथी ॥ ४ ॥
परस्पर सबध विशेषरुप, आ बोध पच प्रकारथी।
वर्ती रह्यो सु ज्ञानीने, सत श्रुतना अनुसारथी ॥ ५ ॥
निग्रथ दशानी सेवना, क्रमे बाह्यातर ते करे।
योग ने उपयोगथी, सदा अप्रमत विचरे ॥ ६ ॥
शुद्ध पारिणामीक भावने, अवलबी ते अहिं अंतरे।
अखड ध्रुव स्वभावनु, स्वरुप ध्यान ते करे ॥ ७ ॥
पर्याय लक्षथी क्रमे, औदासीन थई ते अतरे।
ज्ञानादि शुद्ध स्वभावमां, अप्रतिहत भावे ते ठरे ॥ ८ ॥
क्रमवद्ध विशुद्धी अंतरे, प्रगटी त्यां शुद्ध स्वभावथी।
पामे केवल्य स्वरुपने, थई पुर्णरुप पर्यायथी ॥ ९ ॥
सम्यकत्वादि जे जे दशा, विचारीए विशेषथी।
उपलब्धरुप ते क्रमे, थाय स्वरुप प्रवेशथी ॥१०॥

जे जे दशा विशेषनो, होय निर्णय सम्यकज्ञानथी ।
उपलब्ध थाय ते क्रमे, स्वरुपना सु ध्यानथी ॥११॥
ते ध्यान दशा विशेषने, अवलंबे जे जे अतरे ।
ते ते स्वरुप पुर्णता, स्व पदमा ठरी करे ॥१२॥
ज्ञानादि शुद्ध स्वभावमां, अखड ज्यां स्थिरतापणु ।
पुर्ण त्या आत्मज्ञपणुं, ते होय त्यां सर्वज्ञपणु ॥१३॥
क्रमबद्ध थती जीवाजीवनी, अनादि अनत पर्यायनु ।
प्रत्यक्ष ज्ञान ज्यां रहु, त्यां कहीए सर्वज्ञपणु ॥१४॥
ते प्रभु अरिहंत पदे, आयु पर्यंत रही भव्य जीवने ।
ऊंकार ध्वनि उपदेशथी, वस्तुधर्मना प्ररुपक बने ॥१५॥
अंतिम अयोगी पदने, स्पर्शी सिद्धालयनां विषे ।
उर्ध्व गमन करी प्रभु, त्यां सिद्ध पदे सदा वसे ॥१६॥
ते पुर्ण स्व पद प्राप्तीनु, क्युं सु ध्यान अतरे ।
अप्रतिहत भावे भावना, करी ते न हवे फरे ॥१७॥
कारण परमात्मानी करे, सन्मुखता जे अतरे ।
कार्य परमात्म पदनी, स्व सिद्धी ते नियमा करे ॥१८॥
पुर्णतानी भावना, पुर्णमां ठरी करे ।
पुर्णता पामे खरे, एम ध्यानी उच्चरे ॥१९॥
ते पुर्ण स्व पद पामीने, सिद्ध पदे स्थिरता करी ।
ते सर्व सिद्ध स्वरुपने, वरु वदना फरी फरी ॥२०॥

卐

श्री सदगुरु ने वंदना, करी अर्ज करु हु आज।
अष्ट अवस्था बोधनी, मने समजावो गुरुराज॥
ते बोधनु अतरम्वरुप शु, शु साधन मुख्य त्यां पुछु हु।
अनुक्रमे बोधो ते नाथ, अष्ट अवस्था नो परमार्थ॥

अहि कृपा करी भगवत – १

अन्वयार्थ—अहि प्रारभमा शीष्य श्री सद्गुरु प्रत्ये योग्य वंदनादि करी प्रार्थना करे छे के हे गुरुराज मने चैतन्यात्मक बोधनी अष्टात्मक एवी जे अवस्था ते कृपा करी समजावो, अने ते बोधनु अतर स्वरुप शु ? कहेता केवा प्रकारनु होय छे, अने त्यां शु साधन मुख्यपणे वर्ततु होय छे ते पण हु आपने पुछु छु, ते अनुक्रमे अष्टात्मक एवी आ बोध अवस्था नो परमार्थ हे भगवंत मने उपदेश आपी अहि ते कृपा करी समजावो ।

विशेपार्थ—जेना आत्म भावना विषे आत्मार्थ संबधी जिज्ञासा अशे पण सत्यार्थरुप उत्पन्न थई छे, अने ते सत्यार्थरुप जिज्ञासा ने अनुयायी थयेलु एवुं निर्यात्मक रुचीनु वलण जेनुं अंशे पण सत्यार्थरुप बोधनी सन्मुखताने पाम्यु छे, ते तथारुप लक्षे निज उपादान शक्तिनी अतरंग सन्मुखतापुर्वक वस्तुना परमार्थ बोधने समजवा योग्य एवी पोतानी परमार्थ योग्यता उत्पन्न करी तथारुप बोध परमार्थने समजावा योग्य एवा तेना अनुकूल निमित्तनी आश्रय भक्तिमां तेनो वास्तविक प्रतितीपुर्वक योजाय छे, अने त्यां विनयादि भावोनी प्रधानतापुर्वक क्रमे क्रमे तथारुप बोध विशेषनु पोताना विषे सन्मुखवर्ती परिणमन थवारुप एवी परमार्थ योग्यतानु वर्द्धमानपणुं करी ते द्वारा ते तथारुप बोधना सन्मुखवर्ती परिणमनने पामे छे ।

आ उपरथी एम समजवा योग्य छे के ज्यां अशे पण सत्यार्थरुप एवी आत्म जिज्ञासा होय छे, त्यां वस्तुना परमार्थ बोधने समजवा योग्य एवी परमार्थ योग्यता पण तथारुप जिज्ञासा ना बळे अवश्य उत्पन्न थाय छे, एटले प्रथम जीने आत्मार्थ संबधी सत्यार्थरुप जिज्ञासा उत्पन्न करवी एज जीवनी स्व सिद्धीना हेतुरुप एवी पोतानी प्राथमीक भुमीका छे, अने स्व सिद्धीनो सर्व आधार पण तेने ज अवलबीने रहेलो छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे । हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

प्रत्यक्ष एवा ते सदगुरु ना योगे पोतानुं आत्महित चिंतवे छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेपार्थ—जीवना अतर परिणामना विषे आत्मार्थ हेतुभुत बोधनु अल्पांशे पण सत्यार्थरूप परिणमन थवुं तेने बोधनी पहेली अवस्थाना नामथी सबोधनामा आवे छे । तथा प्रकारनी बोध परिणमनरुप पहेली अवस्था जे कोई आत्म जिज्ञासु जीवने कोई सत्सगना समीपवर्ती योगे प्रगटे छे, ते तृणना अग्नि समान एटले जेम तृणरुप बारीक घासनी अग्नि अल्प काळ टकी शके तेवी कमजोर होय छे, तेम ते बोधनी मंदता के अल्पता होय छे, तो पण ते विचारनी अतर सन्मुखतापुर्वक अतर्गत थयेलो होवाथी ते अल्पांशे पण कार्य साधक थई ते द्वारा पोताने अल्पांशे पण वास्तविक एवो तत्व भववी मदुविवेक प्रगटावे छे, के जे सद्विवेकना बळे पोताने सुदेवादि त्रयात्मक तत्वोनु सत्यार्थरुप भान स्फुरायमान थई ते द्वारा पोताना अंतर परिणामना विषे सर्व प्रकारना गृहीतमिथ्यात्व जन्य एवा त्रयात्मक शुद्धतारुप दोषोनु सर्व प्रकारे विलयपणु थई जाय छे, अने तथा प्रकारनी अल्पांशे पण निर्मल अवस्था उपलब्धरुप थता, प्रत्यक्ष एवा ते सदगुरुना योगे एटले तेमनी आश्रय भक्तिमा रहीने ते पोतानु आत्महित चिंतवे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

सुदेवादिनी प्रतितीने, अहि कहीए ओघ प्रतीत ।
ग्रंथी भेद विना अहि, होय अतर एम खचीत ॥
तेथी प्रथम गुणस्थाने स्थित, थई स्व परने विचारे नित्य ।
गर्भीत शुद्धता तेथी आंय, थाय वृद्धीगत अतर मांय ॥५॥

अन्वयार्थ—अहिं ते साधक जीवने थयेली एवी ते सुदेवादि प्रतितीने ओघ कहेता सामान्यरुप प्रतिती कहेवामा आवे छे, अने ग्रंथी भेद विना एम अहिं खचीत करीने होय छे । तेथी ते साधक प्रथम गुणस्थानके स्थित थई त्या नित्य स्व-पर स्वरुपने विचारे छे, अने तेथी अहिं अतरना विषे गर्भीत शुद्धतानुं क्रमे करी वर्द्धमानपणु थतु जाय छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेपार्थ—जे कोई साधक जीवने निश्चय सम्यग्दर्शन थवाना पुर्वे तयारुप स्व कार्यनी सिद्धीमा कारणत्वनो उपचार थई शकवा योग्य एवा सुदेवादिनी सामान्य रुप एवी स्वरूप प्रतिती

विशेषार्थ—बोध अने ज्ञान ए एकार्थी वचन होवाथी ते उभयनु एकज स्वरुप छे, अने तेम होवाथी चैतन्यात्मक बोधनी जे जे अवस्थाविशेषने आ जीव अवलंबीत थाय छे, एटले सत्यार्थे बोधने आत्म परिणामी करे छे, ते ते बोध स्वरुप अवस्थाने ज्ञान स्वरुप अवस्थाना नामथी संबोधवामा आवे छे। तथा प्रकारनी बोध विशेष अवस्थाना आ सुत्रना विषे एकंदर आठ प्रकार उपस्थित करवामा आव्या छे, तेमा आदिना चार गृहीत मिथ्यात्वना अभावरुप छे, अने अतना चार सर्वथा सम्यकरुप छे। ते आठ प्रकारनी बोध विशेष अवस्थानी उपलब्धीनो सर्व आधार मात्र एक जीवना ज्ञान मुख्य एवा पोताना अतर साधन पर ज रहेलो छे, अने ते जीवना निज परिणामरुप होवाथी आदिथी अत पर्यंतनी एवी सर्व साधनात्मक अवस्थाना विषे ते निजात्म रुपे टकीने पण रहे छे, अने तेथी उपरोक्त सुत्रना विषे तेनु प्रधानपणुं दर्शाववामा आव्यु छे।

आ उपरथी समजाशे के जीवना ज्ञान मुख्य एवा ते पोताना अंतर साधन ना बळे आत्मार्थ हेतुभुत पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे प्रगटेली के प्रगट थती, एवी जे चैतन्यात्मक बोध विशेष अवस्था तेने ज ज्ञान विशेष अवस्थाना नामथी संबोधवामा आवे छे, अने तेथी बोध अने ज्ञान एकार्थी वचनरुप होवाथी उपरोक्त सुत्रमा तेनु ते अनुसार प्रतिपादन करवामा आव्यु छे, अने ते साथे तथारुप ज्ञानने, ज्ञानस्वरुपी एवा जीवनु प्रधानरुप एवु पोतानु अतर साधन होवानुं दर्शावी, आत्मार्थी जीवने तथा प्रकारनो सन्मुख लक्ष कराव्यो छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

पहेली अवस्थाना विषे, बोध तृणना अग्नि समान।
त्या प्रगटी अश विवेकनो, स्फुरे देवादि त्रयनुं सुभान ॥
सत्सग योगे तेने आंय, विचारतां ते अतर मांय।
तेथी ते योगे स्व हित, चिंतवे टाळी सर्व ग्रहीत ॥४॥

अन्वयार्थ—पहेली अवस्थाना विषे बोध तृणना अग्नि समान एटले जेम तृणरुप बारीक घासनी अग्नि अल्प काळ टकी शके तेवी कमजोर होय छे, तेम ते बोधनी मदता के अल्पता होय छे, तो पण तथारुप बोधनु परिणमन कोई सत्संग एटले प्रत्यक्ष सदगुरुना योगे विचारनो अंतर सन्मुखतापुर्वक यथार्थरुप थयेलु होवाथी ते वडे जीवने अल्पांशे पण सदविवेकनु प्रगटपणु थई ते द्वारा पोताने देवादि त्रयात्मक तत्वोनु साचु भान स्फुरे छे, अने तेथी ते सर्व प्रकारना गृहीत मिथ्यात्व ने टाळी

गृहीतागृहीत मिथ्यात्वमां, गृहीत मिथ्यात्व नुतन जाण ।
अगृहीत- अनादि नुं, जीव साथे रह्यु एक स्थान ॥
गृहीतमां त्रण मुढता जाण, अगृहीतमां अतत्व श्रद्धान ।
तेनो समजावुं विशेषार्थ, देवादि त्रयनुं पण ते साथ ॥७॥

अन्वयार्थ—गृहीतागृहीत एवा ते उभय मिथ्यात्वमा- गृहीत मिथ्यात्व ए जीवनी विपर्यय भावरूप एवी नुतन भुलथी नवीन उत्पन्न थाय छे, अने तेमां मुख्यत्वे करी त्रयात्मक मुढतानो समावेश थाय छे, अने अगृहीत मिथ्यात्व ए जीवनी साथे अनादि काळथी एक क्षेत्रावगाहरुप सबध विशेषपणे वर्ती रह्युं छे, अने तेमा मुख्यत्वे करी अतत्व श्रद्धाननो समावेश थाय छे, एम तु जाण। ते बने प्रकारना मिथ्यात्वनो विशेष बोध अने ते साथे देवादि त्रयनुं स्वरप पण अहिं तने समजावुं छुं, ते हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—गृहीत अने अगृहीत एवा मिथ्यात्वना मुख्यत्वे करी बे प्रकार छे, ते उभयनुं लक्षण भेदे स्वरप निचे प्रमाणे छे।

गृहीत मिथ्यात्व

जन्मथी वारसामा मळेली अने समर्गथी, उपदेशथी, के शास्त्राभ्यासना शीक्षणथी अतो दृढ थई गाढ सस्कार रुपे टसेली एवी मताग्रह के लोकाग्रह भावरप अनेक प्रकारनी मिथ्यात्वजन्य धर्म सबधी मान्यताओने हठाग्रह भावे वळगी रहेवु ते।

अगृहीत मिथ्यात्व

कोई पण प्रकारना उपदेश के शास्त्राभ्यासना शीक्षण विना, जीवनुं अनादि काळथी पर द्रव्य अने पर निमित्त जन्य भावोमा एकत्वबुद्धीपणु अने परनी क्रिया हुं करी शकु एवी मिथ्या मान्यतापणु दृढ सस्कार रुपे वर्ती रह्यु छे ते ।

आ प्रमाणे बने प्रकारना मिथ्यात्वनुं स्वरप छे। ते उपरथी तेनी समालोचना करता समजाशे के ज्या ज्या आ जीव नवीन मसर्गमा जन्मातीत संबध विशेषने लईने योजाय छे, त्या त्या ते तथा प्रकारनी सस्कृतिने पोतापणानी बुद्धीथी अवलबी ते द्वारा कुदेवादि सेवनारुप के सुदेवादिनी अन्यथा प्रतितीरुप एवी अनेक प्रकारनी त्रयात्मक मुढताना पोषकरुप विपर्यात्मक मान्यताओने ग्रहण करी एक नुतन भुलने बद्ध परिणामी करे छे, तेने गृहीत मिथ्यात्वना नामथी, अने अनादि काळ थी

थाय छे, तेने ओघ प्रतिती कहेवामा आवे छे । तथा प्रकारनी प्रतिती थता, त्या गृहीत मिथ्यात्वनुं अभावपणु थई जाय छे, पण सुक्ष्म ग्रंथीभेदना अभावे त्यां अगृहीत मिथ्यात्वनी विद्यमानता अवश्य टकेली होय छे । तेथी अहिं ते साधक जीव तथा प्रकारनी दोष निवृत्ति अर्थे तयारुप एवा ते प्रथम गुणस्थानकना विषे स्थित थई त्या स्व–पर स्वरुपनी भेद विचारणामा नित्य उपयोगने प्रेरे छे, जेम के चैतन्यपणुं ए आत्मानु मुख्य लक्षण छे, अने तेना अभावरुप लक्षण ते जडनुं छे, एम बुद्धीपुर्वक आगम अनुमानादि प्रमाणने अनुसरी स्व–पर द्रव्यनो विचार करे छे, अने तेथी अहिं अंतरना विषे गर्भीत शुद्धतानु, क्रमे करी वर्द्धमानपणुं पण थतु जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये मिथ्यात्वना उभय भेद संबंधी अने सुदेवादिना स्वरुप संबंधी बोधनी याचना करे छे ।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पुछे हे नाथ ।
गृहीतागृहीत मिथ्यात्वनो, मने समजावो परमार्थ ॥
ते साथे देवादि त्रयनु शु, वास्तविक स्वरुप पुछु हु ।
गुरुजी कहे समजावु ते, सुण तु सन्मुख भावे ए ॥६॥

अन्वयार्थ— अहिं शीष्य गुरुनी प्रत्ये तेमने वंदन करी पुछे छे, के हे नाथ ! गृहीतागृहीत मिथ्यात्व कोने कहे छे, ते मने लक्षण भेदे कृपा करी समजावो, अने ते साथे सुदेवादि नुं वास्तविक स्वरुप शु छे, ते पण हे भगवत हु आपने पुछु छु । अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के ते हुं तने समजावु छु, ते हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने सन्मुख भावे श्रवण कर ।

विशेषार्थ—प्राथमीक एवी आ बोध अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवनु बोधविशेष परिणमन अति अल्परुप होवा छता तेनी आत्मार्थ जिज्ञासा अति उग्ररुप छे, एम तेनी सद् गुरु प्रत्ये थयेली निज उपादान शक्तिनी सन्मुखता परथी समजाय छे, अने ते उपरथी एम विचारवा योग्य छे के सतमा सतरुप एवा प्रत्यक्ष सद्गुरुना योग विना, जेम चैतन्यात्मक बोधनु वास्तविक एवु सन्मुखवर्ती परिणमन थतु नथी, तेम ते सप्राप्त योगमा निज उपादान शक्ति तेमना सन्मुख प्रेर्या विना, पण तथारुप बोधनुं सन्मुखवर्ती परिणमन थतु नथी । मतलब के निमित उपादाननी अनुकूल मयीनु योग्य मीलन थयेज जीव स्वसिद्धोनी विजयताने पामे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोधविशेषथी समजवा योग्य छे । हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

सत् शास्त्र

निश्चयथी प्रत्येक प्रत्येक आत्मानी पृथक्तापुर्वक स्वाधिनतानुं अने जीवादी द्रव्य गुण पर्यायनी शुद्धतापुर्वक पुर्णतानु जे शास्त्र ना विषे वास्तविक निरुपण वर्ततु होय ते, अने व्यवहारथी जीवादि तत्वना पृथक पृथक बोधनु अने चारे अनुयोगनी कथन शैलीनुं पुर्वापर अविरोध निरुपण जे शास्त्रना विषे होय ते ।

सत् धर्म

निश्चयथी शुद्धात्म स्वरूपना अस्खलित भान सहीत ज्ञायकरूप शुद्ध स्वभावे स्थिरता पर द्रव्य अने पर, निमित जन्य भावोना भेदविज्ञानपुर्वक करवी ते, अने व्यवहारथी तथारूप अनेकान्त दृष्टीना प्रधान लक्षे पर द्रव्य अने पर निमित जन्य भावोनु सम्यक प्रकारे ज्ञान करवु ते ।

आ प्रमाणे निश्चय व्यवहारनी संधीपुर्वक सुदेवादि त्रयात्मक तत्वोनु अने सत धर्मनु स्वरूप छे। तेनी ओघ प्रतिती साथे स्थुल ग्रंथी भेदनो अविनाभाव होवाथी त्या गृहीत मिथ्यात्वनु अभावपणु थई गर्भीत शुद्धता मिथ्यादर्शनना मंदोदय पुर्वक प्रगट छे, अने तथारूप तत्वोनी सम्यक प्रतिती साथे सुक्ष्म ग्रंथी भेदनो अविनाभाव होवाथी त्या अगृहीत मिथ्यात्वनु अभावपणुं थई प्रगट शुद्धता मिथ्यादर्शननी उदय निवृतिपुर्वक प्रगटे छे, ए स्वभावीक नियम छे ।

उपरोक्त स्थुल अने सुक्ष्म एवी ए बने ग्रंथी भेद सम्बन्धी विचारीए तो स्थुल ग्रंथी भेद थया बाद ते सुक्ष्म ग्रंथी भेदनु कारण तथा प्रकारना आत्मार्थे हेतुभुत बोधनी सन्मुखतावती होवाथी तेम थई शकवा योग्य छे, वा तथा प्रकारनी देशना लब्धीथी विशुधीत जीवने तीव्र एवी आत्म जिज्ञासा ना बले तथा प्रकारनी तत्व सन्मुख विचारणाथी तेम बनवा योग्य छे, ते विना तेम बनवु के परपरा नियमरूप कारण थवु ते प्राए असंभवीत छे ।

उपरोक्त स्थुल अने सुक्ष्म एवी ए बने ग्रंथी भेद साथे अविनाभावी सबध रूपे रहेली अनुक्रमे ओघ अने सम्यक एवी ए बने प्रतिती सबधी विचारीए तो पर्याय जन्य भेद अवस्थानी गौणतापुर्वक सिद्ध सम शुद्ध अने पुर्ण एवु स्वरूप संवेदन ज्या सुधी पोताने भास्यमान न थाय, अने ते द्वारा शुद्धोपलब्धीरूप एवी उपयोगात्मक अनुभूती पोताने न प्रगटे त्या सुधी तेने ओघ प्रतिती कहेवा योग्य छे । तेनी विद्यमानता उपादान अपेक्षाए स्व तरफनी विमुखताने लईने ज छे, अने निमितनी अपेक्षाए मिथ्यात्व जन्य उदयिक भाव होवानु छे, ते स्व तरफना लक्षे निवृत थतां, ओघ सम्यकरूप थई जाय छे ।

अबोध एवा आ जीवनी विपर्यात्मक मुढतायी तत्वमा अतत्व श्रद्धानरुप अने अतत्वमां तत्व श्रद्धान-रुप अने ते अनुसार पर द्रव्यथी पोताने अने पोताथी पर द्रव्यने हानी लाभनुं, सुख-दुःखनुं, के राग द्वेषनु कारण मानवारुप एवुं विपर्यात्मकपणु पोताना विषे एक क्षेत्रावगाहरुप संबध विशेषपणे रही रह्यु छे, तेने अगृहीतना नामथी, एम बने प्रकारना मिथ्यात्वने भिन्न स्वरुपे ओळखवामा आवे छे।

उपरोक्त बंने प्रकारना मिथ्यात्वमा प्रथमना गृहीत मिथ्यात्वनु मुख्यपणुं छे, कारण के ज्या गृहीत मिथ्यात्व होय, त्यां अगृहीत मिथ्यात्व अवश्य होय, अने ज्या अगृहीत मिथ्यात्व होय त्या गृहीत मिथ्यात्वनी भजना एटले होय के न पण होय, अने तेथी प्रथम भेदरुप एवु जे गृहीत मिथ्यात्व तेनु ज्या सुधी अभावपणु न थाय एटले सत्यासत्य देव गुर्वादिक स्वरुपना वास्तविक निर्णयपुर्वक त्रयात्मक मुढताना पोषकरुप एवी ते विपर्यय भावरुप मान्यताओनो जीव परित्याग न करे त्या सुधी बीजा भेदरुप एवा अग्रहीत मिथ्यात्वनु अभावपणुं कोई पण प्रकारे थई शकवा योग्य नथी, एटले प्रथम जीवे गृहीत मिथ्यात्वनी निवृत्ति अर्थे तेना वास्तविक बोध परमार्थना परिचयमा योजावु, ते योग्य छे, के जेथी क्रमे करी ते उभय भेदरुप मिथ्यात्वना अभावनो के एक साथे बनेनी निवृत्तिनो जीवने सुअवसर सप्राप्त थाय। हवे अहिं तथारुप लक्षे सुदेवादि त्रयना वास्तविक स्वरुपनु अने ते साथे धर्मना परमार्थनु निश्चय व्यवहारनी मर्यादापुर्वक वास्तविक एवी जैनत्व दृष्टीए निरुपण करवामा आवे छे।

सत् देव

निश्चयथी शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावनु पुर्ण आत्मज्ञरुप अखड एवु ज्ञायकपणु वर्ती रह्युं होय ते, अने व्यवहारथी तथारुप पुर्ण आत्मज्ञपुर्वक पुर्ण एवुं सर्वज्ञपणु स्व-पर प्रकाशकरुप एवी सपुर्ण ज्ञानस्वभावनी एक समयनी पर्यायमा होवा साथे घाती कर्माभावोथी अने अष्टादश दोषोथी जे सर्व प्रकारे रहीत एवा अनत चतुष्टयमय दर्शन ज्ञान उपयोगना युगपत धारक अने ते साथे चोत्रीस अतिशयोथी जे सर्व प्रकारे अलकृत होय ते।

सत् गुरु

निश्चयथी शुद्धात्म स्वरुपना अस्खलित भान सहीत शुद्धोपयोगरुप एवी बाह्यातर निर्ग्रंथ दशा पुर्वकनी भावनामा उपयोगनु सन्मुखवर्तीपणु होय ते, अने व्यवहारथी शुभोपयोगरुप एवा पच महाव्रतादि अट्ठावीस मुळ गुणना निरतिचार पालनमां योग उपयोगथी अप्रमत्तपणे रही जैन दिगम्बर मुनीपणे विचरता होय ते।

सत् शास्त्र

निश्चयथी प्रत्येक प्रत्येक आत्मानी पृथक्तापुर्वक स्वाधिनतानु अने त्रीकाली द्रव्य गुण पर्यायनी शुद्धतापुर्वक पुर्णतानु जे शास्त्र ना विषे वास्तविक निरुपण वर्ततु होय ते, अने व्यवहारथी जीवादि तत्वना पृथक पृथक बोधनु अने चारे अनुयोगनी कथन शैलीनु पुर्वापर अविरोध निरुपण जे शास्त्रना विषे होय ते ।

सत् धर्म

निश्चयथी शुद्धात्म स्वरुपना अस्खलित भान सहीत ज्ञायकरुप शुद्ध स्वभावे स्थिरता पर द्रव्य अने पर निमित जन्य भावोना भेदविज्ञानपुर्वक करवी ते, अने व्यवहारथी तथारुप अनेकांत दृष्टीना प्रधान लक्षे पर द्रव्य अने पर निमित जन्य भावोनु सम्यक प्रकारे ज्ञान करवु ते ।

आ प्रमाणे निश्चय व्यवहारनी सधीपुर्वक सुदेवादि रत्नात्मक तत्वोनु अने सत धर्मनु स्वरुप छे। तेनी बोध प्रतिती साथे स्थुल ग्रंथी भेदनो अविनाभाव होवाथी त्या गृहीत मिथ्यात्वनु अभावपणु थई गर्भीत शुद्धता मिथ्यादर्शनना मंदोदय पुर्वक प्रगटे छे, अने तथारुप तत्वोनी सम्यक प्रतिती साथे सुक्ष्म ग्रंथी भेदनो अविनाभाव होवाथी त्या अगृहीत मिथ्यात्वनु अभावपणु थई प्रगट शुद्धता मिथ्यादर्शननी उदय निवृतिपुर्वक प्रगटे छे, ए स्वभावीक नियम छे ।

उपरोक्त स्थुल अने सुक्ष्म एवी ए बंने ग्रंथी भेद सम्बन्धी विचारीए तो स्थुल ग्रंथी भेद थया बाद ते सुक्ष्म ग्रंथी भेदनु कारण तथा प्रकारना आत्मार्थ हेतुभुत बोधनी सन्मुखवर्ती मेलनाथी तेम थई शकवा योग्य छे, वा तथा प्रकारनी देशना लब्धीथी विमुपीत जीवने तीव्र एवी आत्म जिज्ञासा ना बळे तथा प्रकारनी तत्व सन्मुख विचारणाथी तेम बनवा योग्य छे, ते विना तेम बनवु के परपरा नियमरुप कारण थवु ते प्राए असंभवीत छे ।

उपरोक्त स्थुल अने सुक्ष्म एवी ए बने ग्रंथी भेद साथे अविनाभावी सबध रुपे रहेली अनुक्रमे ओघ अने सम्यक एवी ए बने प्रतिती सबधी विचारीए तो पर्याय जन्य भेद अवस्थानी गौणतापुर्वक सिद्ध सम शुद्ध अने पुर्ण एवु स्वरुप संवेदन ज्यां सुधी पोताने भास्यमान न थाय, अने ते द्वारा शुद्धोपलब्धीरुप एवी उपयोगात्मक अनुभूती पोताने न प्रगटे त्या सुधी तेने ओघ प्रतिती कहेवा योग्य छे। तेनी विद्यमानता उपदान अपेक्षाए स्व तरफनी विमुखताने लईने ज छे, अने निमितनी अपेक्षाए मिथ्यात्व जन्य उदयिक भाव होवानुं छे, ते स्व तरफना लक्षे निवृत थता, ओघ सम्यकरुप थई जाय छे ।

आ प्रमाणे जे साधक जीव वस्तुना परमार्थने विचारी आत्मार्थ हेतुभुत बोध दाताना सन्मुखवर्ती योगने अवलंबीत थशे, ते क्रमे करी उपरोक्त बने प्रकार ना मिथ्यात्वनु अभावपणु करी शुद्ध सम्यग्दर्शनने पामशे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये सम्यक्त्व विना थयेलो मुनी–लींगनो स्वीकार त्या बोध परिणमनरुप अवस्था, अने गुणस्थान कयु होय, ते सबंधी प्रश्न करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, पुछे प्रश्न करी बहु मान।
सम्यक्त्व वण मुनी लींग ज्यां, त्यां कहिये कयु गुणस्थान॥
ते साथे बोध अवस्था कई, ते पुछुं जिनागम दृष्टीथी अहिं।
गुरु जी कहे सुण तुं ए, ते दृष्टीथी समजावु ते॥८॥

अन्वयार्थ— अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये तेमनु बहुमान लावी प्रश्न करे छे, के हे भगवत! ज्या सम्यग्दर्शन विना मात्र मुनी लींग वर्ततु होय त्या कयुं गुणस्थान कहेवा योग्य छे? अनेते साथे त्या बोध अवस्था कई होय छे? ते हु आपने अहिं जिनागम दृष्टीथी पुछु छु। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने नयरुप दृष्टीथी समजावु छु, ते तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आजे सौ कोई जैनावलंबी जीवोनी दृष्टी पोत पोताना मतार्थ भावने अवलंबीत होवाथी तेओ पोत पोताना सप्रदायना विषे बाह्य त्यागना चिन्ह रुपे दृष्टीगोचर थता मुख्य एवा ते वेषने महत्वनु स्थान आपी एटले तथा प्रकारना वेष परिवर्तन साथे गुणस्थाननुं परिवर्तनशीलपणु थतु होवानुं पोतानी मान्यताना स्वीकारी, तेना धारक एवा ते वेषधारी दिक्षीतोने मुनो एवा नामथी सबोधे छे, अने मात्र एक दृष्टी–रागनी प्रबळ्ताना लीधे तेने ज धर्मगुरु तरीके स्वीकारी ते योगे पोताना जीवननी समाप्ती करे छे, ते एक मात्र जीवना अज्ञान भावनी हयातिनु ज सुचन करे छे। अहिं तथारुप विषयने अनुकुल प्रश्न उपरोक्त एवो ते साधक जीव उपस्थित करे छे, ते तेनी तत्वशोधक दृष्टीनु विशीष्ट भान करावे छे, अने ते साथे आत्मार्थ जिज्ञासानु प्रबळपणु होवानु पण सुचन करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

सम्यक्त्व वण मुनी लींग ज्यां, त्यां कहीए प्रथम गुणस्थान।
ते साथे अवस्था बोधनी, चार आदि पैकी एक जाण॥

सन्मुख साधकनी आ वात, कही जिनागम द्रष्टीए भ्रात ।
हवे विमुखता सेवे जे, समजावु तुजने अहि ते ॥९॥

अन्वयार्थ—ज्या सम्यग्दर्शन विना बाह्य मुनी लींग कहेता निग्रथ दशानो स्वीकार करवामा आव्यो होय, त्या ग्रन्थी भेदना अभावे नियमा प्रथम गुणस्थान ज होय, अने ते माथे आदिनी चार बोध अवस्था पैकी कोई पण एक बोध अवस्था अहिं तेने वर्त्तती होय एम तु जाण । आ वात तने हे भ्रात जिनागम द्रष्टीयी सन्मुखवर्ती साधकनी कही । हवे अहिं तथारुप बाह्य लींगने कहेता दिगम्बर निग्रथ दशाने ग्रही जे विमुख भावे वर्ती रह्या छे, ते वात तने समजावु छुं, ते हे शोम्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जिनागम द्रष्टीए विचारीए तो सम्यग्दर्शननी उपलब्धी विना कोई पण साधक जीव मुनीपणानी भावनानो के मुनी दिक्षानो अधिकारी थई शकतो नथी, अने तेना अभावे अप्रमत स्वभाव स्थिरतारुप एवा मुनीपणाना भाव लींगने पण ते स्पर्शी शकतो नथी । मतलब के सम्यग्दर्शननी उपलब्धीपुर्वक चतुर्थ के पंचम गुणस्थाने मुनीपणाना विकल्पनु उपस्थितपणुं थवु तेनुं नाम स्वभाव स्थिरता थवारुप एवी अतरग स्फुरायमान थयेल सद्भावना छे, अने ते अनुसार षष्टमगुणस्थाननो एटले सर्व सग परित्यागरुप एवी बाह्यातर मुनी लींगनी कहेता दिगम्बर निग्रथ दशानी प्राप्ती करी अप्रमत स्वभाव स्थिरतारुप एवा सप्तम गुणस्थाने शुद्धोपयोगनी अतर्मुख सिद्धी वरवी तेनुं नाम मुनीपणानी (भावलींगनी) प्राप्ती थवी ते छे ।

आ उपरथी समजाशे के मोक्ष मार्गनी बाह्यातर साधनामा सम्यग्दर्शननु ज मुख्यपणु छे, एटले तथारुप मार्गनी शरुआत पण सम्यग्दर्शनथी ज थाय छे । ते विना मुनीपणानी भावना के मुनी दिक्षाना विकल्पनु उपस्थितपणुं थवु ते अधाए आरसीनो बोजो उपाडवा जेवुं छे । मतलब के तेवा प्रकारनी दिक्षा कोई पण प्रकारे आत्मार्थ हेतुभुत थती नथी, अने तेथी तेवा साधकनु अस्तित्व सम्यग्दर्शन ना अभावे प्रथम गुणस्थाने ज होय ए सहज अने स्वभावीक छे, अने ते जिनागम द्रष्टीयी सम्मत करवा योग्य छे ।

आम वस्तुस्थिति होवा छता अहिं तेवो कोई आत्मार्थ साधक जीव पोते पोतानी आत्मार्थ जिज्ञासाने अवलबी ते अर्थे ज्ञानादि सम्यक त्रयरूप एवा भाव मोक्ष मार्गनी प्राप्ती के तेनी अतर्मुख सिद्धी अर्थे पोते तथा प्रकारना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमा उजमाळ थयो होय, अने ते अर्थे स्वछद निरोधपणे एटले कोई प्रत्यक्ष सद्गुरुनो आज्ञानुसार सर्व सग परित्यागी थई तेमनी आश्रय भक्तिमा एटले

तथारुप सत्सगनी सन्मुखवर्ती सेवनामा नित्य आत्मार्थे अनुकूलपणे वर्ततो होय, तो तेवा प्रकारना सन्मुखवर्ती साधकने प्रथमनी चार अवस्था पैकी कोई पण एक बोध अवस्था तेने अतरंगना विषे वर्तती होय, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहि तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरूपण करवामा आवे छे।

बाह्य लींग ग्रही दुराग्रहमां, जे वर्ते थई मोहावेश।
ते गुणस्थानक पहेले रही, पोषे विमुख भाव विशेष ॥
तेथी स्व प्रत्ये बेभान, सर्वथा साधक होय जाण।
तेथी बोध अवस्था नौय, आदिनी चार पैकी कोय ॥१०॥

अन्वयार्थ—जे जीव बाह्य मुनी लींगनो स्वीकार करी अनेक प्रकारनी मतार्थ हठीरुप एवा दुराग्रह भावमा मोहावेशपणे वर्ततो होय ते जीव तथारुप विमुखताना लीधे पहेला गुणस्थानना विषे मिथ्यात्वादि भावोने विशेष प्रकारे पोषनारो पण स्वभावीक ज होय छे, अने तेथी ते साधकनुं स्व प्रत्ये सर्वथा बेभानपणु होवाथी प्रथमनी चार बोध अवस्था पैकी एक पण बोध अवस्था अहिं तेने न वर्तती होय, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे जीव बाह्य मुनी लींगनो कहेता दिगम्बर निर्ग्रथ दशानो स्वीकार करी अनेक प्रकारना मतार्थ भावने पोषवारुप, के बाह्य क्रियात्मक भावोना मिथ्याभिनीवेशने दृढ करवा रुप, के त्याग वैरागादि एवा ते बाह्य शुभ साधनोने मोक्षमार्ग, के तेमा धर्मनुं अस्तित्व मानवारुप एवा अनेक प्रकारना दुराग्रह भावमा एकात मोहावेशपणे वर्ततो होय, ते जीव तथारुप विमुखताना लीधे पहेला गुणस्थान ना विषे मिथ्यात्वादि भावोनो विशेष प्रकारे पोषक बने, ए स्वभावीक छे, अने तेथी ते साधकनु स्वभाव सन्मुखताना मार्ग प्रत्ये के ते अर्थे जिवादि तत्वना परमार्थ बोधनी अतरग सन्मुखताना बाह्य निमित कारणरुप एवा सत्सगादि साधन प्रत्ये सर्वथा बेभानपणु पण स्वभावीक ज वर्ती रहेलु होय छे, अने तेम होवाथी प्रथमनी चार बोध अवस्था पैकी एक पण बोध अवस्था एवा ते विमुखवर्ती साधकने वर्तती न होय ए सहज अने स्वभावीक छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरूपण करवामा आवे छे।

दुराग्रह भावे रही, कदी सेवे ते व्यवहार।
तो ते जीव आशातना, करी भमे आ ससार ॥

ते करता उत्तम कहीए ते, बोध अवस्था पहेलीमां जे ।
होय कदी तेनो गृहवास तो पण आत्मार्थी ते खास ॥११॥

अन्वयार्थ—जो रुडी ते साधक जीव तथा प्रकारना दुराग्रह भावे रही बाह्य व्यवहार सेवनारूप प्रवृतिने आदरे तो ते श्री जिननी आशातना करी आ संसारना विषे भव भ्रमणने पामे, ते करता उत्तम तेने ज कहीए के जे पहेली एवी आ बोध अवस्थाना विषे वर्ततो होय, कदाच तेने पुर्व प्रारब्ध योगे गृहवास होय, तो पण ते अवश्य आत्मार्थी छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेपार्थ—जे जीव बाह्य मुनी लींग कहेता दिगम्बर निग्रथ दशानो स्वीकार करी एकात पर लक्षे दुराग्रह भावोमा वर्ते छे, के ते दुराग्रह भावपुर्वक उपदेशादि बाह्य व्यवहार प्रवृत्तिने सेवे छे, ते स्वात्म विराधनानी अतर प्रधानतापुर्वक श्री जिननी पण महा आशातना करे छे। आवा प्रकारना विपर्यय भावे उत्पन्न थयेल एवी आ भुलना फल रुपे ते उत्कृष्ट एवा ससार पर्यटनने पामे छे । आवा प्रकारनु स्व प्रत्येनु सर्व प्रकारे विमुखवर्तीपणु होवाना लीधे ते साधक जीवने प्रथमनी चार बोध अवस्था पैकी एक पण बोध अवस्था होती नथी, अने तेथी तेवा द्रव्य लींग धारी साधु जीवन करता गृहवासमा स्थित एवो जे आ पहेली बोध अवस्थाना विषे वर्ततो जीव तेनु मुख्य एवु आत्मार्थपणु होवाथी तेने उत्तम कहेवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं पहेली एवी आ बोध अवस्थाना विषे उत्पन्न थता एवा जे सम्यग्दर्शनना षट कारणो ते सबधी निरुपण करवामा आवे छे ।

सम्यकत्वनी उपलब्धीमां, दश कारण मुख्यत्वे धार ।
ते पैकी षट कारण अहिं, प्रगटे तेने कहुं ते विचार ॥
पहेलु सत्सग वर्ते मुख्य, बीजु सु विचार अतर्मुख ।
त्रीजु प्रथम चतुष्टय आंय, सु विचारे उपशमे अतर कांय ॥१२॥

अन्वयार्थ—सम्यग्दर्शननी उपलब्धीमा मुख्यत्वे करीने दश कारणो आवश्यक रुप छे, ते पैकी अहिं तेने षट कारणो प्रगटे छे, ते अनुक्रमे तने विचारवा अर्थे कहु छु । पहेलु सत्सग—अपुर्व आत्मार्थप्रेरक एवा कोई प्रत्यक्ष सद्गुरुनो सुयोग सप्राप्त थवो ते । बीजु सुविचार अतर-

श्रेणी–तथारुप सत्संग ना योगे थयेला अपुर्व आत्मार्थ प्रेरक बोध श्रवणथी अंतर सुविचार श्रेणीनुं प्रगटपणु थवुं ते। त्रीजुं प्रथम चतुष्टयनो कंईक उपशम–तथारुप सुविचार श्रेणीना निमितथी प्रथम चतुष्टयरुप एवी पुदगल कर्मरुप शक्ति विशेषनु तेना पोताना कारणे कंईक दबाई जवुं ते, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— आत्मार्थ साधनामा के आत्मार्थ सन्मुख थवामा तेनु मुख्यमा मुख्य मानव बाह्य निमितनी अपेक्षाए मात्र एक सत्संग ज छे, अने तेथी कोई पण कल्याण साधक एवा आत्म-जिज्ञासु जीवनी प्राथमिक भुमीका त्यांथी ज एटले सत्संगथी ज शरु थाय छे। आवा प्रकारनो सत्संग सबंधीनो परम सद्विवेक जे जीवने प्रगटे छे, एटले आत्मार्थ सन्मुख थवामा सत्संगरुपी साधननु अती आवश्यकपणु केवानु तेना भानमा आवे छे। ते जीव आत्मकल्याणना वास्तविक ध्येयनी दृढतापुर्वक अने तथारुप सतसंगना योगनी अत्यत तालावेलीपुर्वक तेनी सम्यक योगे शोध करे छे, अने ते योग संप्राप्त थता, ते तेनी सन्मुखरती उपासनाने सम्यक योगे अवलबे छे अने ते योगे क्रमे करी त्या अपुर्व एवी अतर सुविचार श्रेणीनु उपलब्धपणु थई प्रथम चतुष्टयरुप (अनता नुबधी कषायनु) एवी पुदगल कर्मरुप शक्ति विशेषनु तेना पोताना कारणे कंईक उपशमपणु कहेता मंद रसोदय रुपे दबाई जवु पण थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> चोथु   गर्भीत   शुद्धता, स्फुरे तेने विशेष प्रकार।
> तेथी   प्रगटे   पांचमु, सत्यासत्यनो विवेक सार॥
> छठ्ठु कारण तेथी आंय, प्रगटे तेने अतर मांय।
> स्थुल ग्रंथी भेद तेनु नाम, पामे मतार्थ दृष्टी विराम॥१३॥

अन्वयार्थ—चोथुं गर्भीत शुद्धता–सुविचार श्रेणीना निमितथी प्रथम चतुष्टयनु कंईक उपशमपणु थता जीव अवस्थाना विषे गर्भीत शुद्धतानु स्फुरायमानपणु जीवना पोताना कारणे थवु ते। पाचमु सत्यासत्यनो विवेक–तथारुप गर्भीत शुद्धताना बळे अतरगना विषे सत्यासत्यनो परम सद्विवेक देशना लब्धीपुर्वक प्रगट थवो ते। छठ्ठु स्थुल ग्रथी भेद–तथारुप सद्विवेक ना बळे स्थुल ग्रन्थी भेद एटले नयात्मक शुद्धताना हेतुरुप एवा सर्व गृहीत मिथ्यात्व जन्य रागादि भावनु सर्व प्रकारे विरामपणु थवुं ते। एम अनुक्रमे छ कारणो प्राथमीक एवी आ बोध अवस्थाना विषे प्रगटे छे, ते हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— आत्मार्थ हेतुभुत एवी सुविचार श्रेणीनु के तथा प्रकारना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनु ज्या सुधी जीवने अभावपणुं वर्ते छे, त्या सुधी आत्मार्थ हेतुभुत शुद्धताना निमितभुत आवरणरुप एवा प्रथम चतुष्टयनु अर्थात अनतानुबधी कषायनु उदय रुपे होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे। ज्यारे कोई पात्र जीवने सत्संग योगे थयेली बोध सन्मुखताना बळे अतर सुविचार श्रेणीनुं उपलब्धपणु थाय छे, त्यारे निमितभुत आवरणरुप एवी ते कषायोदय जन्य मलीनतानु अमुक प्रमाण मा तेना पोताना कारणे उपशमपणुं थई जाय छे, अने तेम थवाथी नैमितिक एवा जीव भावना विषे गर्भीत शुद्धतानु स्फुरवु सहज तेना पोताना कारणे थाय छे, तेम थवाथी त्या सत्यासत्यनो परम सद्विवेक देशना लब्धीना अतर अवधारपुर्वक एवा ते सुविवेकी जीवने प्रगटे छे, अने तेम थता त्या सुदेवादि त्रयात्मक सुद्रताना हेतुरुप, के मनार्थ भावनी मलीन वासनाना पोषकरुप एवा गृहीत मिथ्यात्व जन्य रागादि भावनु सर्व प्रकारे विरामपणु थई जाय छे, जेने स्थुल ग्रंथी भेदना नामथी सबोधवामा आवे छे।

आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननी उपलब्धीना निमितभुत एवा पट कारणो उपरोक्त एवा ते साधक जीवने प्रथमनी एवी आ बोध अवस्थाना विषे प्रगटे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध परमार्थथी समजवा योग्य छे। हवे अहि शीष्य गुरु जी प्रत्ये अनतानुबधी कषायना लक्षणादि बोध विशेषनी याचना करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पूछे एम।
शुं लक्षण अनंतानुबधीनुं, ने थाय अनत बंध त्यां केम ॥
त्यां कयु कारण होय विशेष, ते कहो कृपालु दई उपदेश।
गुरु जी कहे ते कहु आंय, शुण थई सन्मुख अतर माय ॥१४॥

अन्वयार्थ—अहि शीष्य गुरु जी प्रत्ये वंदन करी एम पुछे छे के हे भगवत ! अनतानुबधी एवा ते कषायनु शु लक्षण छे ? अने तेनो अनत बंध केवी रीते थाय छे, अर्थात् तेम थवाना हेतुरुप एवु त्या कयु कारण विशेष रुपे एटले मुख्यपणे वर्ततु होय छे ? ते हे कृपाळु मने उपदेश दईने समजावो। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे शीष्य ते हु तने समजावु छु, ते तुं अंतरना विषे सन्मुख थई आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—अनंतानुबधी कषायनो समावेश मुख्यत्वे करी मोहनीयकर्मना बीजा विभागरुप एवा चारित्र मोहीनीय कर्ममा थाय छे। तयारुप कषायनु वास्तविक लक्षण शुं ? अने तेना

श्रेणी–तथारूप सत्संग ना योगे थयेला अपूर्व आत्मार्थ प्रेरक बोध श्रवणथी अंतर सुविचार श्रेणीनु प्रगटपणु थवु ते। बीजु प्रथम चतुष्टयनो कंईक उपशम–तथारूप सुविचार श्रेणीना निमित्तथी प्रथम चतुष्टयरूप एवी पुद्गल कर्मरूप शक्ति विशेषनु तेना पोताना कारणे कंईक दबाई जवु ते, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरूप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— आत्मार्थ साधनामा के आत्मार्थ सन्मुख थवामा तेनुं मुख्यमां मुख्य साधन बाह्य निमित्तनी अपेक्षाए मात्र एक सत्संग ज छे, अने तेथी कोई पण कल्याण साधक एवा आत्म-जिज्ञासु जीवनी प्राथमिक भूमीका त्याथी ज एटले सत्संगथी ज शरु थाय छे। आवा प्रकारनो सत्संग सद्बोधीनो परम सद्विवेक जे जीवने प्रगटे छे, एटले आत्मार्थ सन्मुख थवामा सत्संगरूपी साधननु अती आवश्यकपणु होवानु तेना भानमा आवे छे। ते जीव आत्मकल्याणना वास्तविक ध्येयनी दृढतापुर्वक अने तथारुप सत्संगना योगनी अत्यत तालावेलीपुर्वक तेनी सम्यक योगे शोध करे छे, अने ते योग सप्राप्त थता, ते तेनी सन्मुखवर्ती उपासनाने सम्यक् योगे अवलबे छे अने ते योगे क्रमे करी त्या अपुर्व एवी अतर सुविचार श्रेणीनु उपलब्धपणु थई प्रथम चतुष्टयरुप (अनता नुबधी कषायनु) एवी पुद्गल कर्मरुप शक्ति विशेषनु तेना पोताना कारणे कईक उपशमपणु रहेता मद रसोदय रुपे दबाई जवु पण थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

चोथु गर्भीत शुद्धता, स्फुरे तेने विशेष प्रकार।
तेथी प्रगटे पांचमुं, सत्यासत्यनो विवेक सार॥
छठ्ठु कारण तेथी आंय, प्रगटे तेने अतर मांय।
स्थुल ग्रंथी भेद तेनु नाम, पामे मतार्थ दृष्टी विराम॥१३॥

अन्वयार्थ—चोथुं गर्भीत शुद्धता–सुविचार श्रेणीना निमित्तथी प्रथम चतुष्टयनु कईक उपशमपणु थता जीव अवस्थाना विषे गर्भीत शुद्धतानु स्फुरायमानपणुं जीवना पोताना कारणे थवु ते। पाचमु सत्यासत्यनो विवेक–तथारुप गर्भीत शुद्धताना बळे अतरगना विषे सत्यासत्यनो परम सद्विवेक देशना लब्धीपुर्वक प्रगट थवो ते। छठ्ठ स्थुल ग्रथी भेद–तथारुप सद्विवेक ना बळे स्थुल ग्रन्थी भेद एटले त्रयात्मक मुढताना हेतुरुप एवा सर्व गृहीत मिथ्यात्व जन्य रागादि भावनु सर्व प्रकारे विरामपणु थवुं ते। एम अनुक्रमे छ कारणो प्राथमीक एवी आ बोध अवस्थाना विषे प्रगटे छे, ते हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— आत्मार्थ हेतुभुत एवी सुविचार श्रेणीनु के तथा प्रकारना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनुं ज्या सुधी जीवने अभावपणुं वर्ते छे, त्या सुधी आत्मार्थ हेतुभुत शुद्धताना निमितभुत आवरणरुप एवा प्रथम चतुष्टयनुं अर्थात अनतानुबधी कषायनुं उदय रुपे होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे। ज्यारे कोई पात्र जीवने सत्संग योगे थयेली बोध सन्मुखताना बळे अंतर सुविचार श्रेणीनुं उपलब्धपणु थाय छे, त्यारे निमितभुत आवरणरुप एवी ते कषायोदय जन्य मलीनतानु अमुक प्रमाण मा तेना पोताना कारणे उपशमपणुं थई जाय छे, अने तेम थवाथी नैमितिक एवा जीव भावना विषे गर्भीत शुद्धतानु स्फुरवु सहज तेना पोताना कारणे थाय छे, तेम थवाथी त्या सत्यासत्यनो परम सद्विवेक देशना लब्धीना अतर अवधारपुर्वक एवा ते सुविवेकी जीवने प्रगटे छे, अने तेम थता त्या सुदेवादि नयात्मक सुद्धताना हेतुरुप, क मतार्थ भावनी मलीन वासनाना पोषकरुप एवा गृहीत मिथ्यात्व जन्य रागादि भावनुं सर्व प्रकारे विरामपणुं थई जाय छे, जेने स्थुल ग्रथी भेदना नामथी सबोधनामा आवे छे।

आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननी उपलब्धीना निमितभुत एवा पट कारणो उपरोक्त एवा ते साधक जीवने प्रथमनी एवी आ बोध अवस्थाना विषे प्रगटे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध परमार्थथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं शीष्य गुरु जी प्रत्ये अनतानुबधी कषायना लक्षणादि बोध विशेषनी याचना करे छे।

> शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पूछे एम।
> शुं लक्षण अनंतानुबधीनुं, ने थाय अनत बध त्या केम ॥
> त्यां क्युं कारण होय विशेष, ते कहो कृपालु दई उपदेश।
> गुरु जी कहे ते कहु आंय, शुण थई सन्मुख अतर मांय ॥१४॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरु जी प्रत्ये वंदन करी एम पुछे छे के हे भगवत! अनतानुबधी एवा ते कषायनुं शु लक्षण छे? अने तेनो अनत बंध केवी रीते थाय छे, अर्थात् तेम थवाना हेतुरुप एवु त्या क्यु कारण विशेष रुपे एटले मुख्यपणे वर्ततु होय छे? ते हे कृपाळु मने उपदेश दईने समजावो। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने समजावु छु, ते तु अंतरना विषे सन्मुख थई आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—अनतानुबधी कषायनो समावेश मुख्यतवे करी मोहनीयकर्मना बीजा विभागरुप एवा चारित्र मोहीनीय कर्ममा थाय छे। तयारुप कषायनु वास्तविक लक्षण शु? अने तेना

बंधनु विशेषरुप कारण शु ? ए प्रश्न बोध सन्मुखताने पामेल एवा कोई आत्मार्थी जीवने पोतानी प्राथमीक भुमीकामा अती आवश्यरुप छे, अने ते ज हेतु लक्षने अवलबी अहिं एवो ते तत्व जिज्ञासु आत्मार्थी शीष्य गुरुजी ने ते सबंधीनो प्रश्न करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ज्या वर्ते सुगुरु प्रत्ये, अप्रतिती ने मन द्वेष।
ते अनत बध थवा तणु, कहीए कारण मुल विशेष ॥
तेम थवामां गच्छ मत मोह, ने तेथी थाय सुगुरुनो द्रोह।
अनत बध करावे ते, लक्षण अनतानुबधीनुं ए ॥१५॥

अन्वयार्थ—ज्या सद्गुरु प्रत्ये अप्रतिती अने मनना विषे द्वेष भाव वर्ततो होय त्या अनत बध थवारुप एवु ते मुळ विशेषरुप कारण कहेना योग्य छे, अने तेम थवामा त्या गच्छाग्रह के मताग्रह भावरुप एवु पोतानु मोहविशपणु होवानु छे, अने तेथी परमार्थपोषक एवा ते आत्मज्ञ पुरुषनो द्रोह कहेता ते जीव भयकर आशातना करे छे, अने ते ज अनतानुबधीनुं मुख्यत्वे करी लक्षण छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—सामान्य प्रकारे ज्या ज्या क्रोधादि कषायनु तीव्रोदयपणु मुख्य पणे वर्ततु होय वा तेवा प्रकारनी हिंसात्मक प्रवृति बाह्य दृष्टीगोचर थती होय, त्यां त्या तेने अनतानुबधीनु स्वरुप के लक्षण कहेवामा आवे छे, ए एक तेनो सामान्य प्रकार छे, कारण के पूर्वे तेवी अनेक युद्धादि प्रपचरुप एवी हिंसात्मक प्रवृति स्थुल दृष्टीए तथारुप कषाय विशेष परिणामे थती होवानुं सामान्य प्रकारे देखाता छता तेमांना केटलाक जीवो ते ज भवे पण मोक्ष पदने पाम्या छे, अने तेवा घणा दाखलाओ आपणने जिनागमथी मळी पण आवे छे, एटले तेने ज जो आपणे अनंतानुबंधीनु स्वरुप के लक्षण एकात कल्पी लईए तो ते कषायथी तेने अनत ससारनी वृद्धी थवारुप एवो अनत बध थवो जोईए, पण तेम तो त्या थयु नथी, तो पछी अनतानुबधीनु वास्तविक लक्षण शु ? ए प्रश्न सहज उपस्थित थाय छे, तेनुं समाधान एज के ज्या परमार्थना विषे अपरमार्थ बुद्धि होवी अने अपरमार्थना विषे परमार्थ बुद्धि थवी, अने तथारुप बुद्धीना विपरिताभिनीवेशपुर्वक एकान्त मताग्रह दृष्टीने अवलंबी उपयोगनी विषम प्रवृति करवी एटले परमार्थ पोषक एवा कोई आत्मज्ञ पुरुष प्रत्ये क्रोधादिरुप एवा द्वेष परिणामे वर्तवुं के तेमने उपसर्गादि करवारुप अकार्यमा प्रेरावुं, त्या

तथारुप कषायनु होवु अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने तेने ज अनतानुबंधीनु वास्तविक लक्षण कहेवा योग्य छे, अने अनत ससारनी वृद्धीरुप एवा अनत बधनो हेतु पण तेज छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपूर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

तथारुप कषायनु, अवलंबन मिथ्यात्व धार।
तेथी त्रय मुढता तणुं, मुल कारण तेह विकार॥
अनंत दोष ने दुःखनुं जे, कारण पण जाण अंतर ए।
सुविवेके ते दोष जो जाय, तो अभाव ते कषायनो थाय॥१६॥

अन्वयार्थ— तथारुप कषाय भावनु अस्तित्व मात्र एक मिथ्यात्व रुपी विपर्यय भावने अव लबीने ज टकी रहेलु छे, अने तेथी सद्गुर्वादिक त्रयात्मक मुढतानु मुळ कारण पण ते ज कहेता मिथ्यात्व रुपी एवा ते विकार भावनु ज छे, एम तु धार, वळी अनत दोष अने दुःख उत्पन्न थवानु जे कारण छे, ते पण ते ज छे, एम तु अतरना विषे जाण, ते मिथ्यात्व रुपी मुल बीजभुत दोषनो सुविवेके करी जो निवृति थाय, तो तथारुप एवा ते अनतानुबधी कषायनु पण त्या अभावपणुं थई जाय, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—मोहीनीय कर्मना मुख्यत्वे करी बे विभाग छे, एक दर्शन मोहीनीय, अने बीजो चारित्र मोहनीय, तेमा प्रथमनो दर्शन मोहनीय विभाग ते जीवनी अतत्व श्रद्धानरुप एवा मिथ्यादर्शनने अवलबीने टकेलो छे, अने बीजो चारित्र मोहनीय विभाग ते जीवना रागादि वा क्रोधादिरुप एवा कल्लेश परिणामने अवलबीने टकेलो छे। तथारुप एवा ते बने विभागमा प्रथमनो एवो जे दर्शन मोहनीय विभाग तेनी साथे वहेता तथारुप एवा ते मिथ्यात्व साथे बीजा विभागरुप एवा चारित्र मोहीनीयना मुख्यमा मुख्य एवा प्रथम चतुष्टयरुप अनंतानुबंधी कषायनु अविनाभावपणु होवाथी मिथ्यात्वनी हयाति पर्यंत तेनी हयाति नियमा होय छे, अने तथारुप अनतानुबंधीनी हयाति पर्यंत बुद्धीना विपर्यय भावपुर्वक रागादि वा क्रोधादि भावनुं अवी कल्लेशपणु अने चारित्रमोहीनीयना शेष सर्व कषायनु अबाधितपणे टकवापणुं पण तेने अवलबीने एक सरखु रहे छे, अने तेथी ज्या ज्या बुद्धीना विपर्यय भावपुर्वक रागादि वा क्रोधादि भावरुप एवी कल्लेशात्मक प्रवृति होय छे, त्या त्या ते नियमा मिथ्यात्वपुर्वक होवाथी तथारुप कल्लेश परिणाम विशेषमा मुख्यपणे अनतानुबधी कषायनु होवु अनिवार्यरुप होवाथी ते त्या अवश्य होय छे।

प्रश्न—तथारुप चतुष्टयना क्रोध, मान, माया, लोभनु वास्तविक स्वरुप शु छे ? अने मुख्यपणे कये कये स्थाने तेने ते नामथी ओळखवामा आवे छे ?

उत्तर—तथारुप चतुष्टयना क्रोध मान माया लोभनु स्वरुप अने तेने तथारुप नामथी ओळखवाना मुख्य स्थानो निचे प्रमाणे छे ।

अनतानुबंधी क्रोध

पोतानी विपर्यात्मक रुचीना वलणने एकात विभाव भावोमां दृढ करी शुद्ध चैतन्यात्मक एवा पोताना स्वभाव सन्मुख मार्ग प्रत्ये अरुची प्रदर्शीत करवी ते ।

अनतानुबधी मान

देहादि समस्त पर अन्य क्रियाने हु करी शकु एवा पोताना मिथ्या अहमा विपर्यात्मक रुचीना विमुखवर्ती वलणने प्रेरी तेने विशेष प्रकारे दृढ करवु ते ।

अनतानुबधी माया

मत सुख अने सत धर्म, ए पोताना स्वाधिन वस्तु स्वभावमा होवा छता, अने तेना बोध परमार्थने समजवा योग्य एवी ज्ञान उघाड शक्तिनो उपलब्धी छता, ते शक्तिने पोते मायिक सुखनी लुब्धताना लीधे छुपावी पोते पोताना आत्माने ठगवो ते ।

अनतानुबधी लोभ

पुण्यादि भावोमा आत्मीक सुख अने धर्म होवानी मिथ्या मान्यताने वश थई तेनी वर्द्धमानताना पुरुषार्थमा एकात विपर्यात्मक रुचीना वलणने प्रेरीत करवु ते ।

आ प्रमाणे अनतानुबधी क्रोध, मान, माया, लोभनुं वास्तविक स्वरुप छे । हवे अहिं तेने तथारुप नामथी ओळखवा योग्य एवा मुख्य स्थानोनु निरुपण करवामा आवे छे ।

१—जे कषाय मिथ्यात्व रुपी एवा मुळ बीजभुत महा कषायने अवलबीने नियमा एक सरखी हयाति धरावतो होय तेने अनतानुबधीना नामथी ओळखवामा आवे छे ।

२—जे कषाय मिथ्यात्वना बधपुर्वक नियमा बध विशेष रुपे परिणमतो होय, तेने अनतानुबधीना नामथी ओळखवामा आवे छे ।

३—जे कषाय शुद्धीना विपर्यय भावपुर्वक थता एवा रागादि या क्रोधादि भावरुप अकलेष परिणाम

विशेषमां नियमा पोतानी ह्याति एक सरखी टकावी राखनारो होय तेने अनंतानुबंधीना नामथी ओळखवामा आवे छे।

४—जे कषाय सत्यासत्य देव गुरादिक स्वरूपना विशेष निर्णयपूर्वक विनयादि सेवनाने अवलंबीत थई प्रवर्ततो होय, तेने अनंतानुबंधीना नामथी ओळखवामां आवे छे।

५—जे कषाय जीवना स्वरुपाचरण चारित्रनो नियमा घात करनारो होय, के तेनी उपलब्धीने रोकनारो होय, तेने अनंतानुबंधीना नामथी ओळखवामां आवे छे।

आ प्रमाणे अनंतानुबंधीनु स्वरूप विचारता तत्व शोधक जीवने स्पष्ट समजाशे के जे जीवने मताग्रह दृष्टीरुप अभिनिवेशनु मुख्यपणु वर्ते छे, ते जीव तथारुप कषाय भावनी मुख्यताने एकांत अवलंबीत होवाथी तेनामा सत्यासत्यनी तुलनात्मक शक्तिनो सद्विवेक अंश मात्र पण होतो नथी, अने तेथी ते एकांत मताग्रह भावपूर्वक तथारुप कषाय भावने अवलंबी प्रत्यक्ष एवा कोई सत्पुरुषनो के जे सत्पुरुषनी उपासना करवाथी, के तेमना गुणातिशयना चिंतवनमां उपयोगने प्रेरवाथी, के तेमनी आश्रय भक्तिमा योजावाथी, के तेमनी आज्ञाए वर्तवाथी, आत्मा सहज सुलभ बोधी थई आत्मार्थ सन्मुखताने पामे, अने ते द्वारा अनंत संसारनो क्षय करी सर्व दुःखथी मुक्त थाय, ते सत्पुरुषनी ते घणी वखते भयंकरमां भयंकर आशातना करे छे, अने तेने ज श्री जिने भयंकरमां भयंकर पाप कह्यु छे, कारण के ज्ञानीने अज्ञानी कहेवामां, अने अज्ञानीने ज्ञानी कहेवामां, अने तथा प्रकारनी विपर्यात्मक मुख्यताने अवलंबी तेमनी आशातना करवामां महामोहनीय कर्म तीव्र रसे बंधाय छे, अने ते तेने उत्कृष्ट संसार पर्यटननु कारण थाय छे। तेथी सर्व जीवोए आ मुख्यमां मुख्य वात प्रथम विचारीने पोताना विषे वर्ती रहेली एवी जे आ मताग्रह भावरुप विषम दृष्टी तेने स्वात्म हितार्थे वमी-तेवा आत्मज्ञ-पुरुषनी आशातना करता बचवु। कदाच वर्तमान विचरता तेवा कोई ज्ञानी पुरुषना लक्षणो पोताने पोतानी मती मुढताथी लक्षगत न थई शके तो तेवा प्रसंगे त्यां मध्यस्थ रहेवु ते स्वात्म श्रेयना इच्छक जीवोने मुसन दोषनी उत्पत्तिना अहेतुपणाथी कल्याणरुप छे।

उपरोक्त बोधने जे जीव निज आत्मार्थ सद्विवेकपूर्वक विचारशे, तेने अनंतानुबंधीनु स्वरुप के तेनु वास्तविक लक्षण अवश्य भानमां आवशे,-अने ते साथे तथारुप कषायना निवास स्थानो पण समजाशे, अने ते समजपूर्वक पोताना विषे वर्तमान उदय रुपे वर्तता एवा ते दोषोनु सम्यक योगे अभावपणु पण थशे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहि तेना अनुसंधान-पूर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

विशेष अवस्था गुणरुप, अहिं स्फुरे ते मन विचार।
मैत्री आदि चार भावना, होय मुख्यपणे अहि धार॥
द्वादश अनुप्रेक्षा पण चित्त, वर्ते वैराग भावे नित्य।
हेयोपादेयनी तेथी आंय, पृथक्ता होय अतर माय ॥१७॥

अन्वयार्थ—पहेली अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवने अहिं प्रगटरुप थती विशेष एवी जे गुणरुप अवस्था ते तु मनना विषे विचार। अहिं तेने मैत्री आदि चार भावना मुख्यपणे होय छे, ते साथे द्वादश अनुप्रेक्षा पण तेने वैराग भावनी अतर स्थिरतापुर्वक नित्य चित्तना विषे वर्तती होय छे, एम तु धार, अने तेथी हेयोपादेयनी पृथक्ता पण तेने अहि अंतरंगना विषे होय छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—अहि पहेली अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवनी वैराग उपशम भावरुप एवी गुण विशेष अवस्था केवा प्रकारनी होय छे, ते सबंधी विचारीए तो सत्सगना योगे जेम जेम ते भावकने आत्मार्थ बोधनी अतर सन्मुखता थती जाय छे, तेम तेम अध्यात्मक सद्‌विवेकनी प्रधानतापुर्वक त्या वैराग्य उपशम भावनु अतर स्थिरतापणु आवतु जाय छे, अने तेथी त्या मैत्री आदि चार भावनामा के द्वादश अनुप्रेक्षाना बोध विचारमा उपयोगनी अतरग सन्मुखता अने ते साथे हेयोपादेयनी पृथक्तापुर्वक मुख्यपणे अप्रशस्त एवा अशुभ रागादि भावो प्रत्ये औदासीनता तेना अंतर परिणामना विषे सहज उपलब्धरुप थाय छे, ते मैत्री आदि चार भावना अने द्वादश अनुप्रेक्षानु स्वरुप निचे प्रमाणे छे।

मैत्री

सर्व जीवो सम सत्तात्मक होवानु स्वभाव लक्षे विचारी तथारुप लक्षे सर्वत्र विशुद्ध एवी प्रेम दृष्टि स्थिर करवी ते।

प्रमोद

शुद्ध आत्मार्थ प्रेरक एवा सुदेवादि रत्नत्रयात्मक तत्वो प्रत्ये के तथारुप मार्गना सन्मुखवर्ती उपासक प्रत्ये अत्यत गुण विशेष दृष्टीनी अंतर सन्मुखतापुर्वक उल्लासीत थवु ते।

करुणा

स्वात्म प्रत्ये करुणात्मक बुद्धी स्थिर करी सर्व प्रकारना विभाव जन्य भावोथी तेनु मुक्तपणु चितववु ते।

मध्यस्थता

जगतना सर्व पदार्थो प्रत्ये निरपृह बुद्धी, स्थिर करी सर्वत्र वृत्तिनुं औदासीनपणु करवु ते।

आ प्रमाणे मैत्री आदि चार भावनानुं स्वरुप छे। हवे अहिं द्वादश अनुप्रेक्षानु स्वरुप प्रतिपादन करवामा आवे छे।

अनित्य अनुप्रेक्षा

कर्मोदय जन्य निमितथी सप्राप्त थयेल एवा सर्व सयोग रुप बाह्य ज्ञेय जन्य पदार्थोनी क्षणीक अवस्थाने अत्यत मद्विवेक पुर्वक विचारी ते प्रत्येना मोह जन्य विकारनु अभावपणु वस्तु स्वभावना लक्षे करवु ते।

अशरण अनुप्रेक्षा

अशरणरुप एवा आ ससारना विषे, शरणरुप एवा पोतना शुद्ध वस्तु स्वभावने विचारी तेनी सम्यक त्रय रुप एवी अंतर्मुख वेदनाने सम्यक योगे अवलबीत थवु ते।

ससार अनुप्रेक्षा

मिथ्यात्वादि अशुद्ध भावोनी वेडीओथी बधन ग्रस्त थई चतुर्गती रुप ससारना विषे पर्यटन करनार एवा आ जीवनी तथारुप शुद्ध भुलने विचारी तेनी भुल रहीत स्वभावना लक्षे निवृति करवी ते।

एकत्व अनुप्रेक्षा

जीव द्रव्य श्रीकाळ एक रुप अने परथी सर्वथा अभग रुप एवु स्वाधिन तत्व होवाथी तेना परिणमनमा परनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी, एम स्व लक्षे विचारी पोते पोताने अवलबीत थवु ते।

अन्यत्व अनुप्रेक्षा

शुद्ध चैतन्य घन एवा निज अस्ति रुप स्वभावमा पर द्रव्य अने पर निमित जन्य एवा सर्व नास्ति रुप भावोनु अभाव पणु होवानु विचारी तेनु अन्यत्वपणुं विशेष दृढ करवु ते।

अशुचीत्व अनुप्रेक्षा

पुण्य पाप रुप एवा उभय विकार जन्य भावोनु बध अपेक्षाए समानकर्तीपणुं होवा छता तेमा रती अरतीनी मान्यतापुर्वक वर्ती रहेली एवी पोतानी स्वभाव विमुख मुढतानु सम्यकप्रकारे चितवन करवु ते।

आश्रव अनुप्रेक्षा

वस्तु स्वभावनी विमुखता पुर्वक ग्रहण थती एवी ते भावाश्रव जन्य वर्गणाने एकांत दुःखना हेतुरूप होवानु विचारी तेनी निवृतिना वास्तविक उपायमा योजावुं ते ।

संवर अनुप्रेक्षा

शुभाशुभ विकार जन्य भावोना अभाव रूप एवा पोताना शुद्धोपयोग रूप संवर भावने एकांत सुखना हेतु रूप गणी तेनी स्वभाव लक्षे सन्मुखता करवी ते ।

निर्जरा अनुप्रेक्षा

भाव संवर पुर्वक थती निर्जरानु सम्यग्दर्शन साथे अविनाभावपणु होवाथी ते नियमा मोक्षना हेतु रूप थाय छे, एम सम्यक प्रकारे विचारवु ते ।

लोक अनुप्रेक्षा

षट द्रव्यात्मक एवा आ लोकना विषे रहेलो एवो जे पोतानो आत्मा ते विर्य रुचीना विमुखवता वलणने अवलंबी पोते पोताना कारणे लोकनी दशे दिशामा पर्यटन करी रह्यो छे, एम स्वभाव लक्षे विचारी पोताना विर्य रुचीना वलणने स्व सन्मुख प्रेरीत करवु ते ।

बोधिदुर्लभ अनुप्रेक्षा

निमित उपादाननी अनुकूल सधीना परमार्थ योग विना,-अने ते योगे संप्राप्त थयेला बोधने स्वभाव सन्मुख प्रेर्या विना, सम्यग्ज्ञान दर्शनादि रूप एवा बोध बीजनी प्राप्ती त्रणे कालना विषे दुर्लभ छे, एम विचारी तेना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमा योजावुं ते ।

धर्म अनुप्रेक्षा

आत्म धर्मनु अस्तित्व त्रिकाळ एक रूप एवा शुद्ध आत्म स्वभावना विषे अवस्थित होवाथी तेनी प्राप्तीनो वास्तविक उपाय पण तेने ज अवलंबीने रहेलो छे, एम सम्यक प्रकारे विचारी तथारुपे लक्षे उपयोगनी सन्मुख प्रवृति करवी ते ।

आ प्रमाणे उपरोक्त भावक मैत्री आदि चार भावनाने के द्वादश अनुप्रेक्षाना विचारने अवलंबीत थई पोते पोताना अंतर परिणामना विषे वैराग उपशम भावनी वर्द्धमानता अने हेयोपादेयनी पृथक्ता-पुर्वक मुख्यपणे अप्रशस्त एवा अशुभ,रागादि भावो प्रत्ये औदासीनता उपयोगनी अंतर सन्मुखता-पुर्वक करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधान पुर्वक आगळ निरूपण करवामा आवे छे ।

अनुप्रेक्षा वर्द्धमान रुप, अहिं थाय विशेषे जेम।
आत्मार्थ ध्येयनु अंतरे, प्रगटे दृढत्व विशेष तेम॥
तेथी शल्यात्मक दोषो आंय, परिक्षीण पामे अंतर मांय।
विशेषे एम अंतर धार, अनुप्रेक्षानो ए उपकार॥१८॥

अन्वयार्थ—द्वादश अनुप्रेक्षा रुप विचार श्रेणीनु अहिं जेम जेम विशेष प्रकारे वर्द्धमान पणु थतु जाय छे, तेम तेम ते साधकना अंतर परिणामना विषे आत्मार्थ ध्येयनु विशेष प्रकारे दृढत्व पणु प्रगटतु जाय छे, अने तेथी अहिं अंतरना विषे त्रण प्रकारना एवा जे शल्यात्मक दोषो ते विशेष प्रकारे परिक्षीणपणाने पामता जाय छे, अने ए द्वादश अनुप्रेक्षाना अंतर विचारनो परम उपकार छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप योगना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे धार।

विशेषार्थ—मैत्री आदि चार भावनाने के द्वादश अनुप्रेक्षाना अंतर विचारने अवलंबीत थनार एवा उपरोक्त गुणाकरनी तथारुप सुविचार श्रेणी जेम जेम विशेष प्रकारे वर्द्धमानताने पामती जाय छे, तेम तेम तेना अंतर परिणामना विषे आत्मार्थ ध्येयनु एटले आत्म कल्याणनी अंतर्मुख सिद्धिना हेतु रुप मुख्य एवा स्वभाव सन्मुख पुरुषार्थने अवलंबीत थवानु विशेष प्रकारे दृढत्वरुप एवा लक्ष बिंदुनु निश्चयात्मकपणु उपलब्ध रुप थतु जाय छे, अने तेम थवाथी तेना अंतरना विषे त्रण प्रकारना एवा जे शल्यात्मक दोषो ते विशेष प्रकारे परिक्षीण पणाने पामे छे, के पामता जाय छे, ते दोषोनु स्वरुप निचे प्रमाणे छे।

माया शल्य

मायिक युक्ति पुर्वक बद्ध परिणामी करेला एवा अनेक प्रकारना शुभ शल्यात्मक दोषोनु अस्तित्व जे पोताना विषे वर्ती रह्यु होय ते।

मिथ्या शल्य

विपर्यय भावथी बद्ध परिणामी करेला एव अनेक प्रकारना अतत्व श्रद्धान रुप दोषोनु अस्तित्व जे पोताना विषे वर्ती रह्यु होय ते।

निदान शल्य

मोह जन्य इच्छाथी बद्ध परिणामी करेला एवा अनेक प्रकारना भाव वासनात्मक दोषोनु अस्तित्व जे पोताना विषे वर्ती रह्यु होय ते।

आ प्रमाणे त्रण प्रकारना शल्यात्मक दोषोनु स्वरुप छे, तेनु द्वादश अनुप्रेक्षानी अंतर विचार श्रेणीना यागे विशेष प्रकारे परिक्षीणपणु थता, एवा ते साधक जीवना अंतर परिणामना विषे विशेष प्रकारे निर्मलत्वपणु प्रगटे छे, अने एज द्वादश अनुप्रेक्षा रुपे थयेली एवी ते अंतर सुविचार श्रेणीनो परम एवो आ उपकार छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रमा रहेलानो परमार्थ छे। हवे अहि तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

ते साथे विनयादि अहिं, होय उत्कृष्ट भावे स्थित।
तेथी परमार्थ दृष्टीना, लक्षे वर्ते त्यां तेम नित्य॥
सुगुर्वादिक प्रत्ये ते खास, लावी प्रेम प्रतित उल्लास।
एवु सत्य प्रत्येनुं मान, सन्मुख साधकने होय जाण॥१९॥

अन्वयार्थ—ते साथे अहिं तेने विनयादि पण उत्कृष्ट भावे स्थित होय छे, अने तेथी परमार्थ दृष्टीना लक्षे एटले शुद्ध द्रव्य स्वभावथी पोतानु स्वरुप सिद्ध सम शुद्ध होवाना अंतरंग लक्षपुर्वक सद्गुर्वादिक प्रत्ये प्रेम प्रतित अने परम निर्योल्लास भाव लावी खास कहेता अवश्य करी नित्य तेम वर्ते छे, एटले तेमनी विनयादि सेवना करे छे। आवा प्रकारनु सत्यार्थ निमित प्रत्ये रहेलु एवु जे बहु मान ते सन्मुखवर्ती एवा आत्मार्थी साधकने ज यथार्थरुप होय छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—विनयादि शब्दार्थनी परमार्थ दृष्टीए तत्व मिमासा करीए तो सत्यरुप एवा निज आत्मार्थ हेतुनी सिद्धीमा तेना बाह्य अनुकुल निमित रुप एवा सद्गुर्वादिक सत्यार्थ रुप साधनो प्रत्ये रहेलो एवो जे विनय वैयावृत्य रुप शुभ सेवनात्मक भाव तेमा तेनो समावेश थाय छे, अने तथी तथारुप लक्षे थतो के करातो एवो ते धर्मात्मा व्यक्तिनो अती विनत्व भावपुर्वकनो आदर के तेमनु बहुमान तेने विनयना नामथी ओळखवामा आवे छे। अने ते धर्मात्मा व्यक्तिनी धर्म बुद्धीए एटले निज आत्मार्थ लक्षे थती के कराती एवी जे सेवा तेने वैयावृत्यना नामथी ओळखवामा आवे छे।

आ प्रमाणे विनयादि शब्दना अर्थने परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे। जे जीवने तथारुप बोधनु अंतर्मुख सिंचन तथारुप लक्षे थयु छे, के वर्ते छे, ते जीव विनयादि सेवनानो आदर तथारुप लक्षे अवश्य करे छे, अने तेज लक्ष आ पहेली अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते सुसाधकने होवाथी ते

तथारुप लश्ने अतर विचारणा करी एटले सिद्ध मम शुद्ध एवा पोताना मुळ वस्तु स्वभावने विचारी ते तथारुप स्वभाव सिद्धीना ध्येयपूर्वक त्यां सन्मुख योगे वर्ते छे।

आ उपरथी विनयादि सेवनामा रहेला एवा तेना मुळ परमार्थने विचारीए तो निमित उपादाननी अनुकूल सधीनी वास्तविक समजपुर्वक अने ते अनुसार स्व प्रत्येनो अतर सन्मुखतापुर्वक यतु एवु जे गुणोत्कृष्ट धर्मात्मा व्यक्ति प्रत्ये बहुमान ते परमार्थे पोताना गुणोत्कृष्ट स्वभावना ज बहुमाननो हेतु छे, अने तेथी-आत्मार्थी जीवनी तथारुप लक्षे थती सेवना ते तेने निज आत्मार्थ साधनामा उपकाररुप होवाथी अने ते सारे मानादि एवा पोताना आतरिक शत्रुओ पर विजय के तेनो निग्रह थतो होवाथी तथारुप लक्षे एवी ते विनयादि सेवनानो आदर तेणे सम्यक प्रकारे इच्छवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपूर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

शुभाचरण व्यवहारमा, करी सन्मुख वृति एम।
हेय बुद्धी परमार्थ द्दष्टीए, राखी सेवे व्यवहार तेम॥
एवो त्यां अतर आत्मार्थ, ते बोधी समजाव्यो परमार्थ।
थई ए पहेली अवस्थानी वात, हवे बीजी बोधुं सुण भ्रात॥२०॥

अन्वयार्थ—एम ते शुभाचरण व्यवहारमा पोतानी वृति सन्मुख करीने अने परमार्थ द्दष्टीए तेमां हेय बुद्धी राखीने एटले शुद्ध नयथी ते भाव त्यागवा योग्य छे, एम विचारीने ते व्यवहाररुप सेवना तथारुप लक्षे करे छे। आवा प्रकारनो त्या अंतर आत्मार्थ एवा ते साधक जीवने वर्ततो होय छे, ते अहिं बोधीने तेनो सर्व परमार्थ तने समजाव्यो। अहिं सुधी पहेली अवस्थानी वात थई, हवे तने बीजी अवस्था बोधुं छुं, ते हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आ जीवनु अनादि काळथी स्वभाव विमुख परिणमन होवाथी तेनु देहादि पर द्रव्य अने पर निमित जन्य एवा शुभाशुभ रागादि भावोमा एकत्व बुद्धीपणुं वर्ती रह्यु छे, अने तेथी ते तथारुप भावोमा कर्तापणानो आरोप करी एकात बंध पर्याय जन्य अशुद्ध भावोने सेवी रह्यो छे, अने ते ज जीवना परिभ्रमणनो मुळ हेतु छे, ज्यारे जीवने सत्संगादि निमितना योगे जीवादि तत्वना बोध परमार्थनुं भले पण सत्यार्थरुप परिणमन थाय छे, त्यारे ते पोतानी प्राथमीक एवी ते बोध अवस्थामा देहादि पर द्रव्यने पोताथी भिन्नरुप होवानुं विचारी अने कर्मोपाधि जन्य एवा ते

पुण्य पापरुप विकार जन्य भावोनु सव अपेक्षाए समानतत्वपणुं होवा छतां, अने निश्चयथी सर्वथा अनादरणीय छता, मात्र व्यवहार द्रष्टीए पापनी अपेक्षाए पुण्यने उपादेयरुप गणी, तेनो आदर तथारुप लक्षे करे छे।

आ ऊपरथी प्राथमीक एवी आ बोध अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवनी आत्मार्थ सन्मुखता केवा प्रकारनी होय छे, तेनो तत्व शोधक जीवने सहज ख्याल थई शकवा योग्य छे, अने ते द्वारा परमार्थ मार्गनी अतर श्रेणीनु सम्यक भान पण आवी शकवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहि बीजी अवस्थाना बोध विशेषनु आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

बीजी बोध अवस्था अधिकार

बीजी अवस्थाना विषे, बोध गोमय अग्नि समान ।
तेथी सुविवेक अंतरे, स्फुरे तेने विशेष जाण ॥
तेथी जीवादि तत्व प्रवेश, करी विचारे मन विशेष ।
विशेषे थईने सन्मुख, स्व करुणा भाव करीने मुख्य ॥१॥

अन्वयार्थ—बीजी अवस्थाना विषे बोध गोमय अग्नि समान एटले जेम गोबरनो अग्नि तणना अग्नि करता विशेष जोरदार होवाथी कईक वधारे वखत टकी शके छे, तेम आत्मबोधनु अस्तित्व अहि स्थुल रुपे होवा छता पण पुर्व अवस्था करता काईक विशेष स्थिर परिणामे टकी शके तेवु योग्यपणु तेना विषे होय छे, अने तेथी तेना अतरना विषे आत्मार्थ सद्विवेकनु विशेष प्रकार स्फुरायमणु थाय छे, एम तु जाण, अने तेथी ते जीवादि तत्वना विषे प्रवेश करी, तेने विशेष प्रकारे विशेष अतर सन्मुख थईने, अने त्या स्व करुणात्मक भाव मुख्य करीने, मन द्वारा विचारे छे, एम हे शीष्य तु आ जीव प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—सम्यग्दर्शननी उपलब्धीमा सम्यग्दर्शन जेना आश्रये उत्पन्न थाय छे, तेना बोध विशेषनी अती आवश्यकता छे, अने ते बोधनी अतर्मुख सिद्धी एकंदर जीवादि नव पदार्थना बोध विशेषथी ज थाय छे, एटले अहि ते साधक जीव तथारुप बोध विशेष विचारणाने तथारुप लक्षे अनन्यीत थई तथारुप तत्वना पृथक भेदने निचे प्रमाणे विचारे छे ।

जीव

जेमा ज्ञान दर्शनादिरुप एवी चैतन्यात्मक शक्ति विशेषनु अस्तित्वपणु वर्तेतु होय अने ते भाव प्राणरुप स्व शक्तिना बळे जे त्रीकाळ एक रुप पोते पोताना विषे टकनारो के पोताथी जीवनारो होय तेने जीव तत्व कहे छे ।

अजीव

जेमा चैतन्यात्मक शक्तिना अभावरुप एवु जड परिणामीपणु वर्तेतुं होय, एवा धर्म, अधर्म, आकाश अने काल ए चार अरुपी द्रव्यने, अने देहादि पुद्गल परिणामरुप एवा एक रुपी द्रव्यने अजीव तत्व कहे छे ।

पुण्य

बाह्य निमितना लक्षे शुभोपयोगरुप एवा कोई पण परिणाम विशेषने अवलंबीत थवुं तेने पुण्य तत्व के भाव पुण्य कहे छे, अने तथारुप भावनुं निमित पामीने पुदगल परमाणुरुप शक्ति विशेषनु द्रव्य कर्म रुपे परिणमन थवु तेने द्रव्य पुण्य कहे छे।

पाप

बाह्य निमितना लक्षे अशुभोपयोगरुप एवा कोई पण परिणाम विशेषने अवलंबीत थवु तेने पाप तत्व के भाव पाप कहे छे, अने तथारुप भावनु निमित पामीने पुदगल परमाणुरुप शक्ति विशेषनु द्रव्य कर्म रुपे परिणमन थवु तेने द्रव्य पाप कहे छे।

आश्रव

पुण्य पापरुप एवा ते शुभाशुभ परिणाम विशेषने अवलंबीत थई तेनु वासनात्मक भाव रुपे ग्रहण थवुं तेने आश्रव तत्व के भावाश्रव कहे छे, अने ते भावनु निमित पामीने पुदगल परमाणुरुप शक्ति विशेषनुं द्रव्य कर्म रुपे परिणमन थवुं तेने द्रव्याश्रव कहे छे।

बंध

पुण्य पापरुप एवा ते भावाश्रव जन्य परिणाम विशेषमा तन्मयपणे अटकवु तेने बंध तत्व के भाव बंध कहे छे, अने तथारुप भाव बंधनु निमित पामीने पुदगल परमाणुरुप शक्ति विशेषनुं द्रव्य बंध रुपे परिणमन थई तेनुं जीवनी साथे एक क्षेत्रावगाहरुप संबंध विशेषपणे रहेवु तेने द्रव्य बंध कहे छे।

संवर

पुण्य पापरुप एवा ते भावाश्रव जन्य परिणाम विशेषनुं शुद्धोपयोगरुप एवा चैतन्यात्मक स्वभावना अंतर अवलंबनपुर्वक निरोधपणु करवु तेने संवर तत्व के भाव संवर कहे छे, अने ते अनुसार त्या नुतन कर्म बंधनु नव रुपे परिणमन थतु अटकवु तेने द्रव्य संवर कहे छे।

निर्जरा

पुण्य पापरुप एवा ते वर्तमान उदयरुप भावोनुं स्वभाव लक्षे संवरपणु थता, ते भावोनु जीव अवस्थाना विषे एक देश (अंशे) क्षयरुप अभावपणु थवु तेने निर्जरा तत्व के भाव निर्जरा कहे छे, अने ते समये तेना निमितभुत कर्मनु कर्म भावथी अकर्मरुपे दुर थवुं तेने द्रव्य निर्जरा कहे छे।

मोक्ष

पुण्य–पापरुप अशुद्ध भावोनु जीव अवस्थाना विषे सर्वथा क्षयरुप अभावपणु थई त्या केवळ शुद्धावस्थानु प्रगटपणु थवुं तेने मोक्ष तत्व के भाव मोक्ष कहे छे, अने त्यां द्रव्यकर्मनी समस्त वर्गणानु सर्वथा क्षयरुप अभावपणुं थवुं तेने द्रव्य मोक्ष कहे छे ।

आ प्रमाणे नव तत्वनुं (पुण्य पाप आश्रव तत्वना पेटा विभाग होवानी प्रधानरुप दृष्टीए तेने सात तत्व रुपे पण ओळखवामा आवे छे) स्वरुप छे, तेमा जीव अने पुद्गल ए बे सामान्यरुप छे, अने ते उभयना पृथक रुपे एटले द्रव्यथी अने भावथी एवा शेष सात तत्वो ते विशेषरुप छे, ते विशेषरुप तत्वोमा पुण्य पाप आश्रव अने बंध ए चार तत्वो जीव अने पुद्गलना सयोग परिणामरुप एवी विभाव पर्यायथी उत्पन्न थाय छे, अने संवर, निर्जरा तथा मोक्ष ए त्रण तत्वो जीव अने पुद्गलना सयोगरुप परिणामना विनाशथी उत्पन्नरुप एवी जे विनशीत स्वभाव पर्याय तेनाथी उत्पन्न थाय छे ।

उपरोक्त नव तत्वने निश्चय अने व्यवहार नयथी तेना ज्ञेय, हेय, अने उपादेय सम्बन्धीना परमार्थने विचारीए तो तेमा जीव अने पुद्गल ए बे तत्वो निश्चय नयथी जाणवा योग्य छे । संवर, निर्जरा अने मोक्ष ए त्रण तत्वो एक देश शुद्ध निश्चय नयथी अने उपचाररुप व्यवहारथी आदरवा योग्य छे, अने पाप आश्रव अने बंध ए त्रण तत्वो उभय नयथी सर्वथा त्यागवा योग्य छे, अने पुण्य तत्व निश्चयथी सर्वथा त्यागवा योग्य परिणामना लक्षे मात्र उपचाररुप व्यवहारथी तेना स्वामित्व भवनी नकार बुद्धीपूर्वक आदरवा योग्य छे ।

आ प्रमाणे उपरोक्त साधक जीवादि नव तत्वना स्वरुपने विचारी ते अनुसार तेनो विशेष अतर मन्मुखतापूर्वक अवधार करे छे, अने तेथी त्या गर्भीत शुद्धतानु वर्द्धमानपणुं पण थतु जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसधानपूर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

> अनुक्रमे ते अतरे, बोध विचारे विशेष जेम ।
> लक्षणथी त्यां लक्ष्यनो, थाय निरधार विशेष तेम ॥
> ते लक्षे चैतन्य लक्षणरुप, छु सदा हुं जीव स्वरुप ।
> आगम अनुमानादिथी एम, अवधारे स्वरुपने तेम ॥२॥

अन्वयार्थ—जेम जेम अहिं ते साधक जीव पोताना अतरना विषे अनुक्रमे जीवादि तत्वना बोधने विशेष प्रकारे विचारे छे, तेम तेम त्या लक्ष्य रहेता पोताना आत्मानो निरधार विशेष

अने पच प्रमाद भावोने तजी आत्म ज्ञान पामवारूप एवुं जे मारु कार्य ते साध्य करूं, एम ते चित्तना विषे विचारीने त्यां भक्ति प्रधान भावे सन्मुख योगे वर्ते छे, एम हे शीष्य तु आ जीव प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जे जीवने आत्मार्थ बोधना चिंतनथी आत्मार्थ सद्‌निक्नी उपलब्धी थाय छे, अने ते द्वारा तथारुप बोधना अनुकूल निमितरूप एवा प्रत्यक्ष सदगुरुना योगनु अवर्णनीय महात्म्य समजाय छे, ते ज तेना सुयोगनी तालावेलीमा उपयोगने सन्मुख भावे प्रेरे छे, अने तेवो सुयोग मप्राप्त थतां ते अत्यत प्रेम प्रतित अने निर्योझामपुर्वक तेमनी भक्ति प्रधान भावे सेवना पण सर्व प्रकारना अकार्यने, अने पंच प्रमाद भावोने (विषय–५, कषाय–४, विकथा–४, निंद्रा–१ अने स्नेह–१, एम एकंदर–१५ भेदने मुख्यपणे व्यवहारथी पंच प्रमाद कहे छे, अने निश्चयथी निर्य रुचीना वलणने स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करवाना अनुत्साहने प्रमाद कहे छे) तजी सन्मुख योगे वरे छे ।

आ उपरथी आत्मार्थी जीवनु लक्ष बिंदु अने तथारुप लक्षे थती एवी तेनी सन्मुख योगे निर्य प्रवृति ते केवा प्रकारनी होय छे, ते अहिं तथारुप मार्गना प्रवासी जीवने सहज समजवा योग्य छे, अने ते द्वारा पोताना निर्य रुचीना वलणने अत्यत उत्साहपुर्वक स्वभाव सन्मुख प्रेरवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

> वळी करे विचारणा, लावी विवेक चित्तमां एम ।
> द्रव्यानुयोगना बोध वण, पामु बोधी हुं अतर केम ॥
> तेथी सदगुरु आज्ञाधार, रहेवुं ते अतिम निरधार ।
> स्व हेतु सिद्ध थवा ते एम, ध्येय स्थिर करे विचारी तेम ॥५॥

अन्वयार्थ—वळी ते चित्तना विषे विवेक लावी एम विचारणा करे छे के सम्यग्दर्शन रुपी शुद्ध आत्म धर्मनी प्राप्तीमा मात्र एक द्रव्यानुयोगना बोधनु ज मुख्यपणु छे । तथारुप अनुयोगना बोध विना, एटले आत्म स्वरुपने यथार्थ जाण्या विना, हु अतरना विषे सम्यग्दर्शन रुपी परम लाभने शी रीते पामी शकु ? तेथी ते बोधनी सिद्धीना अनुकूल निमितरुप एवा आ प्रत्यक्ष सद्‌गुरुनी आज्ञाधार एटले तेमनी आज्ञानुसार रहेवु ते मारो अतिम निरधार छे, एम ते स्व हेतु सिद्ध थवा अर्थे विचारी तथारुप लक्षे वर्तवा पोतानु ध्येय स्थिर करे छे, एम हे शीष्य तु आ जीव प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जीनागमना विषे विषय भेद कथनना रहस्यार्थ बोधने समजाववा अर्थे तेनो एकदर चार विभाग पाडवामा आव्या छे, तेने मुख्यपणे अनुयोगना नामथी संबोधवामां आवे छे। ते चार अनुयोगमा वस्तुना मुळ धर्मनी बोध सन्मुखता अर्थे द्रव्यानुयोगनु मुख्यपणुं छे। तयारुप अनुयोगना परमार्थ बोधनु अतर्मुख चिंतन जे जीवने कोई प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगे थाय छे, अने ते द्वारा वस्तुना मुळ स्वभावनुं, के शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मनुं सम्यक भान स्व पर स्वरुपना भेद विज्ञानपुर्वक प्रगटे छे, ते जीवनो पर्यायाश्रीत लक्ष निवृत थई उपयोग सहज स्वभाव सन्मुखताने पामे छे, अने ते द्वारा सम्यग्दर्शननी उपलब्धी पण थाय छे। आवा प्रकारनो परमार्थ लक्ष उपरोक्त सुसाधकने द्रव्यानुयोग सबधीनो थवाथी ते तयारुप स्व हेतुनी सिद्धी अर्थे, तयारुप बोध सिद्धीना अनुकूळ निमितरुप एवा प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगनु बहुमान लावी तेमनी आश्रय भक्तिमा रहेवानो निर्णयात्मक ध्येय सम्यक योगे दृढ करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> एम सु दृढ परिणामथी, रही सदगुरु आश्रय तेह।
> स्व लक्षे सन्मुख सेवना, करे स्वछद टाळी एह॥
> त्यां सुक्ष्म दोषो जेजे चित्त, थाय ते विचारीने नित्य।
> स्पष्ट करी आलोचे ते, स्व करुणात्मक भावे ए ॥६॥

अन्वयार्थ—आ प्रमाणे ते सुसाधक सुदृढ परिणामथी सद्गुरु आश्रये रही, अने त्या स्वआत्मार्थ लक्षने मुख्य करी तेमनी सन्मुख भावे सेवना सर्व प्रकारना स्वछंदने टाळी करे छे, अने त्या जे जे सुक्ष्म दोषो चित्तना विषे उत्पन्न थाय छे, ते स्व करुणात्मक भावे नित्य चित्तना विषे विचारे छे, अने तेने स्पष्ट करी आलोचना पण करे छे, एम हे सौम्य तु आ जीव प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मार्थी जीवनी आत्मार्थ सन्मुखता केवा प्रकारनी होय छे, अने तयारुप सन्मुखवर्ती साधनामा ते पोताना निर्णयात्मक रुचीना वलणने सन्मुख भावे प्रेरीत करवामा कई कई विचार श्रेणीने अवलबे छे, अने ते द्वारा पोतानो निर्णयात्मक ध्येय केवा प्रकारे दृढ करे छे, ते अहि उपरोक्त साधकनी साधनात्मक प्रवृति तरफ दृष्टि प्रेरता केवा कोई आत्मार्थी जीवने सहज ख्यालमा आवी शकवा योग्य छे, अने ते उपरथी एम पण समजवा योग्य छे के आत्मार्थ साधनामा ज्या उपा-

दाननुं सन्मुखवर्तीपणु वर्ते छे, त्या स्व सिद्धी अवश्य छे, अने निमित पर उपचारनो आरोप पण त्यां ज थई शकवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं बीजी रीते आ बोध अवस्थाना विषे उत्पन्न थतु एवु जे सम्यग्दर्शननु सप्तम कारण ते सम्बन्धी निरुपण करवामा आवे छे ।

दश कारण सम्यक्त्व प्राप्तीनां, तेमां षट कह्या प्रकार ।
अहि ते पैकी सातमु, तत्व मिमांसा विशेष धार ॥
तेथी स्वनी विशेष प्रतित, लावी शशयादि वमे चित्त ।
ते साथे त्रय विपर्यय पण ते, वमे विचारी अतर ए ॥७॥

अन्वयार्थ—सम्यग्दर्शन प्राप्तीना दश कारणोमा पुर्वे तेना तने षट प्रकार कथा हता, अहिं ते पैकी तेने सातमु तत्व मिमासा–एटले वस्तुना सामान्य विशेषात्मक धर्मनी के जीवादि तत्वनी सुक्ष्म विचारणा करवी ते, एवु विशेषरुप कारण प्रगटे छे, एम तु धार, अने तेथी ते विशेष प्रकारे तत्व मिमासा करी अने ते द्वारा पोताना वस्तु स्वभावनी विशेष प्रतिती लावी शशयादि त्रयात्मक दोषोने चित्तना विषे विशेष प्रकारे वमे छे, अने ते साथे त्रण प्रकारना विपर्यय भावो पण ते अतरना विषे विशेष प्रकारे विचारी तेनो पण विशेष प्रकारे परिहार करे छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—आत्मार्थ साधनामा के सम्यक्त्वादि गुण विशेष परिणमनमां शशयादि त्रयात्मक दोषो अने ते साथे त्रण प्रकारना विपर्यय भावो मुख्यपणे रोधकरुप होवाथी ज्या सुधी तेनुं सम्यक प्रकारे अभावपणु थतुं नथी, त्या सुधी तथारुप गुण विशेष अवस्थानु उपलब्धपणु पण थई शकतुं नथी, एटले अहिं तथारुप दोषना परिहार अर्थे तेना पृथक भेदनुं निरुपण करवामां आवे छे ।

शशय

वस्तुना निर्णयमां भ्रमात्मकपणु जेम के हुं देह छुं के आत्मा छुं ते सम्बन्धीना वास्तविक निर्णयनुं अभावपणुं होवुं ते ।

विपर्यय

वस्तुना निर्णयमां अन्यथापणु जेम के हुं देह स्वरुप ज छुं, एम बुद्धीनुं सर्वथा विपर्यासपणुं होवु ते ।

त्यां पहेलो नियम मन शुद्धी ते, बीजो नियम जाण संतोष ए ।
त्रीजो तप चोथो स्वाध्याय, पंचम ध्यान विषे स्थिर थाय ॥८॥

अन्वयार्थ– ते मार्थ अहिं ते साधकनो त्याग, वैराग अने सयमना विषे प्रवेश होय छे, अने तेथी ते मनना विषे पाच प्रकारना नियमो विशेष प्रकारे दृढ करे छे। त्यां पहेलो नियम–मननी शुद्धी होवी ते, बीजो नियम–सतोष वृत्ति धारण करवी ते, त्रीजो नियम–तप एटले इच्छानो निरोध करवो ते, चोथो नियम–स्वाध्याय एटले शास्त्राध्ययन करवु ते, अने पाचमो नियम–ध्यान एटले तत्व चिंतन करवुं ते, एम पचात्मक नियमो ते विशेष प्रकारे दृढ करे छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ–उपरोक्त साधक तत्व मिमांसाना बळे जेम जेम आत्मार्थ भावनी अतर मन्मुखताने अवलबतो जाय छे, तेम तेम मुख्यत्वे करी त्या त्याग, वैराग अने संयम भावनु वर्द्धमानपणुं सहज विभाव प्रत्येनी औदासीनतापुर्वक थतु जाय छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे ।

त्याग

बहिरात्म जन्य मुढतानो के तथा प्रकारनी रागादि भावरुप विमुखतानो ।

वैराग

पाच इंद्रियात्मक विषयनो, के पर लक्षे उत्पन्न थती सर्व मोह जन्य इच्छानो ।

सयम

वृतिओनो के अनाचरण रुपे उपस्थित थता दोषोनो ।

आ प्रमाणे ते साधक जीवने त्याग, वैराग अने संयम भावनी उपलब्धी थता ते मनना विषे पचात्मक नियमो विशेष प्रकारे दृढ करे छे, तेनुं विशेष स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

शौच

सर्व प्रकारना गुप्त शल्यात्मक एवा मनना विषे रहेला पुर्व कृत दोषोनी सम्यक आलोचना करी नित्य चित्त विशुद्ध परिणामे वर्तवु ते ।

सतोष

बाह्य परिग्रह रुपे वर्तती एवी सर्व पौदगलीक वस्तुओनी भोग जन्य तृष्णानु अने तेनी वर्द्धमानतानो इच्छानुं निरामपणु के तेनुं अल्पत्वपणु करवु ते ।

तप

अभ्यतर परिग्रह रुपे वर्तती एवी सर्व मोह जन्य इच्छानु विरामपणु के तेनु अल्पत्वपणु करवु ते ।

स्वाध्याय

आत्मार्थ भावनी अतरग सन्मुखतापुर्वक कोई प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगे के परोक्षना लथे सद्शास्त्रनु अध्ययन करवु ते ।

ध्यान

चित्तनी एकाग्र स्थिरतापुर्वक वस्तु स्वभावनु चिंतवन करवु ते ।

आ प्रमाणे ते साधक जीव तत्व मिमामाना बळे त्याग, वैराग अने सयम भावरुप एवी निर्मल गुण अवस्थाने अवलबी उपरोक्त पचात्मक नियमो मनना विषे विशेष प्रकारे दृढ करे छे, अने तेना पालनमा उपयोगने सन्मुख भावे प्रेरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा रहेलानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

तेथी पिंडस्थ पदस्थ रुप, नित्य ध्यान करे स्थिर मन ।
अथवा रुपस्थ भावमा, करे जिनवरनुं चिंतवन ॥
अथवा रुपानित लक्षे रही, स्वरुपने विचारे अहिं ।
दर्शन विशुद्दी तेथी आय, थाय वृद्धीगत अतर मांय॥ ९ ॥

अन्वयार्थ–तेथी ते पिंडस्थ पदस्थरुप ध्यान नित्य स्थिर मने करे छे, अथवा तो ते रुपस्थ ध्यानना विषे उपयोगने स्थिर करी श्री जीनेश्वरनु चिंतवन करे छे, अथवा तो ते रुपातित ध्यानना लक्षे रही स्वरुपने विचारे छे, अने तेथी अहिं तेना अतर परिणामना विषे दर्शनाचार विशुद्धीनु वर्द्धमानपणुं पण थतु जाय छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ–ध्यानना अनेक प्रकार छे, तेमा आध्यात्मीक दृष्टीए उपर कह्या ते चार प्रकार मुख्य छे, तेनु अनुक्रमे स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

पिंडस्थ

ज्ञानादि अनत गुण पर्यायना एक पिंडरुप एवो चैतन्य घन स्वभावनो धारक हुं- आत्मा छु, एम स्वरुप चितवन करवुं ते ।

पदस्थ

ज्ञान दर्शनादि पदनो धारक एवो अखंड अविनाशी हुं आत्मा छु, एम स्वरुप चिंतवन करवुं ते ।

रुपस्थ

पुर्ण आत्मज्ञ अने सर्वज्ञ स्वभावना ऐश्वर्यने पामेल एवा श्री जीन स्वरुपना प्रधान लक्षे ते साकार भगवंतनु चिंतवन करवु ते ।

रुपातित

ज्ञायकरुप स्वभावनी अखंड एकाकारताने पामेल एवा सिद्ध स्वरुपना प्रधान लक्षे स्व स्वरुपनु चिंतवन करवु ते ।

उपरोक्त चार प्रकारना ध्यानने सालंबनी ध्यान कहेवामा आवे छे, अने ते प्रथमनी चार अवस्थाना विषे एटले पहेलाथी चोथा गुणस्थानना अस्पर्श भाव पर्यंत दर्शन मोहनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे अनुक्रमे विशुद्ध परिणामरुप स्वरुपनी ओघ प्रतिती रुपे होय छे, अने पाचमीथी उपरनी अवस्थाना विषे एटले चोथाथी शुक्ल ध्यानना पहेला भेदरुप एवा दशमा गुणस्थान पर्यंत चारित्र मोहनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे अनुक्रमे विशुद्ध परिणामरुप स्वरुपनी सम्यक प्रतिती रुपे होय छे ।

आ प्रमाणे सालंबनी ध्यानना मुख्यत्वे करी चार प्रकार छे, तेने उपरोक्त साधक जीव स्वभाव लक्षे अवलंबी तेनु एकाग्रतापुर्वक ध्यान करे छे, अने तेथी अहिं अंतरंगना विषे अनुक्रमे दर्शनाचार विशुद्धीनुं वर्द्धमानपणु थतु जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

पचाचार विशुद्धीनो, सर्व आधार दर्शनाचार ।
विशुद्धी तेनी थवा, तत्व मिमांसा मुख्य तु धार ॥
ते लक्षे ते साधकनी आंय, साधना वर्ते अतर मांय ।
थई ए बीजी अवस्थानी वात, हवे त्रीजी बोधु सुण भ्रात ॥१०॥

अन्वयार्थ—पंचाचार विशुद्धीनो सर्व आधार मात्र एक दर्शनाचार विशुद्धी पर रहेलो छे, अने दर्शनाचार विशुद्धी थवामा तत्व मिमांसा ए ज तेनुं मुख्यमा मुख्य साधन छे, एम तु धार ।

ते लक्षे अहिं ते साधक जीवनी तत्त्व मिमामात्प एवी जे साधना, ते तेना अंतरना विषे वर्तती होय छे। अहिं सुधी बोनी अवस्थानी वात थई, हवे तने श्रीजी अवस्था बोधुं छु, ते हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—पंचाचारमां मुख्यपणे दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपाचार अने वीर्याचार एम एकंदर पांच प्रकारनो समावेश थाय छे, ते सर्वमा दर्शनाचार विशुद्धी ए जीवनी प्राथमीक भुमीका होवाथी अने शेष चारनी विशुद्धीनो सर्व आधार पण तेना पर ज रहेलो होवाथी जीनागमना विषे तेनुं मुख्यपणु दर्शावी, तेनी विशुद्धीना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थने अवलंबवानु एटले जीवनी दृष्टी तत्व सन्मुख प्रेरीत करवानुं ठाम ठाम दर्शावामा आव्युं छे। तथारुप लक्ष उपरोक्त साधकने होवाथी ते तेनो अवधार करी एटले तथा प्रकारनी जीन आज्ञाने अवलंबी ते तथारुप लक्षे वर्ते छे, अर्थात पोतानी दृष्टी तत्व मिमामात्प एवा ते अंतर साधननी सन्मुखतामा नित्य सम्यक योगे प्रेरे छे।

आ उपरथी बीजी एवी आ बोध अवस्थना विषे वर्तता एवा ते साधक जीवनो प्रगती मार्ग कया प्रकारनो होय छे, तेनो तत्व शोधक जीवने सहज ख्याल थई शकवा योग्य छे, अने ते द्वारा तथारुप मार्गनी अंतर श्रेणीनुं सम्यक भान पण आवी शकवा योग्य छे, अने ए ज गाथा सुत्रना बोध विशेषनी समजवा योग्य छे। हवे अहिं श्रीजी अवस्थाना बोध विशेपनु आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

(त्रीजी बोध अवस्था अधिकार)

त्रीजी अवस्थाना विषे, बोध काष्टना अग्नि समान ।
तेथी सुविवेकनी अहि, होय वृद्धि विशेषे जाण ॥
तेथी उभय चतुष्टयनी चित्त, पृथकता विचारे नित्य ।
विशेष स्थिर करीने मन, थाय विशुद्ध तेथी दर्शन ॥१॥

अन्वयार्थ—त्रीजी अवस्थाना विषे बोध काष्टना अग्नि समान एटले जेम काष्टनो अग्नि गोमरना अग्नि करता विशेष जोरदार होवाथी काईक वधारे वखत टकी शके छे, तेम आत्म बोधनु अग्निन्य अहि स्थुल रुपे होवा छता पण पुर्व अवस्था करता काईक विशेष स्थिर परिणामे टकी शके तेवु योग्यपणु तेना विषे होय छे, अने तेथी आत्मार्थ सद्विवेकनुं अहिं तेने विशेष प्रकारे वृद्धीरुप परिणमन वर्ततु होय छे, एम तु जाण, अने तेथी ते विशेष प्रकारे मन स्थिर करीने स्व पर एवा उभयात्मक चतुष्टयनी पृथकता ते नित्य चित्तना विषे विचारे छे, अने तेथी अहिं ते साधकने दर्शन विशुद्धी विशेष प्रकारे थाय छे, एम हे शीष्य तु आ त्रीज प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—त्रीजी एवी आ बोध अवस्थाना विषे उपरोक्त साधकनु बोध विशेष परिणमन वृद्धीरुप अने विशेष उज्जवळरुप थतां, ते विशेष एवी तत्व विचारणाने अवलंबीत थई, अहिं ते स्व पर चतुष्टयनुं चितवन तेनी विशेष पृथक्ता पुर्वक निचे प्रमाणे करे छे ।

(जीव द्रव्यना स्वचतुष्टयनु स्वरुप)

स्व द्रव्य

ज्ञानादि अनंत गुण पर्यायना एक पिंडरुप एवो चैतन्य घन मुळ वस्तु जे त्रीकाळ एकरुप अने परथी सर्वथा अभगरुप वर्ती रही छे ते ।

स्व क्षेत्र

जीवनो अवगाहना प्रमाणे असंख्यात आत्म प्रदेशोनुं रहेवुं ते ।

स्व काळ

अनादि अनत एवा पोताना ध्रुव स्वभावे त्रीकाळ एक रुप टकीने पोतानी रत्न पर्यायमा प्रति समय परिणमवुं ते।

स्व भाव

सम्यक रत्न त्रयात्मकरुप एवा शुद्ध ज्ञायक स्वभावमा उपयोगनी निर्वीकल्प स्थिरता थवी के होवी ते।

(पुदगल द्रव्यना स्व चतुष्टयनुं स्वरुप)

स्व द्रव्य

वर्णादि गुण पर्यायना एक पिंडरुप एवी पुदगल परमाणुरुप मुळ वस्तु जे त्रीकाळ एक रुप अने परथी सर्वथा असगरुप वर्ती रही छे ते।

स्व क्षेत्र

पोताना प्रदेशत्व गुण पर्यायरुप एवा अक्षुद्र आकारमा पोतानु अस्तित्व होवु ते।

स्व काळ

अनादि अनत एवा पोताना मुळ परमाणु रुपे त्रीकाळ एक रुप टकीने पोतानी वर्णादि पर्यायमा प्रति समय परिणमवुं ते।

स्व भाव

पोते पोताना वर्णादि गुणोथी सदा तन्मयपणे रहेवु ते।

आ प्रमाणे वस्तु मात्रनु स्व चतुष्टयमा अस्तिरुप सद्भावपणु अने पर चतुष्टयमा नास्तिरुप अभावपणु होवाथी जीवनुं कर्ता कर्मपणु जीवमा, अने पुदगलनु कर्ता कर्मपणुं पुद्गलमा एम सौ कोईनु परिणमन पोत पोताना निजे स्वभावीक ज वर्ती रहेलुं होय छे, एम उपरोक्त मात्रक स्व पर चतुष्टयनो बोध विशेष विचारणाने अवलबी तेनी विशेष प्रकारे पृथक्ता करे छे, अने तेथी अहिं तेना अतरना निजे विशेष प्रकारे दर्शन विशुद्धी थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये जीव पुदगलना स्वाश्रीत परिणमन सबधी कंईक युक्तिपुर्वक प्रश्न करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पुछे एम।
न कर्ता जीव पर द्रव्यनो; तो जड क्रिया करे जड केम॥
जीवमां ज्ञानादि न जडमां ते, तेथी स्व क्रिया करे केम ए।
गुरुजी कहे सुण तु बोध, समजावुं तुजने अविरोध॥२॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये वंदन करी एम पुछे छे के हे भगवंत ! जो जीव देहादि पर द्रव्यनो कर्ता न होय तो देहादि जड क्रिया ते जड पुदगल द्रव्य शी रीते करी शके ? जीवमा ज्ञानादि गुण प्रत्यक्ष जोवामां आवे छे, अने ते पोताना क्रियान्तर परिणमनमा हेतुरुप छे, पण जडमा तो ते गुणनु अभावपणुं वर्ते छे, तो पछी ते पोतानी स्व क्रिया कई रीते करी शके ? अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने अहिं पुर्वापर अविरोध एवा जीनाशय श्रुतथी समजावुं छु, ते तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आजे मां कोई जीवो जीव द्रव्यमा जोवा जाणवारुप एवी शक्ति विशेषनु अस्तित्व होवाथी अने पुदगल द्रव्यमा ते शक्तिनु अभावपणु रहेवाथी जीव उपरोक्त एवी ते शक्तिना वडे पोतानी परिणमनरुप क्रिया जीव पुदगल उभयना विषे अर्थात वस्तु मात्रमा करी शके छे, एम माने छे, अने ते मान्यताने वश थई पोते वस्तु मात्रने पराश्रीत होवानु स्वीकारे छे, अने ते द्वारा परना कर्ता कर्मनु स्वामित्वपणुं ते पोताना विषे दृढ करी वस्तु मात्रनी स्वतंत्र शक्तिनुं खुन करे छे। आ वातनो परम सद्विवेक बोधनी अंतर सन्मुखताना वडे उपरोक्त सुसाधकने थता, ते तेनी सर्वांग समाधानी अर्थे गुरुजीने प्रश्न करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

परिणमन सो वस्तुनु, रह्युं स्वाश्रीत सर्व प्रकार।
द्रव्यत्व गुण तेमां सदा, होय मुख्यपणे एम धार॥
तेथी ज्ञानादि गुणनी नोय, वर्ते अपेक्षा तेमा कोय।
वस्तु मात्र विषे एम धार, परिणमनमां सर्व प्रकार॥३॥

अन्वयार्थ—वस्तु मात्रना परिणमनमा सर्व प्रकारे स्वाश्रीतपणुं रहेलु छे, अने ते स्वाश्रीत पणे थता परिणमनमा सदा द्रव्यत्व गुणनु ज मुख्यपणुं होय छे, एम तु धार, अने तेथी जीवना ज्ञानादि

गुणनी अपेक्षा तेमां एटले वस्तु मात्रना परिणमनमां सर्व प्रकारे रहेता सर्वथा रहेती नथी, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरूप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे धार।

विशेषार्थ—वस्तु मात्रनी कहेता जीव पुदगलादि समस्त द्रव्यनी पोत पोताना विषे थती एवी जे परिणमनरूप क्रिया, तेमां सामान्यरूप एवा द्रव्यत्व गुणनु ज मुख्यपणु छे, अने मुख्यपणु होवथी वस्तु मात्रना विषे तथारूप गुणनु होवु अनिवार्यरूप छे। तथारूप गुण सामान्यरूप होवाथी वस्तु मात्रना षट सामान्य गुण पैकीनो ते पण एक प्रकार छे, ते षट सामान्य गुणनु अहिं चालु विषयने अनुसरीने अनुक्रमे निरुपण करवामा आवे छे।

अस्तित्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तुनु अस्तित्व त्रीकाळ एक रुप टकीने रहेवु तेने अस्तित्व गुण कहे छे।

वस्तुत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तु सदा अर्थ क्रिया संपन्न होवी तेने वस्तुत्व गुण कहे छे।

द्रव्यत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तुनु अवस्थातरपणुं तेना पोताना विषे प्रति समय थवु तेने द्रव्यत्व गुण कहे छे।

प्रमेयत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तु कोईना ज्ञाननो जाणवारूप विषय थई शके तेने प्रमेयत्व गुण कहे छे।

अगुरुलघुत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तु अन्य वस्तु रुपे, वा तेनो एक गुण अन्य गुण रुपे, न परिणमे, वा तेना सर्व समुदायरूप गुणो कदी पृथक्त्व रुपने न पामे, तेने अगुरुलघुत्व गुण कहे छे।

प्रदेशत्व

जे शक्तिना कारणथी वस्तुनो कोई पण प्रकारनो आकार अवश्य होवो तेने प्रदेशत्व गुण कहे छे।

आ प्रमाणे वस्तु मात्रना विषे षट सामान्य गुणो मुख्यपणे वर्ती रहेला होय छे, तेमा त्रीजा

द्रव्यत्व गुणनी शक्तिथी वस्तु मात्रनु परिणमन पोत पोताना विषे पोत पोताना कारणे स्वतन्त्रपणे प्रति समय थई रह्यु छे, अने तेथी जीव पुद्गल एवा कोई पण द्रव्यना परिणमनमां जीवनी ज्ञानादि शक्ति के अन्य व्यक्ति विशेषनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी। आवा प्रकारना वास्तविक बोधथी अजाणरुप जीवो अनादि काळथी पोते देहादि पर वस्तुना विषे पोतानु कर्तापणु मानी के कोई अन्य व्यक्ति विशेषने पोतानी वस्तुनो कर्ता ठेरावी वस्तुस्वतन्त्रतानुं खुन करी रह्यो छे, अने महा पाप पोषक एवी अनत ज्ञानीओनी आशातना पण त्या तेथी ज थाय छे।

प्रश्न—जीवनी उलटी समजथी वस्तु स्वतन्त्रतानुं खुन थाय ए स्वभावीक छे, पण तेथी ज्ञानीओनी आशातना शी रीते थाय ?

उत्तर– प्रथम तो जीवनी उलटी समज ए सुचवे छे के तेने सर्वज्ञना ज्ञान सामर्थ्यनो, अने तेना सिद्धातनो, पुर्ण विश्वास नथी अने तेथी तेणे सर्वज्ञना ज्ञानमां अने तेना सिद्धातमा वस्तु मात्र स्वतन्त्रपणे सौ पोत पोताना स्वभावमा वर्ती रही छे, अने तेनो कोई कर्ता नथी, ए वातनो स्वीकार तेना वास्तविक निर्णयपुर्वक पोताना ज्ञानथी कर्यो नथी। मतलब के अनादिथी वर्ती रहेली एवी पोतानी उलटी समजने हजु पण तेणे ते रुपे ज टकावी राखी छे, अने तेथी स्थुल दृष्टीए सर्वज्ञने अने सर्वज्ञना सिद्धातने मानवावो के तेना पर विश्वास होवानो दावो करवा छता तत्व दृष्टीए ते निमित द्वारा पोतानी उलटी समजनो परित्याग न थवाथी ते माननारुप के विश्वास होवारुप एवी जे वात ते एक मात्र वचकपणु छे, अने ते ज सर्वज्ञ देवनी के अनत ज्ञानीओनी आशातना छे—

प्रश्न —ते उलटी समजमा मुख्यपणे कई कई वातोनो समावेश थाय छे ?

उत्तर —ते निचे प्रमाणे छे—

१—देहादि पुद्गल द्रव्यमां, के तेनी स्वतन्त्र क्रियामा, जीवे आत्म बुद्धीनो के तेना स्वामित्व-पणानो कर्ता भाव पुर्वक आरोप करवो ते।

२—पुण्य पापरुप विकार जन्य भावोमा जीवे पोतानु स्वामित्वपणुं दृढ करवु अने पुण्यथी धर्म थाय ए मान्यताने वळगी रहेवु ते।

३—कोई पण जीव के जड पदार्थथी पोताने राग द्वेषनी उत्पत्तिनु सुख दुःखनु के कोई प्रकारनी हानी लाभनु कारण मानवु ते।

४—वस्तु मात्र एक बीजाना आश्रये रहेली छे, अने तेनो कोई कर्ता छे, एवी मिथ्या मान्यताने वश थई वस्तु स्वतन्त्रतानु खुन करवु ते।

५—देवादि त्रयात्मक तत्वोना असत्यार्थ बोधने मतार्थ मात्र पुर्वक वळगी रहेवु ते।

उपरोक्त बाबतोनो समावेश उलटी समजमा थाय छ, अने तत्व विचार ए तेना विलयनो लक्ष्यमा मुख्य उपाय छे, ते लक्ष उपरोक्त मुमारुने होवाथी ते तथारुप सद्विवेकने अवलम्बी ते द्वारा पोतानी आत्मार्थ साधनाने तत्वनी विशेष समाधानीपूर्वक विशेष दृढ करतो जाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये पुदगल क्रिया पराश्रीन होवा सम्बन्धीनी आशंका उत्पन्न करी ते सम्बन्धी पुन. प्रश्न करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये करे, पुनः प्रश्न विचारी एम।
पुदगल स्वाश्रीत होय तो, दीसे क्रिया जीवाश्रीत केम॥
इच्छाधिन रही जीवनी ते, वर्ते देहादि प्रत्यक्ष ए।
गुरुजी कहे ते कहुं आंय, सुण थई सन्मुख अंतर मांय॥१॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य विचारीने पुन: गुरुजी प्रत्ये एम प्रश्न करे छे, के हे भगवत! जो पुदगल द्रव्य स्वाश्रीत होय तो तेनी सर्व क्रिया जीवाश्रीत केम देखाय छे? जीवनी इच्छाना आधिन देहादि पुदगल द्रव्य रही ते सर्व शुभाशुभ क्रियामा तन्मयपणे वर्ती रह्या छे, ए प्रत्यक्ष जोवामा पण आवे छे। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे शीष्य ते हुं तने अहि समजावु छु, ते तुं अतरना विषे सन्मुख थई आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आजे सौ कोई जीवने पोतानो अतर्मुख दृष्टीना अभावे मात्र बाह्य जडनी क्रिया देखाय छे, अने तेथी सर्व कोईने ते क्रिया हुं करी शकुं छुं, अथवा जीवनी इच्छानुसार ते क्रिया थई शके छे, एवा प्रकारनी भ्रमात्मक बुद्धी रह्या करे छे। तथारुप दोषनु उपरोक्त साधकने विशेष प्रकारे परिक्षीणपणु बोधनी अतरंग सन्मुखताना बळे थवा छता पण पोतानी अल्पाशे रहेली आशंकाने श्री गुरुजी सन्मुख उपस्थित करी तेनी विशेष प्रकारे समाधानी इच्छे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

इच्छाधीन रही-जीवनी, करे क्रिया न पुदगल एक।
पण स्वाश्रीतपणे सदा, रही करे ते क्रिया अनेक॥

वस्तु मात्र विषे हे बाळ, प्रदेश भेद रह्यो त्रण काळ ।
तेथी क्रिया बे एकमां नोय, के करे न एक मली बे कोय ॥ ५ ॥

अन्वयार्थ—पुदगल द्रव्य जीवनी इच्छाना आधिन रही एक पण क्रिया करतुं नथी, पण सदा स्वाधीनपणे रही ते अनेक क्रिया करे छे । वस्तु मात्रना विषे हे बाळ ! त्रणे काळ प्रदेश भेद रहेलो छे, अने तेथी एक द्रव्यना विषे बे क्रिया होती नथी, के बे द्रव्य मलीने एक क्रिया उपजावता नथी, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ— देहादि पुदगल क्रिया जीव केम न करी शके ? ए प्रश्न मी कोई जीवने पोतानी विपर्यय बुद्धीना लीधे उत्पन्न थाय ए स्वभाविक छे, अने तेवा ज प्रकारनो प्रश्न उपरोक्त साधकनो पण छे, तेनी मर्यांग ममाधानी अर्थे अहिं जीव, पुदगलनी निमित नैमितिकरुप थती एवी परस्पर संबंध विशेषरुप क्रियानु चार भगनी पृथक्तापुर्वक स्पष्टीकरण करवामा आवे छे-।

(जीव पुदगलनी परस्पर निमित नैमितिक क्रियामां उभयनु स्वाधिनपणु)

१—जीवमा इच्छा जन्य विकल्प होय—अने ते समय पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता पण होय ।
२—जीवमा इच्छा जन्य विकल्प होय—पण ते समय पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता न होय ।
३—जीवमा इच्छा जन्य विकल्प न होय—पण ते समय पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता होय ।
४—जीवमा इच्छा जन्य विकल्प न होय—अने ते समय पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता पण न होय ।

स्पष्टीकरण

पहेला भंगमा जीवनो इच्छा जन्य विकल्प होवाना समये पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता होवाथी जीवनी इच्छानुसार देहादि बाह्य क्रिया थती जोवामा आवे छे, जेम के जीव्हा वडे शब्दोचार करवारुप, हस्त वडे लेवा मुकवारुप, कम्मर वडे उठवा बेसवारुप, पग वडे हरवा फरवारुप, विगेरे क्रिया थवी ते । बीजा भगमा जीवनो इच्छा जन्य विकल्प होवा छता ते समये पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता न होवाथी जीवनी इच्छानुसार देहादि बाह्य क्रिया थती जोवामा आवती नथी, जेम के कोई रोगादि कारण विशेषथी जीव्हा वडे शब्दोचार करवारुप, हस्त वडे लेवा मुकवारुप, कम्मर वडे उठवा बेसवारुप, पग वडे हरवा फरवारुप, विगेरे क्रियानुं अटकी जवु ते । त्रीजा भंगमा जीवने इच्छा जन्य विकल्प न होवा छता ते समये पुदगल कर्मनी उदय जन्य योग्यता होवाथी जीवनी

पारिणामीक भाव

उदय, उपशम, क्षयोपशम, के क्षय, एवा चारे भावोथी अने जीवनी उत्पाद व्ययरुप अपेक्षीत पर्यायथी रहीत एवा शुद्ध अने पुर्ण त्रीकाली द्रव्य गुण अने निर्पेक्ष पर्यायरुप ध्रुव स्व-भावमा सामान्यरुप एवा परम पारिणामीक भावनु त्रीकाळ एक रुपे एवु शुद्ध परिणमने वर्ती रह्यु छे ते।

आ प्रमाणे पचात्मक भावोनु स्वरुप छे, तेमा आदिना चार भावो ते पर्यायार्थीक नयथी छे, अने अतनो एक ते शुद्ध द्रव्यार्थीक नयथी जीव मात्रना स्वमा परिणामरुप छे। तयारुप भावोना पृथक पृथक भेदने विचारीए तो तेना अनुक्रमे–२-९-१८-२१–अने ३ एम एकंदर (५३) त्रेपन भेद थाय छे। तयारुप भावोमा आदिना बे भावो ते जीवना सम्यक्त्वादि भावोनी उपलब्धी समये ज क्रमे प्रतिहत अने अप्रतिहत एवां सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था विशेषने अवलब-वायी जीव अवस्थामा उपलब्धरुप थाय छे। त्रीजो भाव साधक दशामा जीवने निमितरुप होय छे। चोथो उदयिक भाव तेमा मुख्यतने करी मिथ्यात्व, ते जीवना सम्यक्त्वादि गुण विशेषनु निमित पामीने उदय निवृतिना हेतुरुप एवुं तेनु उपशमादि रुपे परिणमनु थाय छे, अने पाचमो पारिणामीक भाव ते जीवना निज स्वभाव परिणामरुप होवाथी आत्मार्थ साधकने ते त्रीकाळ एक रुप अवलबनभुत छे।

प्रश्न—उपरोक्त भावोमा आदिना बे भावो तो क्वचित एवा कोईक सन्मुखवर्ती साधकने ज उपलब्धरुप थई शकवा योग्य छे, तो पछी तेने आदिमां स्थान आपवानो शुं हेतु छे? अने ते भावोनी प्राप्तीनो वास्तवीक उपाय शु छे?

उत्तर—सम्यक्दर्शन रुपी धर्मनी शरुआत प्रथम औपशमीक भावथी ज थाय छे, अने तेनी पुर्णतामा नियमा क्षायिक भाव ज होय छे, अने तेथी तयारुप दृष्टीए एवा ते उभय भावोने आदि स्थान आपवामा आव्यु छे। तथारुप भावो पर्यायार्थीक नयथी क्षणीक अवस्थारुप होवाथी अने तेमा भेद विकल्पनु मुख्यपणु रहेवाथी तयारुप लक्षे ते भावोनी उपलब्धी थती नथी, पण तेना अभावरुप लक्षे एटले शुद्ध द्रव्यार्थीक नयथी अखंड ध्रुव स्वभावरुप एवा पारिणामीक भावने अवलबवाथी क्रमे करी ते भावोनी उपलब्धी थाय छे, अने ते ज तेनी प्राप्तीनो वास्तविक उपाय छे।

आ उपरथी एम समजवा योग्य छे के पर्यायार्थीक नयना विषयभुत एवा आदिना चारे भावो क्षणीक अवस्थारुप अने भेद विकल्पना उत्पादकरुप होवाथी तयारुप लक्षे सम्यग्दर्शन रुपी धर्मनी

उपलब्धी-अनंतकाळ प्रयत्न करवा छता-पण थती नथी, एटलु ज नहिं, पण, तथा प्रकारनो [illegible] पुरुषार्थ विपर्यय भावे पोषातो थी मुख्यपणे, ते उदयिक भावना बंध हेतुरूप थई, तेनी [illegible] पोषकरूप बने छे । मतलब के सम्यग्दर्शन रुपी-धर्मनी उपलब्धीमा मात्र एक शुद्ध एवा [illegible] भावनी ज अपेक्षा रहे छे, अने साधकनी प्राथमीक भुमीकामा औपशमीक भावनो [illegible] द्वारा ज थाय छे ।

उपरोक्त बोधनु सम्यक् भान आ त्रीजी अवस्थामा वर्तता एवा ते सुसाधकने [illegible] यनाथी ते तेनु विशेष प्रकारे चिंतवन स्वरुप लक्षे करे छे, अने ते द्वारा पोताना [illegible] प्रकारे स्व सन्मुख पण प्रेरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । [illegible] अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

> भाव विशुद्धी अंतरे, प्रगटे तेथी तेने [illegible]
> तेथी मुढत्व भावनो, नोय अंतर लेष [illegible]
> तेथी चमत्कारादि अन्य, जोई न आश्चर्य पामे [illegible]
> जाणे अंतरमां सौ जाल, बुद्धीनो एम लावी [illegible]

अन्वयार्थ—तेथी अहिं ते साधकना अंतर परिणामना विषे [illegible] प्रगटे छे, अने तेथी तेना अंतरना विषे मुढत्व भावनो प्रवेश लेश पण [illegible] मिथ्यादृष्टीना चमत्कार विगेरे जोई त्या ते बुद्धीनो ख्याल लावी [illegible] इंद्रजाळनो तमासो कहेता मायिक प्रपच छे, अने तेथी तेनु मन त्या [illegible] पामतु नथी, के ते तरफ आकर्षातु नथी, एम हे शीष्य तुं आ [illegible] श्रवण कर ।

विशेषार्थ—कोई पण मिथ्यादृष्टीना बाह्य चमत्कार [illegible] विकल्पनु उपस्थितपणुं थवु, के ते तरफ मननु आकर्षातु वे [illegible] सुचन करे छे, अर्थात ते जीवने तत्व संबंधी वास्तविक बोध [illegible] मुढत्व भावे प्रेरे छे। आवा प्रकारना दोष विशेषनु अभावपणु [illegible] एक तत्व विचारनी अपेक्षा रहे छे, अने ते तेनो वास्तविक [illegible] जेम जेम तथारुप तत्व विचारनी सन्मुखतामा पोतानी [illegible]

तेम दर्शनाचार विशुद्धीनु क्रमे क्रमे वर्द्धमानपणुं थई ते द्वारा तेना प्रकारना मुढत्व भावनुं महज अभावपणु थतु जाय छे। तथारुप बोध विशेषनुं वास्तविक परिणमन उपरोक्त एवा ते सुसाधकने होवाथी ते तेना प्रकारना मुढत्व भावने ते बोध विशेषना बळे वमी पोताना विपर्यात्मक रुचीना वलणने निज आत्मार्थ भावनी सन्मुखतामा प्रेरीत करे छे, अने ए ज तथारुप बोध विशेषना वास्तविक परिणमननुं फल छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

एम ते सन्मुख भावथी, वर्ते स्थिर करीने चित्त।
ते साथे बोधी भावना, भावे अतरमां ते नित्य॥
विशेप चित्त विषे वैराग, विशेषे विभावनो त्याग।
विशेषे होय भवनो खेद, विशेषे जाणे जग केद॥९॥

अन्वयार्थ— एम ते साधक सन्मुख भावथी चित्त स्थिरतापुर्वक वर्ते छे, अने ते साथे बोधी कहेतां शुद्ध सम्यग्दर्शन् प्राप्तीनी भावना पण ते नित्य अंतरना विषे भावे छे। वळी तेना चित्तना विषे विशेष प्रकारे वैराग, अने विशेष प्रकारे मिथ्यात्व जन्य एवा रागादि वा क्रोधादि विभाव भावोनो त्याग होय छे। वळी विशेष प्रकारे भवनो खेद, अने विशेष प्रकारे ते जगतना प्रपचने केद कहेता कारागृहरुप बधननी बेडीओ समान जाणे छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— सम्यग्दर्शन रुपी परम निधाननी प्राप्तीमा मुख्यपत्ते करी क्या क्या गुण विशेषनी अपेक्षा रहे छे, ते उपरोक्त साधकनी वर्ती रहेली एवी अतर सुविचार श्रेणी परथी आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाय तेवुं छे। प्रथम तो जेना अतरना विषे चित्त स्थिरता सन्मुख भावे वर्ते छे, अने ते मोह जन्य इच्छानुं विशेष प्रकारे परिक्षीणपणुं होवानुं सुचन करे छे, ते साथे निरंतर तेना अतरमा बोधी भावना सहज सन्मुख भावे वर्ती रही छे, अने ते पोताना विषे प्रगटेली एवी निज आत्मार्थ सन्मुखता तेनु विशेष प्रकारे सुचन करे छे, अने ते साथे तेना चित्तना विषे मुख्यपत्ते करी मिथ्यात्व जन्य एवा रागादि वा क्रोधादि विभाव भावो प्रत्ये विशेष प्रकारे वैराग, अने विशेष प्रकारे तेना त्यागमा उपयोगनु सन्मुखवर्तीपणु पण सम्यक योगे वर्ती रह्यु छे, अने ते विपर्यात्मक रुचीना पर जन्य वलण प्रत्ये पोतानी औदासीन वृति होवानुं सुचन करे छे, वळी ते साथे तेना अंतरना विषे विशेष प्रकारे भवनो

खेद वर्ते छे, अने ते सर्व प्रकारना भव भावनी आसक्षाना अभावरुप एवुं पोतानु नि शल्यात्मकपणु होवानु सुचन करे छे, अने ते साथे विशेष प्रकारे ते जगतना प्रपचने एटले कर्मोदय जन्य एवी समस्त औपाधिक भावरुप आकुळताने खेद कहेता काराग्रहरुप बधनी बेडीओ समान जाणे छे, अने ते स्वाधीन निराकुल परिणामरुप एवा पोताना वास्तविक सत सुखनो पोताने परमार्थ लक्ष होवानु सुचन करे छे।

आं प्रमाणे ते साधक अंतर सुविचार श्रेणीने अवलबी पोताना आत्मार्थ भावनी वर्द्धमानता अने विशेष प्रकारे सन्मुखता सम्यक योगे करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> एम परमार्थ दृष्टीने, करी मुख्य अतरमां तेह।
> वर्ते वृद्धीगत भावथी, टाळी सर्व संसारनो नेह॥
> शुभ प्रवृति विषे योग, ने त्या स्थिर करी उपयोग।
> थई ए त्रीजी अवस्थानी वात, हवे चोथी बोधु सुण भ्रात ॥१०॥

अन्वयार्थ—एम ते परमार्थ दृष्टीने एटले शुद्ध आत्मार्थ भावनी अतरग सन्मुखताने मुख्य करी, अने ते अर्थे शुभाचरण प्रवृतिना विषे मनादि योगने अने उपयोगने स्थिर करी त्या तथारुप लक्षे एटले निज आत्मार्थ भावनी वर्द्धमानतापुर्वक संसार जन्य भावो प्रत्येना नेहनो कहेता राग बधन टाळी ते वर्ते छे। अहिं सुधी त्रीजी अवस्थानी वात थई। हवे तने चोथी अवस्था बोधुं छु, ते हे भ्रात्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—परमार्थ दृष्टीनुं मुख्यपणुं ते मुख्यत्वे करी आत्मार्थ भावनो हयाति होवानु सुचन करे छे, अने तेथी ज्यां ज्या तथारुप दृष्टीनु मुख्यपणु होय छे, त्या त्या आत्मार्थ भावनी वर्द्धमानतापुर्वक तेना सन्मुखवर्ती साधनमा योग अने उपयोगनु प्रेरावापणु पण नियमा होय छे, अने संसार जन्य भावो प्रत्येना नेहनु कहेता पर तरफना राग बंधननु क्रमे क्रमे परिक्षीणपणुं पण त्या ज घटवा योग्य छे, अने ते उपरोक्त साधकनी वर्तमान एवी आ अवस्थाने अवलोक्ता सहज सिद्ध थई शकवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहि चोथी अवस्थाना बोध विशेनु आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

卐

(चोथी बोध अवस्था अधिकार)

चोथी अवस्थाना विषे, बोध दीपक ज्योति समान ।
तेथी सुविवेकनी अहिं, क्रमे वृद्धी विशेषे जाण ॥
तेथी विशेष प्रकारे नित्य, वांचनादिमां प्रेरी चित्त ।
अनुप्रेक्षा करे बोधनी ते, विचारी विशेषे ए ॥१॥

अन्वयार्थ—चोथी अवस्थाना विषे बोध दीपक ज्योति समान एटले जेम दीपकनी ज्योत शाष्टना अग्नि करता विशेष एवा स्थिर प्रकाश रुपे होवाथी काईक वधारे वखत टकी शके छे, तेम आत्म बोधनु अस्तित्व अहिं स्थुल रुपे होवा छता पण पुर्व अवस्था करता काईक विशेष स्थिर परिणामे टकी शके तेवु योग्यपणु तेना विषे होय छे, अने तेथी आत्मार्थ सद्विवेकनु अहिं तेने अनुक्रमे विशेष प्रकारे वृद्धीरुप परिणमन थवेलुं होय छे, एम तु जाण, अने तेथी अहिं ते विशेष प्रकारे पोताना चित्तने नित्य वाचनादि भावोमा प्रेरी तथारुप बोधनी अनुप्रेक्षा तेना विशेष विचारपुर्वक करे छे, एम हे शीष्य तुं आ बीज प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—स्थुल सुक्ष्म परिणमननी अपेक्षाए बोधना मुख्यत्वे करी बे प्रकार छे, स्थुल परिणमनमा सुक्ष्म ग्रन्थी भेदनु अभावपणुं होवाथी त्यां बोधनु ओघ प्रतितीपणुं गर्भीत शुद्धतापुर्वक होय छे. अने सुक्ष्म परिणमनमां तथारुप ग्रन्थी भेदनुं सद्भावपणुं होवाथी त्यां बोधनुं सम्यक प्रतितीपणु प्रगट शुद्धतापुर्वक होय छे । आम होवाथी आदिनी चार बोध अवस्था पैकीनी एवी अन्तिम चोथ अवस्थाना विषे वर्तता एवा ते सुसाधकनी जे काई वाचनादि प्रवृति होय छे, तेने तथारुप एवी ते सुक्ष्म ग्रंथी भेदना अभावे स्थुल बोध रुपे ज कहेवा योग्य छे ।

प्रश्न—तथा प्रकारनी वाचनादि प्रवृतिनो शु अनुक्रम छे ?

उत्तर—ते अनुक्रम निचे प्रमाणे छेः—

वांचना

आत्मार्थ प्रेरक सद्ग्रन्थादिनु आत्मार्थ लक्षे वाचन या ते लक्षे सद्गुरु बोधनु श्रवण करवु ते ।

पृच्छना

ते द्वारा मिथ्यात्व अन्य एवा संशयादि दोषोने परिहरवा के तथारूप बोधने निश्चयात्मक भावे दृढ करवा ते संबधी प्रश्न पुछवा ते।

परिवर्तना

प्रश्नोत्तर रूपे संप्राप्त थयेला एवा ते बोधनी विशेष प्रकारे पुनः पुनः विचारणा करवी ते।

अनुप्रेक्षा

विचारेला बोधनु आत्म परिणमन थवा अर्थे तेनु निरंतर चिंतवन करवु ते।

आ प्रमाणे वाचनादि प्रवृत्तिनो अनुक्रम छे, ते अनुसार उपरोक्त साधकनी थयेली के थती एवी ते प्रवृत्ति के बोध चिंतवनरूप अनुप्रेक्षा ते यथार्थरूप होवा छता पण सुक्ष्म अन्थी भेदना अभावे तेने स्थुल रूपे कहेवा योग्य छे, अने तेमा आदिनी चार अवस्थानो समावेश थई जाय छे, ते पछीनो स्थुल बोध परिणमनरूप एवी आ अन्तिम बोध अवस्थाना विषे वर्तता एवा उपरोक्त साधकनी निर्मल एवी आत्मार्थ सन्मुखता तरफ दृष्टी प्रेरी विचारीए तो तेने तथा प्रकारना सद्विवेकरूप विशेष एवु दृढीरूप परिणमन अहिं उपरनरूप थवाथी ते विशेष प्रकारे पोताना चित्तने नित्य वाचनादि भावोमां प्रेरी तथारूप बोधनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा विशेष एवी आत्मार्थ सन्मुखतापुर्वक करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> अनुप्रेक्षा करी अतरे, श्रद्धे एम स्वरुपने तेह।
> ज्ञानादि उपयोगमां, रह्यु जाणवादिपणुं जेह॥
> द्रव्य सामान्यथी प्रकाश ते, स्फुरे शक्ति विशेषे ए।
> स्व पर ज्ञायक दर्शक नित्य, स्वाश्रीत पद ते मारुं खचीत॥२॥

अन्वयार्थ—तथा प्रकारनी अनुप्रेक्षा अतरना विषे करी अहिं ते स्वरुप साधक जीव ते पोताना स्वरूपनी एवी श्रद्धान करे छे, के ज्ञान दर्शनोपयोगमा जे जोवा जाणवापणुं रह्युं छे, ते प्रकाशरूप शक्ति विशेषनु स्फुरवु मात्र एक द्रव्य सामान्यथी एटले सामन्यरुप एवा द्रव्य स्वभावथी प्रति समय तेनुं अवस्थातरपणु थईने थाय छे, ते स्व पर ज्ञायक अने दर्शकरूप एवु जे स्वाश्रीतपणे

टेलु अविनाशी पद ते रचीत करीने मारुं पद कहेता ते स्वरुपे हुं छुं एम स्वरुप प्रतितीनुं ते विशेष प्रकारे दृढत्वपणु करे छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरूप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेपार्थ-आत्मा ए अनत धर्मात्मक वस्तु होवाथी तेमा अनत गुणो रहेला छे, अने तेथी तेने ज्ञानादि गुण समुदायनो धारक एवा गुणी आत्माना नामथी ओळखवामा आवे छे। अहिं गुण अने गुणीना परमार्थने विचारीए तो जेम अग्नि अने अग्निनी उष्णता एवा ते उभयरुप गुण गुणीनु अभिन्नपणु होवाथी अग्नि पोताना उष्ण गुण वडे काष्टादिने बाळवानु कार्य करी शके छे, तेम गुणी एवा आत्मा साथे ज्ञान दर्शन गुणनु अभिन्नपणुं होवाथी आत्मा पोताना एवा ते उभय गुणो वटे वस्तु मात्रने जोवा जाणवानु कार्य करी शके छे।

आ उपरथी समजाशे के अग्नि पोताना उष्ण गुण विना, जेम काष्टादिने बाळवानु कार्य करी शके नहिं, अने उष्ण गुण गुणी एवा अग्निना आश्रय विना रही शके नहिं, तेम गुणी एवो जे आत्मा, ते पोताना ज्ञानादि गुण विना, वस्तुने जोवा जाणवानु कार्य करी शके नहिं, अने ज्ञानादि गुण गुणी एवा आत्माना आश्रय विना रही शके नहिं; आम वस्तु स्थिति होवाथी बनेनुं अभिन्नपणुं प्रदेश भेद रहीत होवानु स्वाभावीक ज सिद्ध थाय छे, अने तेम होवाथी सामान्यरुप एवो जे गुणी आत्मा ते पोताना ज्ञानादि गुण वडे तथारुप अवस्था विशेष रुपे परिणमी वस्तु मात्रने जोवा जाणवानु कार्य परनी अपेक्षा रहीत स्वाभावीक ज करी शके छे, एम वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य छे।

आ प्रमाणे उपरोक्त साधक वास्तविक एवी तत्व मिमासाना बळे बोधनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा करी जीवनो जोवा जाणवारुप शक्तिनु स्वाधीन परिणमन होवानु विशेष प्रकारे दृढत्वपणु स्वरुप प्रतितीनी विशेष वर्द्धमानतापुर्वक करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहवानो परमार्थ छे। हवे अहि तथारुप विषयने मुख्य करी शीष्य गुरुजी प्रत्ये आत्मा परनी अपेक्षा रहीत जोवा जाणवारुप कार्य शी रीते करी शके ते संबंधी प्रश्न उपस्थित करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहि, पुछे प्रश्न करी बहु मान।
जोवा जाणवाना विषे, दीसे इन्द्रिय पांच प्रधान॥
छतां अपेक्षा परनी नोय, शु हेतु ए बोध विशेषनो होय।
गुरुजी कहे समजावुं ते, सुण तु सन्मुख भावे ए॥ ३॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये तेमनु बहुमान करी प्रश्न करे छे के हे भगवत ! जीवनी जोवा जाणवारुप क्रियाना विषे पाच इंद्रियो प्रधानपणे जोवामां आवे छे, तेम छता ते परनी अपेक्षा रहीत जोवा जाणवानुं कार्य करी शके छे, एम आ बोध विशेष निरुपणनु अहिं शु प्रयोजन छे ? ते मने कृपा करी समजावो। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के ते हु तने समजावु छुं, ते हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—अनादि काळथी आ जीवनु स्वभाव विमुख परिणमन होवाथी तेने मात्र इंद्रिय ज्ञान छे, अने तेथी ते पोतानी जोवा जाणवारुप क्रियात्मक शक्तिनो सर्व आधार पण तेने अवलबन भुत होवानु माने छे, अने ते मान्यताने वश थई पोते वस्तु स्वभावने पराश्रीत होवानु स्वीकारे छे, अने ते द्वारा परना कर्ता कर्मनुं स्वामित्वपणु ते पोताना विषे दृढ करी स्व पर एवी वस्तु मात्रनी स्वतन्त्र शक्तिनु लुप्त करे छे। आ वातनी अतर्मुख विचारणा तथा प्रकारना बोध श्रवणथी उपरोक्त मुमाक्षने थतां, ते तथारुप बोध विशेषनी सर्वांग समाधानी अर्थे गुरुजीने विनय पुर्वक प्रश्न करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

परिणमन सौ वस्तुनु, रह्यु स्वाश्रीत सर्व प्रकार।
तेथी जोवा जाणवा विषे, पराश्रीतपणु नोंथ धार॥
तेथी अपेक्षा परनी नोय, पण ज्ञानादि स्वनी होय।
न तेथी इंद्रियो प्रधान, पण ज्ञानादि एम तु जाण॥४॥

अन्वयार्थ—वस्तु मात्रना परिणमनमा सर्व प्रकारे स्वाश्रीतपणु रहेलु छे, अने तेथी जीवनी जोवा जाणवारुप क्रियाना विषे कोई पण प्रकारे पराश्रीतपणु न होय, एम तु धार, अने तेथी तथारुप जोवा जाणवारुप क्रियाना विषे परनी अपेक्षा रहेती नथी, पण ज्ञानादि स्व गुणनी ज अपेक्षा रहे छे, अने तेथी त्या इंन्द्रियोनु प्रधानपणु नहिं, पण ज्ञानादि गुण विशेषनु ज छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—वस्तु स्वभाव सर्वथा निर्पेक्ष होवाथी तेना स्वतन्त्र परिणमनमा के वस्तु मात्रने जोवा जाणवारुप एवी जीवनी कार्य प्रवृतिमा परनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी, अने तेथी तेना कर्ता कर्मनु के कार्य कारण भावनु भिन्नत्वपणु पण होतु नथी। आम वस्तु स्थिति होवाथी

जीवनुं जोवा जाणवारुप थतु एवु जे ज्ञानादि गुण विशेष परिणमन तेनुं कारण निमित, इंन्द्रिय के विकल्प नथी, पण सामान्य रुप एवो जे पोतानो वस्तु स्वभाव ते ज तेनु मुळ कारण छे। तथारुप वस्तु स्वभावनु जीवने अबोधपणुं होवाथी अने ते अबोधपणाना लीधे जीवनो एकांत पर लक्ष रहेवाथी, ते पोतानु जोवा जाणवारुप थतु एवु जे ज्ञानादि गुण विशेष परिणमन तेनो आरोप एकांत निमित्त, इंद्रिय, के पोताना राग जन्य विकल्प पर करे छे, अने ते द्वारा पोताने तथारुप ज्ञानादिनी प्राप्ती थई एम पोतानी मती मुढताथी माने छे। आवा प्रकारनी विपर्यात्मक मान्यताथी ग्रस्त जीवो उपरोक्त बोधने अतर्मुख लक्षे विचारशे तो स्पष्ट समजाशे के वस्तु मात्रना परिणमनमा सर्व प्रकारे स्वाधीनपणुं होवाथी जीवनी जोवा जाणवारुप थती क्रियामा परनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी, पण ज्ञानादि स्व गुणनी ज अपेक्षा रहे छे, अने तेथी तथारुप क्रियाना विषे इंद्रियोनु प्रधानपणु नहिं, पण ज्ञानादि गुण विशेषनु ज छे, एम तत्व दृष्टीए समजवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य तथारुप बोधनी अंतर विचारणा करी तेनी विशेष समाधानी अर्थे पुनः गुरुजीने कईक युक्तिपुर्वक पुछे छे।

शीष्य गुरुजीने कहे, बोध विचारी अतर्मुख।
जोवा जाणवाना विषे, कहीए ज्ञानादि शक्ति मुख्य ॥
तो त्यां प्रश्न उपस्थित होय, इंद्रिय वण जाणे नहिं कोय।
गुरुजी कहे समजावुं ते, सुण तुं बोध विशेषे ए ॥५॥

अन्वयार्थ— अहिं शीष्य तथारुप बोधने अंतर्मुख लक्षे विचारी गुरुजीने कहे छे के हे भगवत ! जीवनी जोवा जाणवारुप क्रियाना विषे जो ज्ञानादि शक्तिनु मुख्यपणु कहीए तो त्या पुनः प्रश्न उपस्थित थाय छे के तथारुप क्रिया इंद्रिय विना तो कोई जीव करी शकतो नथी, तो पछी ते संबधमा अहिं शु समजवु, ते मने कृपा करी कहो। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के ते हुं तने विशेष रुपे समजावुं छुं ते हे शीष्य तुं आ जीव प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आजे सौ कोई जीवो वस्तु बोधना अभावे पोतानी जोवा जाणवारुप क्रिया इंद्रिय द्वारा थती होवानुं माने छे, अने ते अनुसार तेनुं मुख्यपणु पण विशेष दृढतापुर्वक स्वीकारे छे। आवा प्रकारनी विपर्यात्मक बुद्धीनो अंशे पण परमार्थ लक्ष उपरोक्त सुसाधकने बोधनी अतर्मुख विचारणाना बळे थतां, ते तेनी विशेष प्रकारे अतर मिमांसा करे छे, अने तेना वास्तविक निर्णयना

हेतु लक्षने अवलंबी पुन. सद्गुरु सन्मुख ते सबधी प्रश्न उपस्थित करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

वस्तु विषयनी योग्यता, होय ज्ञानादिमा जे प्रकार।
इंद्रिय अनुकूल होय त्यां, एम निश्चय तु अतर धार॥
तेथी मुख्यता तेनी नोय, पण ज्ञानादि शक्तिनी होय।
ते स्व योग्यतानी अनुसार, वस्तु विषय करे एम धार॥६॥

अन्वयार्थ—ज्ञानादि गुण विशेष परिणमनमा वस्तु विषयनी योग्यता जे प्रकारनी होय छे, ते प्रकारनी त्यां अनुकूल इंद्रियो निमित रुपे वर्तती होय छे, एम तु निश्चय अतरना विषे धार, अने तेथी वस्तु विषयमा एटले जीवनी जोवा जाणवारुप क्रियामा इंद्रियोनुं मुख्यपणु नहिं पण ज्ञानादि शक्ति विशेषनु मुख्यपणुं होय छे, अने ते मुख्यतापूर्वक ते पोतानी योग्यतानुसार वस्तु विषय करे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अतरना विषे धार।

विशेपार्थ—ज्या ज्या ज्ञानादि गुण विशेष परिणमनमा वस्तु विषयनो योग्यता जे जे प्रकारनी होय छे, त्या त्या ते ते प्रकारनी अनुकूल इंद्रियो तेना पोताना कारणे निमित्त रुपे होवी अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, ए एक स्वभाविक नियम छे, अने तेथी जीवनी जोवा जाणवा रुप कार्य प्रवृतिनो सर्व आधार इंद्रियो पर नहिं, पण मात्र पोताना ज्ञानादि गुण विशेष परिणमन पर ज रहेलो छे, अने तेथी निगोदथी माडी सन्नी पचेन्द्रिय सुधीना सर्व जीवो पोत पोतानी तथारुप गुण विशेष परिणमननी योग्यतानुसार वस्तुने जोवा जाणवारुप प्रवृति पोत पोताना सामान्यरुप स्वभावने अवलबीने ज करे छे।

आ उपरथी समजाशे के जीवनो जोवा जाणवारुप कार्य प्रवृतिमा इंद्रियोनु मुख्यपणु नहिं, पण मात्र पोताना ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननु ज मुख्यपणुं छे, अने तेथी ते पोतानी योग्यतानुसार तथारुप प्रवृति सामान्यरुप एवा पोताना वस्तु स्वभावने अवलबीत थई करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजीने पुन ते सबधी कठिन युक्तिपुर्वक पुछे छे।

शीष्य कहे वस्तु बोधनो, करे विचार दीसे छे एम।
छतां जिनागमना विषे, मुख्य इन्द्रियो भाखे ते केम॥

ते बोध विशेपनो हेतु शु, ते अहिं पुछुं आपने हु ।
गुरुजी कहे ते कहु आंय, सुण थई सन्मुख अतर मांय ॥७॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये कहे छे के हे भगवत ! वस्तु बोधने विचारता आपनो उपदेश मने यथार्थरुप भासे छे छतां जीनागमना विषे जीवनी तथारुप थती क्रियामा इंद्रियो मुख्यरुप होवानु ते केम दर्शावे छे ? ते बोध विशेपनो शुं हेतु होवो जाईए ते हु आपने अहिं पुछु छुं । अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे शीष्य ते हु तने अहिं समजावु छु, ते तु अतरना विषे सन्मुख थई आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेपार्थ—आजे सौ कोई जैनावलंबनी जीवो वस्तु बोधना अभावे, जोवा जाणवारुप जीवनी थती क्रियामा इंद्रियोनु ज मुख्यपणु माने छे, अने ते सवधी जीनागमना विषे निगोदथी मांडी सज्ञी पंचेन्द्रिय सुधीना सर्व समारी जीवो इन्द्रियो द्वारा जोवा जाणवारुप क्रिया करे छे, एवा तेना व्यवहार नयना उपचाररुप कथनने सत्यार्थरुप होवानु स्वीकारी पोतानी तथारुप मान्यताने विशेप प्रकारे दृढ पण करे छे । आवा प्रकारनी विपर्यात्मक मान्यतानो विशेप प्रकारे परिहार उपरोक्त साधकने बोधनी विशेप सन्मुखताना बळे थता, ते विशेप प्रकारे उपयोगनी अतर सन्मुखतापुर्वक तथारुप वस्तु बोधना विचारने अवलबी पोतानी विशेप समाधानी अर्थे जीनागम दृष्टीने मुख्य करी पुनः श्री सद्गुरु सन्मुख ते सवधी प्रश्न उपस्थित करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

निमिताश्रीत ते रह्यु, मात्र उपचाररुप कथन ।
वस्तु विचारतां अतरे, तने समजाशे ते मन ॥
मात्र निमितनुं थवा ज्ञान, ते बोध विशेपनो हेतु जाण ।
ते वण उद्देश अन्य न कोय, एवो आशय जिननो होय ॥८॥

अन्वयार्थ—जीनागमनो ते उपदेश निमिताश्रीत होवाथी मात्र ते उपचाररुप कथन छे, एम अंतरना विषे वस्तु विचार करवाथी तने ते मनना विषे समजाशे । तथारुप बोध विशेपनो हेतु मात्र जीवने निमितनुं ज्ञान कराववा अर्थे छे, ते विना अन्य कोई उद्देश ते बोध निरुपणनो नथी, अने ए ज मुख्यपणे श्री जीननो आशय कहेता अभिप्राय छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जीनागमना विषे निगोदथी माडी सज्ञी पंचेन्द्रिय सुधीना सर्व संसारी जीवो ईन्द्रियो द्वारा जोवा जाणवारुप क्रिया करे छे, एम कहेवानु प्रयोजन मात्र निमितनु ज्ञान करावा अर्थे छे, पण वस्तु अपेक्षाए नथी, कारण के वस्तु तो सामान्य विशेषात्मक एवी उभय धर्मात्मक छे, अने तेम होवाथी सामान्यरुप एवा वस्तु स्वभावमांथी ज्ञानादि गुण विशेष परिणमन प्रति समय असंख्यातर थई ते द्वारा ते वस्तु मात्रने जोवा जाणवारुप कार्य पोतानी योग्यतानुसार करी शके छे, तेना बदले जीव तथारुप क्रिया इन्द्रियो द्वारा करे छे एम एकांत वस्तु स्वभावनी मुढताथी मानवामा आवे तो, त्या वस्तु स्वभावनु अस्तित्व कोई पण प्रकारे टकी शकतु नथी, कारण के तेवी मान्यताने अवलंबनार जीवे, पोताना ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननो ज अस्वीकार कर्यो, अने तेना अस्वीकारमा पोताना सामान्यरुप एवा वस्तु स्वभावनो अस्वीकार त्या स्वभावीक ज थई जाय छे। आम वस्तु स्थिति होवानु आत्मार्थी जीवे विचारी जीनागमना विषे प्रतिपादन करेला एवा ते व्यवहार नयना उपचार-रुप वचनने, उपचाररुप गणी, पोतानी आज पर्यंतनी विपर्यासक मान्यतानो सर्व प्रकारे परिहार करवा सम्यक योगे उद्यमवंत थवु, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य तथारुप बोधनी अंतर विचारणा करी तेनी विशेष समाधानी अर्थे पुन. गुरुजीने कईक युक्ति पुर्वक पुछे छे। -

शीष्य कहे विशेष रुप, ज्ञानादिनो भले अस्वीकार।
तो पण ते सामान्यथी, अस्ति रुपे सर्व प्रकार ॥
ते साथे जोवा जाणवादि होय, ईंद्रियो द्वारा न विरोध कोय।
गुरुजी कहे समजावुं ते, शु विरोध विचार अंतर ए ॥ ९ ॥

अन्वयार्थ— अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये कहे छे के हे भगवंत! ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननो भले अस्वीकार करवामा आवे तो पण सामान्यरुप स्वभावथी तो ते सर्व प्रकारे त्रीकाळ अस्ति रुपे रही शके छे, अने ते साथे जोवा जाणवारुप क्रिया पण ईंद्रियो द्वारा थई शके छे, अने तत्व दृष्टीए तेमा कोई पण प्रकारनो विरोध पण आवी शकतो नथी। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के ते मान्यतामा शुं विरोध आवे छे, ते तने अहिं समजावुं छुं, ते हे शीष्य तु आ जीन प्रवचन-रुप बोधना परमार्थने श्रवण करी तेने अंतरना विषे विचार।

विशेषार्थ—उपरोक्त साधक केवा प्रकारे बोधनी अंतर्मुख विचारणाने अवलंबीत थाय छे, अने ते द्वारा युक्ति विशेषमा उपयोगने प्रेरी केवा प्रकारे गुरुजी समक्ष प्रश्न उपस्थित करे, ते

ते वात तत्व शोधक जीवने विशेष प्रकारे विचारवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारे तत्व बोधनी निःशक प्रतिती थवा अर्थे विशेष प्रकारे युक्ति विशेषने उपस्थित करी तेनी तथा प्रकारे एटले निज आत्मार्थ लक्षे प्रत्यक्ष एवा कोई बोध दाताना समीपवर्ती संगनी सन्मुखता पुर्वक सर्वाङ्ग समाधानीनो विजयताने प्राप्त करवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहि तेना अनुसंधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

ज्ञानादि विशेषनो, थतां अंतर अस्वीकार।
ज्ञानादि सामान्य त्यां, टके केम ते मन विचार॥
नास्ति अंशनी वर्ते ज्यां, नियमा अंशी नोय त्यां।
अंश ने अंशी तेथी साथ, वस्तुनो जाण ए परमार्थ॥ १०

अन्वयार्थ—ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननो अंतरना विषे अस्वीकार थता त्यां ज्ञानादि रुप एवा सामान्य स्वभावनु अस्तित्व शी रीते टकी शके, ते तु मनना विषे विचार। ज्या विशेषरुप एवा वस्तु स्वभावना अंशनु नास्तिपणुं वर्ते छे, त्यां वस्तु सामान्यरुप एवा अंशीनु अस्तिपणु नियमा होतु नथी, अने तेथी अंशने अंशी त्रीकाळ अभिन्न स्वरुपे साथमां ज होय एवो वस्तुनो परमार्थ हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—वस्तु सामान्य विशेषात्मक होवाथी ते उभय धर्मनु अस्तित्व तेमा स्वभावीक ज रहेलु छे, अने तेथी ज्ञानादि गुण समुदायनो धारक सामान्यरुप एवो जे गुणी आत्मा ते अंशीनुं अंश रुपे एटले ज्ञानादि गुण अवस्था विशेष रुपे प्रति समय परिणमवु ए तेनो स्वभावीक नियम छे, अने तेवी निर्विशेष सामान्य ए ज प्रथम तो मर्कटना सिंग समान अभावरुप ठरे छे। मतलब के विशेष विना सामान्य अने सामान्य विना विशेष कोई पण प्रकारे होतु नथी। आम वस्तु स्थिति होवाथी अहि महत्वनो प्रश्न ए ज उपस्थित थाय छे के जे समये जीवे इंद्रियो द्वारा जोवा जाणवानुं कार्य कर्यु ते समये सामान्यरुप एवा ज्ञानादिए शुं कार्य कर्युं? जो काई न कर्यु एम मानवामा आवे तो तेनो अर्थ उपर कह्या प्रमाणे निर्विशेष सामान्य ते मर्कटना सिंग समान अभावरुप ठर्यु, अने जो ते सामान्य ज्ञानादिए पोताना गुण विशेष परिणमन द्वारा तथारुप एवु ते जोवा जाणवारुप कार्य कर्युं, एम पोताना ज्ञानादिरुप एवा सामान्य वस्तु स्वभावने अवलंबीने मानवामा आवे तो जीवे इंद्रियो द्वारा जोवा जाणवारुप कार्य कर्यु के करे छे, ए मिथ्या मान्यतानो अहिं सर्व प्रकारे परिहार थयो के

आ उपरथी स्पष्ट समजाशे के जीवनी ज्ञानादि शक्ति, अने इंद्रियो, ए बने पृथक्रूप अने स्वाधिन छे। ज्ञानादि शक्ति चैतन्य परिणामरुप होवाथी वस्तुमात्रने जोवा जाणवारुप एवी क्रियात्मक प्रवृति तथारुप शक्तिना बळे तेमा स्वभाविक ज रहेली छे, अने इंद्रियो जड परिणामरुप होवाथी तमा तथारुप शक्तिनु अभावपणुं होवुं ए सहज अने स्वभाविक छे। आम वस्तु स्थिति होवाथी एकेंद्रियथी मंडी पचेंद्रिय सुधीना जीवोमा जेवा प्रकारनी ज्ञानादि गुण विशेष परिणमननी योग्यतारुप विकासनी उपलब्धी होय छे, तेवा प्रकारनु त्या निमितभुत इंद्रियोनुं उपस्थितपणु तेना पोताना कारणे स्वभाविक ज होय छे। आवा प्रकारना वस्तु निर्णयपुर्वक स्व पर स्वरुपनु भेद विज्ञान करवु एटले ज्ञानादि गुण विकासना कारणे इंद्रियो, के इंद्रियोना कारणे ज्ञानादि गुण विकास नहि, पण बनेनु परिणमन पोत पोताना कारणे पोत पोताना स्वतन्त्र स्वभावने अवलंबी थतु होवानु सम्यक प्रकारे अवधारवु, अने ते अवधारपुर्वक बनेना निमित नैमितिक संबधनु ज्ञान पोताना सामान्य स्वभावने अवलबीन थई करवुं ते ज सन्मुख दृष्टीए अवधार थयेला वास्तविक एवा आ वस्तु निर्णयनु फल छे।

आ प्रमाणे उपरोक्त साधकना सर्व उपस्थित प्रश्नोनी सर्वांग समाधानी थता ते पोताना सर्व अभिप्राय जन्य दोषोना परिहारपुर्वक विशेष प्रकारे आत्मार्थ सन्मुखता दर्शन विशुद्धीपुर्वक करे छे एम उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तथारुप लक्षे साधकनी साधनात्मक प्रवृति सबंधी आगळ निरुपण करवमा आवे छे।

ते लक्षे विशेषे अहि, करे स्थिर मने ते ध्यान।
अथवा स्वाध्यायना विषे, प्रेरी लक्ष करे दृढ भान॥
पर्याय दृष्टी तेथी जांय, क्रमे निवृते अतर मांय।
शुद्ध द्रव्यात्मक लक्षे एम, ध्येय स्थिर करीने वर्ते तेम॥११॥

अन्वयार्थ—तथारुप लक्षे अहिं ते साधक मनने विशेष प्रकारे स्थिर करीने स्वरुप ध्यान करे छे, अथवा तो स्वाध्यायना विषे लक्षने प्रेरी पोते पोता संबंधीनु दृढ भान नक्कि करे छे, अने तेथी अहिं पर्याय जन्य दृष्टी ते अतरना विषे क्रमे करी निवृतरुप थती जाय छे। आ प्रमाणे ते शुद्ध द्रव्यात्मक लक्षे पोतानु ध्येय स्थिर करीने तथा प्रकारे वर्ते छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जेम जेम उपरोक्त साधकने बोधनी अतर्मुख विचारणाना बळे वस्तुनो परमार्थ

होवानु विशेष प्रकारे दृढ करी ज्ञातारुप वस्तु स्वभावना लक्षे पोते विशेष प्रकारे स्वरुप चिंतवनमा उपयोगने प्रेरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये भेद विज्ञानने सम्यग्दर्शन कही शकाय के केम ? ते संबंधी प्रश्न करे छे।

अहिं शीष्य विचारी अंतरे, पुछे प्रश्न गुरुजीने एक।
स्व परनो होय आम ज्या, ज्ञेय ज्ञायकरुप विवेक॥
तो तेने सम्यग्दर्शन केम, न कहीए पुछु आपने एम।
गुरुजी कहे ते कहुँ अहिं, सुण तु अंतर लक्षे रही ॥१४॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य अंतरना विषे विचार करीने गुरुजीने एक प्रश्न पुछे छे, के हे भगवत ! आ प्रमाणे ज्या स्व पर स्वरुपनो ज्ञेय ज्ञायकरुप सद्‌विवेक वर्तती होय तो तेने सम्यग्दर्शन केम न कहीए ? एम हु आपने पुछु छुं। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे शीष्य ते हु तने अहिं कहु छुं ते तु अंतर लक्ष पुर्वक आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—भेद विज्ञान अने सम्यग्दर्शन ए उभयना विषे रहेला भेदतत्वनुं ज्या सुधी जीवने वास्तविक बोध परिणमन थतु नथी, के होतु नथी, त्या सुधी भेद विज्ञानने सम्यग्दर्शन कही शकाय के केम ? एवा शंशयात्मक भाव विशेषमा उपयोगनु प्रेरावु थाय, ए स्वभावीक छे। आवा प्रकारनी शंशयात्मक बुद्धीनो विशेष प्रकारे परिहार उपरोक्त सुमाधरने बोधनी अंतर विचारणाना बळे थवा छतां, ते तथारुप बोध विशेषनी सर्वांग समाधानीना हेतु लक्षने अवलबी श्री गुरुजी सन्मुख तथारुप प्रश्न उपस्थित करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

ज्ञेय ज्ञायकरुप विकल्प ते, भेद विज्ञानरुप व्यवहार।
तेथी ते सम्यक्त्व नहिं, पण स्व पर विवेक धार॥
भेद विज्ञाननो विषय ते, स्व परने पृथक जाणे ए।
सम्यक्त्वनो विषय एक होय, अखंड अभेद जे वस्तु जोय ॥१५॥

अन्वयार्थ—ज्या ज्ञेय ज्ञायकरुप विकल्पनु मुख्यपणु वर्ते छे, तेने भेद विज्ञानरुप व्यवहार ए नामथी संबोधवा योग्य छे, अने तेथी तेने सम्यग्दर्शन नहि पण स्व पर वस्तु विवेक अंतर

साधन कहेरा योग्य छे, एम तु धार, अने ते भेद विज्ञाननो विषय होवाथी ते अनुसार ते स्व परने पृथक रुपे जाणे छे, अने सम्यग्दर्शननो विषय अखंड अभेद एवा वस्तु स्वभावने ज जे जुए छे, ते ज एक मात्र छे, एम हे शीष्य तु आ जीव प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—भेद विज्ञान अने सम्यग्दर्शन ए उभयना भेदत्वने सम्यक प्रकारे जाण्या विना, कोई पण साधक जीव शुद्ध सम्यग्दर्शनने पामी शकतो नथी, एटले अहिं प्रथम ते उभयना भेदत्वनु निरुपण करवामां आवे छे ।

१—भेद विज्ञान ए शुद्ध साध्यनी अतर सन्मुखताना हेतुरुप एवुं शुभोपयोग मिश्र ज्ञान मुख्य अतर साधन छे त्यारे सम्यग्दर्शन ए शुद्ध साध्यना एकत्व परिणाम रुपे उत्पन्न थयेल एवी स्वरुपनी सम्यक प्रतितीरुप छे ।

२—भेद विज्ञानमा स्व पर द्रव्यनी के स्व द्रव्याश्रीत रहेला एवा शुभाशुभ विकल्प जन्य भावनी पृथक भेदरुप विचारणानु मुख्यपणु छे, त्यारे सम्यग्दर्शनमा अखंड अभेद एवा सामान्यरुप वस्तु स्वभावना अवलवनभुत एवी द्रव्य दृष्टीनु ज मुख्यपणु छे ।

३—भेद विज्ञाननो विषय स्व पर ज्ञेयोने जाणवारुप के स्व पर वस्तु विचाररुप होवाथी त्या निमित पर्याय के भेदरुप व्यवहारनी अपेक्षा रहे छे, त्यारे सम्यग्दर्शननो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवाथी त्या निमित, पर्याय, के भेदरुप व्यवहारनी अपेक्षानु सर्वथा अभावपणु वर्ते छे ।

४—भेद विज्ञाननो विषय स्व पर ज्ञेयोने पृथक रुपे के स्व द्रव्याश्रीत पर्याय जन्य मलीनताने मलीन रुपे जाणतो होवाथी त्या तथारुप मलीन पर्यायने स्व ज्ञेय रुपे स्वीकारवानी अपेक्षा रहे छे, त्यारे सम्यग्दर्शननो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवाथी ते पोतानी निर्मल पर्यायना पण अस्वीकारपुर्वक मात्र एक वस्तु सामान्यने अभेद रुपे ग्रहण करवानी जे अपेक्षाने अवलंबे छे ।

५—भेद विज्ञान मुख्यपणे शुभाशुभ भावोने पृथक रुपे स्वीकारवा छता त्या गौणपणे शुभोपयोगरुप विकार जन्य पर्यायनु अस्तित्व रहेवाथी ते दोष जन्य मलीनतानु ग्रथी भेदरुप अभावपणु स्व लक्षे कर्या विना, ते अभेदमा अतर्लीन थई शकवाने समर्थ नथी, त्यारे सम्यग्दर्शन मुख्यपणे निर्विकार पर्याय रुपे ज उत्पन्नरुप होवाथी ते कायम अभेदमा ज अतर्लीनपणे टकीने रहे छे ।

आ प्रमाणे भेद विज्ञान अने सम्यग्दर्शन ए उभयनुं भेदत्वपणु छे, तेने जे सम्यक प्रकारे जाणे छे, ते ज सम्यग्दर्शनना विषयभुत एवा पोताना अखंड अभेद शुद्ध आत्म द्रव्य स्वभावना

एकत्वने अवलंबीत थई अने त्यां तयारुप सन्मुखवर्ती पुरुषार्थना बळे भेद विज्ञानरुप एवा ते अत
साधनना लक्षनु क्रमे क्रमे मंद परिणामीपणुं करी स्वभाव एकत्वरुप एवी अभेद स्थिरताने के शुद्ध
सम्यग्दर्शनने ग्रंथी भेदपुर्वक पामे छे ।

आवा प्रकारनुं बोध विशेष परिणमन जे कोई साधक जीवने वर्ते छे, ते ज भेद विज्ञानने मा
एक शुभ विकल्परुप (शुभ विकल्प सयुक्त) एवु ज्ञान मुख्य अतर साधन होवानुं समजे छे, अ
त्यां निमित्त, पर्याय, के भेदरुप व्यवहारनी अपेक्षा रहेती होवानो स्वीकार पण करे छे, अने
सम्यग्दर्शननो विषय नहि होवानुं विचारी तेनी ते स्थानके ते नकार बुद्धी पण करे छे, अने ते मा
अखड अभेद एवो शुद्ध चैतन्यात्मक आत्म द्रव्य स्वभाव ते तेनो (सम्यग्दर्शननो) विषय होवान
विशेष विशेष निर्णयपुर्वक ते तेने अवलंबीत थई त्या ते ग्रंथी भेद के तयारुप शुभ विकल्पनो परिहा
पण तयारुप शुद्ध स्वभावना लक्षे करे छे, अने ते द्वारा ते तयारुप शुद्ध स्वभावना स्व संवेदनने
शुद्ध सम्यग्दर्शनने पण पामे छे ।

आ उपरथी सत्य शोधक जीवने भेद विज्ञान अने सम्यग्दर्शन ए उभयना भेदत्वनु वास्तवि
स्वरुप समजाशे, अने ते द्वारा विपर्यय मान्यतानो परिहार पण थशे, अने ए ज उपरोक्त गाथ
सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

सम्यक्त्वना स्वरुपथी, रही अंतर जे बेभान ।
अटके भेद विज्ञानमां, करी पर्याय लक्ष प्रधान ॥
तो ते लक्षे ग्रंथी भेद, थई न पामे वस्तु अभेद ।
ते दोषनु स्फुरे अंतर भान, त्यां ग्रंथी भेद ने बोधी जाण ॥१६॥

अन्वयार्थ—जे कोई साधक जीव सम्यग्दर्शनना स्वरुपथी अतरना विषे बेमान रही
मात्र ते भेद विज्ञानमा पर्याय लक्ष प्रधान करीने अटके तो ते लक्षे ग्रंथी भेद थई पोते त्या अभे
एवी वस्तुने एटले वस्तु स्वभावना एकत्वने न पामे, ज्यारे ते दोषनुं एवा ते साधकना अत
परिणामना विषे भान स्फुरे छे, त्यारे त्यां ग्रंथी भेद अने ते पुर्वक बोधी कहेता सम्यग्दर्शननी प्रा
सहज स्वभाव लक्षे थई जाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण क
अतरना विषे जाण ।

छु, आदि अनेक प्रकारे पोते पोतानुं अस्तित्व दृढ करे अने जीवन पर्यंत तथारुप शुभ विकल्पमां अटकी पोताना स्व तरफना वलणने चुके छे, अने तेथी ते ग्रन्थी भेदना अभावे सम्यग्दर्शन रुपी स्वरुप लाभने पामी शकतो नथी।

आ उपरथी समजाशे के जे जीवने स्वरुप शोधनुं वास्तविक भान वर्ते छे, ते जे भेद विज्ञानना वास्तविक परमार्थने समजी शके छे, अने विना प्रमादे ते तथारुप अंतर साधनने स्वभान लक्षे अवलंबी तथारुप शुभ विकल्पनो परिहार करेता ग्रन्थी भेद पण करे छे, अने ते द्वारा सम्यग्दर्शन रुपी स्वरुप लाभने पण ते पामे छे।

प्रश्न—तथारुप शुभ विकल्प ग्रन्थी भेदनी पुर्वे ते जेम सम्यग्दर्शनने रोकवा समर्थ छे, तेम ग्रंथी भेदना पश्चात पुनः ते सम्यग्दर्शनने रोकवा समर्थ छे के केम ?

उत्तर—ग्रन्थी भेद थता एटले ज्ञान साथे सबब विशेष रुपे रहेली एवी अनादि बध पर्याय-जन्य रागादि भावरुप अंतर संधी, ते ज्ञानथी पृथकरुप थई विलयने पामता, फरी ते संधी सम्यग्दर्शनना रहे ज्ञान साथे एकत्वरुप थई शक्ती नथी, अने तेथी पुनः कोई पण शुभाशुभ विकल्प उदयरुप थता छता, पण ते सम्यग्दर्शनने रोकवा समर्थ नथी, एटलु ज नहिं, पण ग्रन्थी भेद के तथारुप सम्यग्दर्शननी उपलब्धी बाद थतुं भेद विज्ञान ते स्वरुप पुर्णता पर्यंत अनुक्रमे स्वरुप स्थिरतानी वर्द्धमानताना हेतुरुप बने छे, ए एक खास नियम छे।

आ उपरथी भेद विज्ञानने शुभ विकल्परुप अंतर साधन कहेवानो मुळ हेतु समजाशे, अने ते समज पुर्वक पोतानी अंतर भावनामा वर्तता ते सबधीना सर्व एवा विपर्यय भावरुप दोषो तेनो स्वरुप जाग्रती पुर्वक परिहार पण ग्रन्थी भेदपुर्वक थशे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहि तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

ते विषे स्पष्ट करी तने, पुनः समजावु विशेष।
थाय न ग्रंथी भेद वण, वेद सवेदमां प्रवेश ॥
सुक्ष्म बोधनु ज्यां विज्ञान, वेद पद तुं तेने जाण।
सुक्ष्म बोध स्वरुपे स्थित, सवेद पद ते जाण खचीत ॥१७॥

अन्वयार्थ—ते विषे अहिं तने पुनः विशेष स्पष्ट करी समजावु छुं। ज्यां सुधी ग्रंथी भेद

न थाय त्या सुधी वेद संवेद पदना विषे जीवनो प्रवेश थई शक्तो नथी, ते वेद पद ज्या सुक्ष्म बोधनु विशेष विज्ञानरुप एवुं अतर्वेदन शुद्धात्म स्वरुपना लक्षे वर्ती रह्यु होय, तेने कहेवामां आवे छे, अने संवेद पद ज्या सुक्ष्म बोध स्वरुपे स्थिरतारुप एवुं स्वभाव संवेदन वर्ती रह्युं होय, तेने कहेवामा आवे छे, एम हे शीष्य तुं आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अतरना विषे सचोट करीने जाण।

विशेषार्थ—वेद सवेद पदना पृथक् बोधने परमार्थ दृष्टीए विचारीए तो तेमा सुक्ष्म बोध विज्ञान, अने सुक्ष्म बोध स्वरुपे स्थिरता, एम तेनो मुख्यपणे अर्थ थाय छे। अहिं तेना प्रथम पदनो तत्व विमासा करीए तो तेमां शुद्धात्म स्वरुपना अतर्मुख लक्षे निज ज्ञानोपयोगनु सुक्ष्म बोध विज्ञानमा सम्यक् प्रकारे प्रेराघु एटले मुख्यत्वे करी त्या द्रव्यानुयोगनी अतर्मुख विचार श्रेणीने अवलवी वस्तुनु विशेष प्रकारे विज्ञान करवुं, जेमा वस्तुना सामान्य विशेषात्मक धर्मनु, निश्चय व्यवहाररुप अतर भवीनु, एकांत अनेकांतना न्यायनु, स्वभाव विभावरुप शुद्धाशुद्ध भावनु, एम अनेक प्रकारे भेदाभेद दृष्टीए वस्तु विचारनो के तेना पृथक्करणनो समावेश थाय छे, अने तथारुप एवा ते बीजा पदमा सुक्ष्म बोध स्वरुपे स्थिरतारुप एवा अखड अभेद शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभाव सवेदननो समावेश थाय छे। तथारुप एवा ते उभय पदो स्वाधीन कहेता स्वभाव परिणामरुप होवाथी तेनी उपलब्धी ग्रन्थी भेद थये ज थाय छे, अर्थात ते विना तेनी उपलब्धी कोई पण प्रकारे थई शकवा योग्य नथी, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> तेनो आ अवस्थामां, होय आत्यांतिक अभाव।
> अहिं तेथी पद अवेदरुप, होय मिथ्या उदयिक भाव ॥
> तेथी स्थुल दृष्टीए ते, स्व पर भेद विचारे ए।
> पण सुक्ष्म भावे विपरित, तेथी ज्ञान त्यां ज्ञेय मिश्रीत ॥१८॥

अन्वयार्थ—तेनो एटले वेद सवेद एवा ते उभय पदनो चालु एवी आ बोध अवस्थाना विषे आत्यतिक अभाव होय छे, अने तेथी अहिं अवेद पदरुप एवो मिथ्यात्व जन्य उदयिक भाव वर्ततो होय छे, तेथी स्थुल दृष्टीए ते जो के स्व पर स्वरुपनी भेद विचारणा करे छे, पण सुक्ष्म भावे तो तेनु विपरीतपणु ज होय छे, अने तेथी त्या ज्ञान ज्ञेय मिश्रीत कहेता ज्ञान साथे रागनी पर्यायनु अपृथक्पणु वर्ततु होय छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—भेद संवेद एवा ते उभय पदोनुं चतुर्थ एवी आ बोध अवस्थाना विषे सर्वथा अभावपणु होवानु प्रतिपादन करवामा आव्यु ते मात्र एक ग्रन्थी भेद नहिं थवानी अपेक्षाए ज छे, अने तेथी अहिं अवेद पदरुप एवा तेना प्रतिपक्षी भावनुं एटले मिथ्यात्व जन्य उदयिक भावनु होवुं अति सार्थरुप होवाथी ते अहिं नियमा होय छे, तेथी स्थुल दृष्टीए आ बोध अवस्थामा वर्तता एवा ते साधक जीवनु स्व पर भेद विचारणामा, के ज्ञेय ज्ञायक भावना भेद विज्ञानमा प्रेरावु थवा छतां पण सुक्ष्म एवी तत्त्व दृष्टीए तेनु विपर्ययरुप परिणमन तथारुप दोष विशेषने लईने वर्ततुं होय छे, अने तेथी त्यां ज्ञान ज्ञेय मिश्रीत कहेता ज्ञान साथे रागनी पर्यायनुं एकत्वपणु जे अनादि काळथी जीवनी अवस्थामा वर्ती रह्युं छे, तेनु पृथकपणु कहेता ते दोषनुं सम्यक प्रकारे अभावपणु अहिं थयु नथी, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

स्वरुप एकत्व अतरे, थतां निवृते मिथ्या भाव।
त्यारे पद अवेदरुप, तेनो सर्वथा थाय अभाव॥
त्यारे ज्ञान त्या थई स्वाश्रीत, वेद सवेदरुप वर्तें नित्य।
ज्ञाता भावे ज्ञेयनुं ज्ञान, सर्व शुभाशुभनु त्यां जाण ॥१९॥

अन्वयार्थ—स्वभाव एकत्वरुप अतर स्थिरता ग्रन्थी भेदपुर्वक थतां ज्यारे त्या मिथ्यात्व जन्य उदयिक भाव निवृते छे, त्यारे त्या अवेदरुप पद तेनु सर्व प्रकारे अभावपणु थई जाय छे अने त्यारे त्यां ज्ञान स्वाश्रीत थई ते नित्य वेद संवेद पद रुपे वर्ते छे, अने त्या सर्व शुभाशुभ एवा ते रागादि परिणामरुप ज्ञेयोनुं ज्ञेय रुपे ज्ञान एवा ते स्वरुप साधक जीवने होय छे, एम हे शीष्य तु आ जीन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—ज्यारे कोई साधक जीव तत्व बोधने अवलबीत थई पोते पोताना वस्तुस्वभावनो वास्तविक निर्णय करे छे, अने ते द्वारा भेद संवेद पदनी उपलब्धीना हेतुरुप, अने अवेद पदरुप एवा मिथ्यात्व जन्य उदयिक भावनी निवृतिना कारणरुप एवो मात्र एक पोतानो वस्तु स्वभाव होवानु समजे छे, त्यारे ते पोताना निर्यात्मक रुचीना वलणने तथारुप लक्षे स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करवाना पुरुषार्थमा वास्तविक एवा भेद विज्ञानपुर्वक योजाय छे, अने ते द्वारा क्रमे करी स्वभाव एकत्वरुप एवी अंतर्मुख स्थिरतानी सिद्धी एवा ते साधक जीवनी ग्रन्थी भेदपुर्वक थतां, त्या अवेद-

रुप पदनु अभावपणु तेना निमित्त श्रुत कर्मनी कहेता मिथ्यात्व जन्य उदयिक भावनी निवृति पुर्वक त्या स्वभावीक ज थई जाय छे, अने तेम थता त्या ज्ञान स्वाश्रीतरुप थई एटले ज्ञान गुण गुणी एवा आत्मा साथे अभेदत्वने पामी, ते नित्य वेद सवेद पद रुपे एटले सदा स्वरुप एकत्वरुप परिणामनी अतर स्थिरता रुपे वर्ते छे, अने त्या ज सर्व शुभाशुभ एवा ते रागादि परिणामरुप ज्ञेयोनु मात्र ज्ञेय रुपे ज्ञान करवापणुं एवा ते स्वरुप साधक जीवने पोतानी स्वरुप साधनामा रहे छे, के तेम थवुं शरु थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधान पुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> अहिं सुधी क्रमे कही, तने बोध अवस्था चार।
> ते सौ पद अवेद रुप, वर्द्धमान थतो बोध धार॥
> ते स्व लक्षे विचारी नित्य, करजे बोध तुं अंतर स्थित।
> हवे तने समजावुं भ्रात, पचम अवस्थानी अहिं वात॥ २०॥

अन्वयार्थ—अहिं सुधी अनुक्रमे तने चार एवी बोध अवस्था कही, ते सौ अवेद पद रुपे वर्द्धमान थतो बोध तु धार। ते बोध तुं नित्य स्वभाव लक्षे विचारी तेने अतरना विषे स्थिर करजे। हवे तने पचम एवी बोध अवस्थानी वात हे भ्रात समजावुं छु, ते तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— अहिं सुधी प्रतिपादन थयेली आदिनी चार बोध अवस्था पर्यंतना परिणमनने के तेनी थती वर्द्धमानताने ग्रन्थी भेदना अभावे अवेद पद रुपे ओळखवामां आवे छे। तथारुप बोधना अनुक्रममा स्वरुप जाग्रती प्रेरक बोधनु विशेष एवा तेना गुढ रहस्यार्थ मात्र पुर्वक आत्मार्थी जीव महज समजी शके तेवा स्वरुपे तेनु निरुपण करवामा आव्यु छे, ते कोई आत्मार्थी जीव विशेष एवा आत्मार्थ लक्षपुर्वक दृष्टीने अतर्मुख प्रेरी विचारशे, तो तेने स्वरुप प्रत्येनु गुण विशेष परिणमन के बोधनु अतर्मुख चिंतन अवश्य थशे, अने तेथी आत्मार्थी जीवे तथा प्रकारना पुरुषार्थमा एटले तथारुप बोधनी तत्व मिमासा करवाना सम्यक धर्ममा योजावु एम अहिं सहज सुचन करवामा आवे छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं पांचमी अवस्थाना बोध विशेषनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

卐

(पंचम बोध अवस्था अधिकार)

पचम अवस्थाना विषे, बोध रत्ननी प्रभा समान ।
तेथी सुविवेक अंतरे, स्फुरे स्वनो विशेष जाण ॥
तेथी सुक्ष्म स्वरुप बोध, करीने बाह्य चित्त निरोध ।
विचारे विशेषे ते, सन्मुख थई समजावुं ए ॥१॥

अन्वयार्थ—पाचमी अवस्थाना विषे बोध रत्ननी प्रभा समान एटले जेम रत्ननो प्रकाश दीपकनी ज्योत करता विशेष जोरदार होवाथी विशेष तेज रुपे एक सरखो स्थिर टकी शके छे, तेम आत्म बोधनुं अस्तित्व अहि सुक्ष्म रुपे एटले सम्यक्ज्ञान दर्शनादि एवु तेनु प्रगट शुद्धता रुपे परिणमन थई ते अल्प स्थिरतारुप परिणामे एक सरखु टकी शके तेवुं योग्यपणुं तेना विषे होय छे, कहेता उपलब्धरुप थाय छे, अने तेथी अहि तेना अतर परिणामना विषे स्व तरफनो एवो आत्मार्थ सद्विवेक तेने विशेषे करी स्फुरे छे, एम तु जाण, अने तेथी ते बाह्य चित्त वृत्तिनो निरोध करी सुक्ष्म एवा स्वरुप बोधने स्व सन्मुख थई विशेष प्रकारे विचारे छे, ते अहिं तने समजावुं छुं, ते हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जेम जेम उपरोक्त साधक स्वरुप बोधनी अतरग सन्मुखताने अवलबतो जाय छे, तेम तेम तेना अतर परिणामना विषे स्वनो कहेता निज चैतन्यात्मक स्वभाव तरफनो परम एवो आत्मार्थ सद्विवेक विशेषे करी स्फुरतो जाय छे, अने तथा प्रकारनो सद्विवेक स्फुरायमान थवाथी ते विशेष प्रकारे स्वरुप बोधनी सुक्ष्म विचार श्रेणीमा पण निज ज्ञानोपयोगने पर तरफना लक्षनी विशेष औदासीनतापुर्वक के चित्त निरोधपुर्वक प्रेरतो जाय छे, अने ते साथे स्वरुप प्राप्तीनी अतरग तालावेलीनु वर्द्धमानपणु पण स्वनी विशेष दृढतापुर्वक करतो जाय छे ।

आ उपरथी आत्मार्थी जीवने उपरोक्त साधकनी स्वरुप जिज्ञासा बळनो अने तेना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनो सहज ख्याल थई शकवा योग्य छे, अने ते उपरथी स्वातम लक्षने मुख्य करी एम दृ करवा योग्य छे के स्वरुपनी वास्तविक जिज्ञासा ते ज स्वरुप सन्मुखताना वास्तविक पुरुषार्थने स्वरुप प्राप्तिनो, अने स्वरुप पुर्णतानो हेतु छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथ समजवा योग्य छे । हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

गुण

द्रव्यना सर्व भागमा अने तेनी सर्व क्रमरूप अवस्थामा जे त्रीकाळ शक्ति रूपे टकीने रहे एवा ज्ञानादि विशेषणोने गुण कहेवामा आवे छे।

पर्याय

एक समय मात्र काळरुप प्रमाणथी उत्पाद व्ययरुप थती एवी चैतन्यात्मक स्वभावनी क्रम रूप अवस्था विशेषने पर्याय कहेवामा आवे छे।

आ प्रमाणे द्रव्य गुण पर्यायनु भेदरूप दृष्टीए स्वरुप छे, ते उपरथी समजाशे के द्रव्य एटले अन्वयरुप मुळ वस्तु तेनुं अवस्था दृष्टीए अनेक अवस्था रूपे परिवर्तन थवा छता पण मुळ दृष्टीए तेनु कांई पण परिवर्तन न थवु जेम के जीवनुं जीवपणे अने जडनुं जडपणे एवा पोताना मुळ स्वभावे त्रीकाळ अबाधितपणे टकीने रहेवु, तेनु नाम द्रव्य, गुण एटले द्रव्यना सर्व भागमा, अने तेनी सर्व क्रमरुप अवस्थामा तेनुं त्रीकाळ शक्ति रूपे टकीने रहेवु जेम के आत्माना ज्ञानादि गुणोनुं गुणी एवा जीव द्रव्य साथे अने पुद्गलना वर्णादि गुणोनुं गुणी एवा पुद्गल द्रव्य साथे अभेदपणु होवाथी तेनु पोत पोतना द्रव्यना सर्व भागमा अने तेनी सर्व क्रमरुप अवस्थामा अभेद शक्ति रुपे त्रीकाळ टकीने रहेवु तेनु नाम गुण, अने पर्याय एटले द्रव्यनी वर्तमान अवस्था तेमा सामान्यरुप एवुं जे द्रव्य ते अंशी कहेता पुर्ण वस्तु अने विशेपरुप जे पर्याय ते तेनो एक अंश, के जेनी एक समय मात्र काळरुप प्रमाणथी उत्पाद व्ययरुप क्रमवर्ती अवस्था वर्ती रही छे, जेम के जीव द्रव्यना सामान्यरुप स्वभावमाथी चैतन्यात्मक पर्यायनी क्रमरुप एवी विशेष अवस्था, अने पुद्गल द्रव्यना सामान्यरुप स्वभावमाथी पुद्गल पर्यायनी क्रमरुप एवी विशेष अवस्था एम उभयनुं पोत पोताना द्रव्य स्वभावमाथी प्रति समय उत्पाद व्ययरुप क्रमवर्ती अवस्थानु परिवर्तनशीलपणु थवु तेनुं नाम पर्याय।

आ प्रमाणे सामान्य विशेषात्मक एवी उभयात्मक दृष्टीए वस्तु विचारता आत्मार्थी जीवने सहज लक्षमा आवशे के त्रीकाळी द्रव्य गुण अने ते अनुसार निर्पेक्ष एवी जे तेनी ध्रुव पर्याय के जेने शुद्ध पारिणामीक भावे कारण शुद्ध पर्याय ए नामथी संबोधवामा आवे छे ते सर्व कहेता द्रव्य, गुण, पर्याय त्रीकाळ एकरुप शुद्ध अने पुर्णरुप होवाथी तेने जे जीव अवलबीत थाय छे, तेने अनादि काळथी मिथ्यात्व अज्ञानादि भावे वर्ती रहेली एवी जे द्रव्यनी अपेक्षीत पर्यायरुप एक समय पुरती अशुद्धता, ते सहज निवृतरुप थई ते जगाए सम्यग्दर्शन रुपी निर्मल पर्यायनी कहेता तथारुप एवी ते कार्य शुद्ध पर्यायनी उपलब्धी थाय छे, अने क्रमे सम्यक्त्व पुर्वकनी सर्व निर्मल दशानी उपलब्धीनो मुळ

हेतु पण ते ज अर्थात श्रीकवली वस्तु स्वभाव ज बने छे। आवा प्रकारना परमार्थ बोधने, उपरोक्त साधक भेदाभेद दृष्टीए विचारी पोते पोताना मुळ स्वरूपनो वास्तविक निर्णय करे छे अने तद्रूप लक्षे स्वमां एकत्व परिणामी थवाना मुख्य विचारने अनुसरवा उद्यमवंत थाय छे, एम उपरोक्त गाथा सूत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपूर्वक आगळ निरूपण करवाम आवे छे।

ते लक्षे स्व पुरुषार्थने, करी दृढ प्रेरे सन्मुख।
अनन्य चिंतवन अतरे, पण स्वभावनुं त्यां मुख्य॥
ते साथे स्व परनुं विज्ञान, विशेषे होय अंतर जाण।
तेथी क्रमे मो भेदनो आंय, लक्ष निवृते अंतर मांय॥ ३॥

अन्वयार्थ—तद्रूप लक्षे अहिं ते साधक जीव पोताना पुरुषार्थने दृढ करी स्व सन्मुख प्रेरीत करे छे, अने त्या अनन्य चिंतवन पण पोताने पोताना स्वभावनुं ज मुख्य रूप होय छे, अने ते साथे तेना अतरना विषे स्व परनु विज्ञान पण विशेष प्रकारे वर्ततुं होय छे, एम तु जाण, अने तेथी अहिं अतरना विषे पर्याय जन्य भेद अवस्था प्रत्येनो सर्व लक्ष क्रमे करीने निवृते छे, एटले प्रति समय मद परिणामरूप थतो जाय छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरूप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आ जीवनु अनादि काळ थी स्वभाव विमुख परिणमन होवाथी तेनी दृष्टी एकांत पर्यायाश्रीत भावे वर्ती रही छे, तद्रूप दृष्टी भेद परिणामरूप होवाथी त्या अभेदरूप एवा आत्म धर्मनु अस्तित्व कोई पण प्रकारे होतु नथी, के तद्रूप लक्षे तेनुं प्रगटपणु थतु नथी। मतलब के तद्रूप विमुख दृष्टीनी हयाति पर्यंत मोहनुं साम्राज्य शुद्धात्म धर्मना अभावपूर्वक कायम एक सरखु टकीने ज रहे छे। आवा परमार्थ बोधनु अतर्मुख चिंतन विशेष विज्ञानपूर्वक एटले सामान्य विशेषात्मक एवा वस्तु बोधना वास्तविक लक्षपूर्वक उपरोक्त साधकने थता, अने ते द्वारा आत्म धर्मनी उपलब्धीना मुळ हेतुभुत एवा पोताना मुळ वस्तु स्वभावनो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञान विशेष उपयोगना बळे आवता, ते तद्रूप लक्षे निज ज्ञानोपयोगने अभेदरूप एवा पोताना मुळ वस्तु स्वभाव मां प्रेरीत करवाना पुरुषार्थमा भेद विज्ञानपूर्वक योजाय छे, अने तद्रूप लक्षनी अंतर्मुख श्रेणीना बळे त्या पर्याय जन्य भेद अवस्थानो लक्ष क्रमे करीने स्वभावोन्मुख ज निवृतरूप एटले प्रति समय मद परिणामरूप थतो जाय छे।

आ उपरथी आत्मार्थी जीवने उपरोक्त सावस्तु स्व सन्मुख थयेलु उग्र एवु वियातमर स्वीतु वलण तेनो सहज ख्याल आवो दरवा योग्य छे, अने ते अनुसारं निज वरणने स्वभाव सन्मुखप्रेरीत करवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुमान पुर्वक आ क निरुपण करवामा आवे छे।

> अती-उत्कृष्ट भाव विर्यथी, करे ग्रन्थी भेद ते आंय।
> त्या स्पर्शी शुद्ध स्वभावने, पामे स्थिरता स्वरुप मांय॥
> गुणस्थानक चोथु ते जाण, अवृति छता वर्ते स्व भान।
> अखंड अविनाशीतुं नित्य, स्व सवेदनरुप ते समकीत॥ ४॥

अन्वयार्थ—अहि ते अती उत्कृष्ट एवा भाव विर्यरुप अतरग पुरुषार्थने अवलबी ग्रथीभेद करे छे, अने त्या पोताना शुद्ध स्वभावने ते स्पर्शी तथारुप स्वरुपे एटले पोते पोताना विषे स्थिरतापणु पामे छे, तेने तु चतुर्थ गुणस्थानक जाण, के जे स्थानके अव्रतादिरुप कषायोनु उदयपणु होवा छता पण तेना अतर परिणामना विषे अखंड अविनाशी एवा पोताना शुद्धात्म स्वरुपनुं भान तेने नित्य वर्ते छे, अने तेने ज स्व सवेदनरुप समकीत कहेता शुद्ध सम्यग्दर्शननी प्राप्ती थई एम परमार्थ दृष्टीए कहेवा योग्य छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— वस्तु स्वभावना वास्तविक निर्णयपुर्वक वस्तु स्वभावनी अतरग सन्मुखता भेद विज्ञानपुर्वकथवी ए सम्यग्दर्शननी उपलब्धीनो सरल, सुगम अने वास्तविक उपाय छे। तथा प्रकारना सन्मुखवती पुरुषार्थना बळे तेनी (श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्यायनी) उपलब्धी थता जीवने पोताना वस्तु स्वभावनु वास्तविक भान मिथ्यात्व कर्मनी उदय निवृतिपुर्वक प्रगटे छे, जेने जिनागम दृष्टीए अविरती सम्यग्दृष्टी एवा चतुर्थ गुणस्थानकना नामथी सबोधवामा आवे छे। तथारुप स्थानके अव्रतादिरुप कषायोनु उदयपणु होवा छता पण तथारुप गुण अवस्था विशेषने संप्राप्त थयेल एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवना अतर परिणामना विषे तथारुप निर्मल अवस्था उपलब्धरुप थतानी साथे ज पर्याय जन्य भेद अवस्थारुप एवी पराश्रीत लक्षे वर्ती रहेली बहिमुख दृष्टी ते सर्वथा विराम पामी स्वाश्रीत लक्षे शुद्ध आत्म दृष्टी जागे छे, अर्थात हु देह के देहादि पर जन्य निमित उत्पन्न थता क्षणीक विकाररुप नहीं, पण अखंड अविनाशी एवो शुद्ध चैतन्य घन स्वभाव परिणामी आत्मा छुं, एवो एक असाधारण भाव वास्तविक एवा भेद विज्ञानपुर्वक प्रगटे छे, अने ते साथे नाम, रुप, मन अने इन्द्रिय जन्य भावोमाथी अहं ममत्वादि भाव विलय पामी मानसीक, वाचीक के कायीकादि सर्व शुभाशुभ

बाह्यांतर उदय जन्य क्रियाओ मात्र ज्ञाता भावे भेद विज्ञानपुर्वक थवी शरु थाय छे, अने ते सर्वज्ञ पदनी पुर्णता पर्यंत अनुक्रमे स्वरुप स्थिरतानी वर्द्धमानतापुर्वक एक सरखो टकीने ज रहे छे ।

आ उपरथी समजाशे के ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप स्वरुप साधनामा के तेनी अंतर स्थिरतामा स्वभाव सन्मुख थती एवी अंतर क्रियानु एटले भेद विज्ञाननुं ज मुख्यपणु छे, के जेनी अंतर्मुख साधनाना बळे पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे ते स्वरुप साधक जीव क्रमे करी स्वरुप पुर्णताने पामे छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

> वग सम्यग्दर्शन हतुं, जे ज्ञान असम्यक्‌रुप ।
> ते पण ते रुपे अहिं, थयु सम्यक्‌ज्ञान स्वरुप ॥
> स्वरुपाचरण पण ते साथ, वस्तुनो जाण ए परमार्थ ।
> ते रुपे थईने स्वमां स्थित, ज्ञायक भावे वर्ते नित्य ॥५॥

अन्वयार्थ—आज पर्यंत सम्यग्दर्शन विना जे ज्ञाननुं परिणमन असम्यक्‌रुप कहेता मिथ्यात्व रुपे वर्ती रहेलुं हतु, ते पण सम्यग्दर्शन रुपी निर्मल गुण अवस्था प्रगटरुप थता ते रुप एटले सम्यक्‌ज्ञान स्वरुपे स्थिर थयु । वळी ते साथे स्वरुपाचरण चारित्र पण प्रगटरुप थवाथी एवो ते सम्यक्‌दृष्टी जीव ते रुपे कहेता ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप एवा पोताना ज्ञायकरुप स्वभावे नित्य स्थित थई वर्ते छे, एवा वस्तुना परमार्थने हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण ।

विशेषार्थ—सम्यग्दर्शनना परम महात्म्यने विचारीए तो जे समय श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्यायनु उपलब्धपणु थई जीव चतुर्थ गुणस्थानकने स्पर्शे छे, ते ज समय ज्ञान सम्यक पदवी अलंकृत थई एटले ज्ञान विशेष उपयोग (दर्शनोपयोगपुर्वक) सामान्यरुप एवा द्रव्य स्वभावनी अभेदताने पामी, सम्यक ज्ञान रुपे अने ते साथे स्वरुपाचरण चारित्र स्वभाव स्थिरता रुपे सहज उपलब्धरुप थई जाय छे, अने तेम थवानुं मुख्य कारण पण स्वभाव परिणामरुप एवा ए त्रणे गुणोनी निर्मल अवस्थानु परस्पर अविनाभावपणु होवानु ज छे, अने तेथी प्रथमना एक गुणनी निर्मल अवस्थानु उपलब्धपणु थतां, शेष बंने गुणोनी अंशत्वरुप एवी निर्मल अवस्थानुं उपलब्धपणु अंतरंगना विषे स्वा स्वभावीक ज थई जाय छे, जो के आ स्थानके अप्रत्याख्यानावरणादि कषायोदय जन्य अविरतीनु

मुख्यपणुं होवाथी देश के सर्व विरतीरूप एवुं खास क्रियारूप चारित्र होतुं नथी, पण अनंतानुबंधी कषायोदय जन्य अविरतीना अभावपूर्वक प्रगटेलुं एवुं उपरोक्त स्वरूपाचरण चारित्र के जेनुं सम्यग्दर्शन साथे अविनाभावपणुं होवाथी ते तेनी साथे नियमा त्रीकाळ अबाधितपणे रहे छे, अने ए ज सम्यग्दर्शननुं आश्चर्यकारक महात्म्य मिथ्यादृष्टी जीवना देश के सर्वरूप एवा नाम मात्र बाह्य क्रियारूप चारित्र करता पण विशेष प्रशंसनीय छे।

वळी तेनुं विशेष आश्चर्यकारक महात्म्य ए छे के सम्यग्दर्शन साथे क्षायोपशमीक भावे थती एवी जे सकाम निर्जरा तेनु अविनाभावी संबंधपणुं होवाथी ते तेनो उदय थता अवश्य होय छे, अने तेथी समये समये ज्ञानावरणादि कर्मोनुं निर्जरवापणुं सम्यग्दर्शन रुपी शक्ति विशेषना बळे त्यां स्वभावीक ज थतु होय छे, तेमां अन्य एक आत्म गुणनी निर्मल अवस्था होवानी अपेक्षा तेनी साथे निर्जरानुं अमम्बन्धपणु होवायी रहेतो नथी। आम होवाथी सम्यग्दृष्टी जीवने तथारूप शक्ति विशेषना बळे प्रगटेली एवी जे उपयोगात्मक अनुभव करवा योग्य शुद्धोपलब्धीरूप ज्ञान चेतना ते स्व पर प्रकाशक लब्धीरुप शक्ति विशेषनो स्व पर ज्ञेय जाणवानो स्वभाव होवाथी तेनु सहज स्व पर ज्ञेयने जाणवा रुपे परिणमवु थाय छे, अर्थात जाणवा योग्य पदार्थने ते जाणे छे, अने तेथी उपरोक्त लब्धीरुप ज्ञान चेतना-शक्ति विशेषना बळे ते उपयोगात्मक अनुभवरुप एवा स्व ज्ञेयने जाणतो होय के घट पटादि पर ज्ञेयने जाणतो होय, ए बंने जग्याए मात्र जाणवारुप स्वभावनी अपेक्षाए त्यां निर्जरा बंध एकेनी अपेक्षा रहेती नथी, अर्थात स्व ज्ञेयने जाणवाथी संवर निर्जरा थती नथी, अने पर ज्ञेयने जाणवाथी आश्रव बंध थतो नथी, अने तेथी संवर निर्जरा थवा माटे ज्ञान उपयोगात्मक होवु ज जोईए, एवा खास नियमनी आवश्यकता पण रहेती नथी। मतलब के ते वखते ज्ञान उपयोगात्मक हो वा न हो बंने सरखु ज छे, कारण के निर्जरानु तेनी साथे असंबंधपणुं होवाथी त गुण दोष उत्पन्न करवाने समर्थ नथी। आम होवाथी निर्जरानो सीधो संबंध मात्र एक सम्यग्दर्शन साथे सिद्ध थाय छे, अने ए ज तेनी शक्ति विशेषनु आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंसवा योग्य छे।

वळी तेनुं विशेष आश्चर्यकारक महात्म्य ए छे के चैतन्य स्वरुपना श्रद्धा गुण सिवायना अन्य समस्त गुणो ते जेम पोतानी निर्मल अवस्थाना विकास रुपे क्रमथी परिणमे छे, तेम श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्यायनी उपलब्धीमा खास क्रमनी अपेक्षा रहेती नथी। मतलब के तथारुप गुण पोतानी निर्मल अवस्थाना विकास रुपे मात्र एक ज समयमा परिणाम पामी शुद्ध सम्यग्दर्शन रुपे स्थिर थाय छे, अने ए पण तेनी शक्ति विशेषनु आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंसवा योग्य छे।

वळी तेनु विशेष आश्चर्यकारक महात्म्य विचारीए तो सम्यग्दर्शन पोते निर्मल पर्यायरुप होवा छता जे ते रुपे उपजवा छता पण तेनो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवाथी ते पोतानी तथारुप निर्मल पर्यायना पण अस्वीकारपुर्वक मात्र सामान्यरुप एवा वस्तु स्वभावने ज ग्रहण करी नित्य ते स्वरुपे वर्ते छे, अने ए पण तेनु आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंसवा योग्य छे।

वळी ते सबंधी विचारीए तो सम्यग्दर्शननु उपलब्धपणुं थतां तेनु अपरिमीत संसार पर्यटन काळ प्रमाण पण घटीने परिमीत एटले वधारेमा वधारे अर्ध पुद्गल परावर्तन काळ प्रमाण जेटलु ज अवशेष रही जाय छे, अने ए पण तेनी शक्ति विशेषनु आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशंसवा योग्य छे।

आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननुं अवर्णनीय महात्म्य छे, के जेनु उपलब्धपणु थता, ज्ञान चारित्रनु मिथ्यापणु निवृत्त थई सर्व सम्यक्‌रुप बनी जाय छे, अने ज्ञानादि सम्यक् त्रयरुप एवा मोक्षमार्गनी शरुआत पण त्यांथी ज थाय छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे।

प्रश्न—सम्यग्दर्शन पोते निर्मल पर्यायरुप होवा छता के ते रुपे उपजवा छता तेनो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवाथी ते जेम पोतानी तथारुप निर्मल पर्यायनो अस्वीकार करे छे, तेम तेना अविनाभावी सहचररुप एवा सम्यक्‌ज्ञाननो विषय शु छे? अने ते पोतानी निर्मल पर्यायनो स्वीकार करे छे के केम? अने करे छे तो ते वखते ते स्व पर पदार्थने केवा प्रकारे जाणे छे?

उत्तर—ज्ञाननो शुद्ध स्वभाव सामान्य विशेषात्मक होवाथी तेनो विषय स्व पर प्रकाशक एटले स्व पर पदार्थने जाणवानो छे। तथा प्रकारना बोधनु अंतर्मुख वलन थई ज्यारे ते ज्ञान सम्यग्दर्शननी उपलब्धीना समये सम्यक् पदवी अलंकृत थई सम्यक्‌ज्ञान रुपे परिणमे छे, एटले तथारुप एवो ते ज्ञान गुण गुणी एवा पोताना आत्मा साथे अभेदत्वने पामे छे, त्यारे निर्मल अवस्था रुपे परिणमेली एवी पोतानी पर्यायनो अभेदत्व रुपे स्वीकार पण ते साथे ज थई जाय छे, अने तेम थता सम्यक् पदवी अलंकृत थयेलु एवु ते ज्ञान सदा स्वाश्रीतपणे टकीने एटले सामान्यरुप एवा पोताना शुद्ध वस्तु स्वभावने अवलंबीने स्व पर एवा सर्व जाणवा योग्य पदार्थने ते सम्यक् प्रकारे जाणे छे।

प्रश्न—तथा प्रकारना सम्यक् जाणपणामा मुख्यपणे आत्मार्थ हेतुभुत एवी कई कई बाबतोनो समावेश थाय छे?

उत्तर—एकंदर दश बाबतोनो समावेश थाय छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

१—वास्तविक एवा वस्तु स्वभावनु सम्यक् प्रकारे जाणपणु तेना वास्तविक निर्णय पुर्वक होवु ते।

२—पोताना सर्वज्ञ स्वभावनु सम्यक प्रकारे जाणपणुं सर्वज्ञ सत्ताना वास्तविक निर्णय पुर्वक होवु ते।

३—पोत पोताना स्वतंत्र स्वभावने अवलंबी वस्तु मात्रनी थती एवी क्रम बद्ध अवस्थानुं सम्यक प्रकारे जाणपणु तेना वास्तविक निर्णय पुर्वक होवुं ते।

४—जैनधर्मना रहस्यनु के तेना सुक्ष्म रहस्यार्थ भावनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं अन्य सर्व दर्शननी समालोचना पुर्वक होवु ते।

५—अनेकान्त वादनु के सम्यक एकांतरुप स्वभावनु सम्यक प्रकारे जाणपणुं स्वभाव सन्मुखतापुर्वक होवु ते।

६—श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्याय रुपे उपलब्ध थयेल एवी सम्यग्दर्शन रुपी शुद्ध पर्यायनु सम्यक प्रकारे जाणपणु शुद्धोपलब्धीपुर्वक होवुं ते।

७—सम्यग्दर्शननो विषय अखंड आत्म द्रव्य होवानु सम्यक प्रकारे जाणपणुं स्व संवेदनपुर्वक होवु ते।

८—शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी वर्तमान विकार जन्य अवस्थानु के अवस्था जन्य उणपनु सम्यक प्रकारे जाणपणुं तेना भेद विज्ञानपुर्वक होवु ते।

९—निश्चय व्यवहारनुं के निमित उपादाननी अनुकूल सघीना सिद्धांतिक नियमनुं सम्यक प्रकारे जाणपणुं तेना वास्तविक बोधपुर्वक होवु ते।

१०—सिद्धाभिन्न साध्य साधन भावनुं के हेयोपादेयना परमार्थनु सम्यक प्रकारे जाणपणुं जीवादि तत्वना वास्तविक बोधपुर्वक होवुं ते।

आ प्रमाणे उपरोक्त दश बाबतोनु सम्यक प्रकारे कहेता यथार्थ जाणपणुं एवा ते सम्यक्ज्ञानी पुरुषना सम्यक ज्ञानमां होय छे, अने तथारुप एवुं ते सम्यक ज्ञान नियमा सम्यग्दर्शनपुर्वक होवाथी ते उभयनु अस्तित्व परस्पर तफावत होता छतां पण साथे ज रहे छे, अने ते साथे स्वरुपाचरण चारित्रनु होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते पण तेनी साथे नियमा होय छे, अने तेम होवाथी त्या तथा रुप सम्यक नयनी ज्ञापक रुप स्वभाव स्थिरता पण एवा ते सम्यकदृष्टी जीवने नित्य अवश्य वर्तती होय छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहि तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

दश कारण सम्यकत्व प्राप्तीनां, ते पेकी रह्युं एक शेष।
ते सुक्ष्म अर्थी भेद रुप, कह्यु दसमुं ते जाण विशेष॥
ते सौ कारणनो उपचार, स्व कार्य सिद्ध थये तुं धार।
ते वण उपचार अशे नोय, एवो आशय जिननो होय॥ ६॥

अन्वयार्थ—सम्यग्दर्शन प्राप्तीना दश कारण पैकी जे एक शेष रह्युं हतुं ते सुक्ष्म ग्रन्थी भेद एटले भेद विज्ञानना बळे अखंड अभेद एवा शुद्ध द्रव्य स्वभावनु स्व संवेदनरूप एवुं एकत्वरूप परिणमन थता, त्यां सुक्ष्म ग्रंथी भेद कहेता रागादि भावरूप अतर सधीनुं भेदन थवु ते, एवु दसमु विशेष रूप कारण में तने चतुर्थ सुत्रमा कह्युं ते तुं अंतरना विषे जाण। ते सौ कारणनो कारणत्व रूपे उपचार सम्यग्दर्शनरूप एवा स्व कार्यनी सिद्धी थये ज थाय छे, ते विना तेना पर तथा प्रकारनो उपचार अंशे पण घटी शक्तो नथी, एवो श्री जिननो आशय कहेता अभिप्राय छे, एम हे सौम्य तु आ जिन प्रवचनरूप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे धार।

विशेषार्थ—पहेली बोध अवस्थाथी मांडी अहिं सुधीनी पाचमी बोध अवस्था पर्यंत सम्यग्दर्शननी प्राप्तीमां बाह्यातर निमित उपादानरूप एवा एकदर दश कारणोनी अपेक्षा रहे छे, पण तेना विषे कारणत्वनो उपचार त्यारे ज थई शके छे, के ज्यारे जीव निश्चयरूप एवी स्व कार्यनी विजयताने पामे, अर्थात बाह्यांतर एवा ते सर्व कारणत्व प्रत्येना पर लक्षने एटले निमित, पर्याय, के भेद व्यवहार जन्य एवी सर्व विकल्पात्मक अवस्था प्रत्ये ढळेला निज ज्ञान विशेष उपयोगने सामान्य रुप एवा शुद्ध द्रव्य स्वभावना लक्षे अतर्मुख करी त्यां अभेद रुपे तद्रुप स्वभाव स्थिरताने पामे। मतलब के निश्चयरूप स्व कार्यनी सिद्धी थये ज तेमां अन्य सर्व निमितरुप बाह्यातर कारणत्व नो उपचार थई शकवा योग्य छे, अने ए ज निमित उपादाननी सधीनो सिद्धांतिक नियम छे।

प्रश्न—जो एम ज होय तो व्यवहार सम्यग्दर्शन निश्चय सम्यग्दर्शननु कारण, व्यवहार रत्नत्रय निश्चय रत्नत्रयनु कारण, आवा प्रकारनो शास्त्रोपदेश तो कार्य सिद्धीना सर्व आधारमां कारणनुं ज मुख्यपणुं दर्शावे छे, तेनु केम?

उत्तर—शास्त्रकारनो ते उपदेश कारणमा कार्यना उपचार हेतुनी सिद्धी अर्थे नथी, पण कार्य सिद्ध थये (थया बाद) तेमा कारणत्वनी उपचाररूप सिद्धी नियमा थती होवानु दर्शावना अर्थे छे। आ लक्ष बाळ जीवोनी दृष्टीमां नहिं आववाथी एटले निमित-उपादाननी सधीना वास्तविक बोध परमार्थनु अतर्मुख मिंचन नहिं थवाथी आजे पण कोई जीवो निज उपादान शक्तिनी मुख्यता अने विमुखतापूर्वक पोतानी दृष्टी एकात निमिताश्रीत भावोमा स्थिर करी एटले व्यवहार सम्यग्दर्शनना हेतुभूत एवा सुदेवादि प्रयात्मक तत्वोनी प्रतितीमा के व्यवहार रत्नत्रयनी बाह्याचरण सेवनामा अटकी पोतानु कृतार्थपणु माने छे। मतलब के उपादान शक्तिना सन्मुखवर्ती लक्षनी बेभानतापूर्वक केवळ असत्यार्थरूप अने स्व कार्य सिद्धीना अहेतुरुप एवो जे निमिताश्रीत (असद्भुत) व्यवहार तेने

प्रश्न—तथारुप एवा ते त्रणे प्रकारना निश्चय सम्यग्दर्शननु शुं स्वरुप छे ? अने तेमा तफावतपणुं दर्शाववानो एवो जे शास्त्रकारनो हेतु ते स्वरुप प्रतितीनी अपेक्षाए छे, के ज्ञान उघाड शक्तिनी अपेक्षाए छे ?

उत्तर—ते त्रणे प्रकारना सम्यग्दर्शननु स्वरुप, अने तेमा तफावतपणु दर्शाववानो हेतु निचे प्रमाणे छे।

उपशम

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे दर्शन मोहीनीय कर्म अने अनतानुबंधी चतुष्टय एम एकदर पांच प्रकृतिओनु सर्वथा उपशमपणु थवुं ते।

क्षयोपशम

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे मिथ्यात्व मोहीनीय अने मिश्र मोहीनीय प्रकृतिना परमाणुओ आत्म प्रदेशोथी पृथक्रुप थई जवाथी जीव अवस्थाना विषे तेना फल विपाकनु अभावपणुं थवु, अने अनंतानुबंधीनी विसयोजनापुर्वक सम्यक मोहीनीय कर्म प्रकृतिनु उदय रुपे रहेवु ते।

क्षायिक

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे दर्शन मोहीनीयनी त्रण अने अनतानुबंधीनी चार एम एकदर सात प्रकृतिओना परमाणुओ आत्म प्रदेशोथी पृथक्रुप थई सर्वथा क्षयने पामवु ते।

आ प्रमाणे त्रण प्रकारना निश्चय सम्यग्दर्शननुं स्वरुप छे, ते त्रण प्रकारना सम्यग्दर्शनमा तफावतपणानो हेतु स्वरुप प्रतिती के ज्ञान उघाड शक्तिनु न्युनाधिकपणुं होवानी अपेक्षाए नथी, कारण के त्रणे प्रकारना सम्यक्दृष्टी जीवोनी स्वरुप प्रतिती तो सिद्ध सम शुद्ध एवी एक सरखी ज होय छे, अने ज्ञान उघाड शक्तिनु न्युनाधिकपणु होवा छता तेनु सम्यग्दर्शन साथे अमबधपणुं होवाथी तेनी अपेक्षा पण रहेती नथी, पण उपादान अपेक्षाए जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था भेदे स्व पर्यायनी वर्तमान योग्यता त्रण प्रकारनी होवाथी अने निमित अपेक्षाए स्व पर्यायने अनुकूल एवी पुद्गल कर्मनी तेवी अवस्था तेना पोताना कारणे थवाथी ते अपेक्षाए त्रण प्रकारना एवा ते सम्यग्दर्शनमा तफावतपणुं होवानी अपेक्षा रहे छे, अने शास्त्रकारनो तेम दर्शाववानो हेतु पण ते ज छे।

उपरोक्त बोधनी सर्वांग समाधानी पूर्वक्ना अतर्मुख चिन्तनथी स्पष्ट समजाशे के निश्चय सम्यग्दर्शननु निश्चयरुप लक्षण पोताने पोताना शुद्धात्म स्वरुपनी स्वसंवेदनरुप एवी निर्विकल्प थती के होती ते छे, अने तेनु उपचाररुप लक्षण सम संवेगादि भावोमा जोडाणरुप ... अनित्य प्रवृत्ति थती के होती ते छे। आम होवाथी सम्यकदृष्टी जीवनी ज्यां ज्या दशा ... रागरुप जोडाणथी रहीत एवी निर्विकल्प दशा वर्तती होय छे, त्या त्या शुद्धोपयोगरुप ... एकत्वरुप अतर स्थिरतानु होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अपेक्षाए तेने एटले एवा ते निश्चय ... दर्शनने वितराग सम्यग्दर्शन ए नामथी सबोधवा योग्य छे, अने ज्या ज्या निमित्त ... प्रकारना रागनी जोडाणरुप प्रवृत्ति वर्तती होय छे, त्या त्या सम संवेगादि एवा ... पयोगरुप भावोनु होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अपेक्षाए तेने एटले एवा ते निश्चय ... सराग सम्यग्दर्शन ए नामथी सबोधवा योग्य छे, अने ए ज शास्त्रस्थलो के उपरोक्त ... कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपूर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे :

> हवे अष्टात्मक अंग अहिं, कहुं सम्यकत्वना ते विचार।
> निःशंकता निष्कांक्षीता, निर्विचिकित्सा त्रीजुं तुं धार॥
> अमुढदृष्टी ने उपगुहन, स्थितिकरण जाण छट्ठुं ...
> सातमु वात्सल्य वर्ते नित्य, प्रभावना आठमु जाण ...

अन्वयार्थ—हवे अहिं तने सम्यग्दर्शनना अष्टात्मक अंग कहु छुं ते ... अंग-निःशंकता, बीजुं-निष्कांक्षीता, त्रीजु-निर्विचिकित्सा, चोथुं-अमुढदृष्टी, पांचमुं-... करण, सातमु-वात्सल्य, अने आठमुं-प्रभावना, एम अष्टात्मक अंग ... अनुक्रमे प्रगटपणु थाय छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना ...

विशेषार्थ—सम्यग्दर्शननी उपलब्धी थता मुख्यत्वे करी ... अगनु एटले तथात्म गुण अवस्था विशेषनु स्वरुप अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

निःशंकता

जिनाशय तत्त्वार्थ बोधना विषे रहेला संशयात्मक भावोनो ... मधुर-परिणामनुं शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे अभावपणु थई, त्या नि... प्रगटेली प्रगटपणु थवु ते।

नेण प्रगटेलु ... ी पण

निष्कांक्षीता

समस्त पर द्रव्य जन्य भावोमां रागरुप वाञ्छानु शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे अभावपणुं थई त्यां निष्कांक्षीतारुप एवी परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते ।

निर्वीचिकित्सा

समस्त पर द्रव्य जन्य भावोमा द्वेषरुप ग्लानीनु शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे अभावपणुं थई त्यां निर्वीचिकित्सारुप एवी परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवु ते ।

अमुढद्रष्टी

जिनाशय तत्वार्थ बोधना के सुदेवादि त्रयात्मक तत्वोना निर्णयमा रहेला विपर्यात्मक भावोनु शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे अभावपणुं थई त्यां अमुढद्रष्टीरुप एवी परम गुण अवस्था विशेषनु प्रगटपणुं थवु ते ।

उपगुहन

शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी जे विकार जन्य अशुद्धता ते वर्तमान उदयरुप होवा छतां के थवा छता पण तेनाथी भिन्न लक्षणरुप एवा पोताना त्रीकाळी स्वभावने ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप शुद्ध वस्त्रथी ढांकवारुप एटले तयारुप दोषथी पोते पोताना स्वभावने अलीप्त राखवारुप एवी उपगुहनरुप परम गुण अवस्था विशेषनुं प्रगटपणुं थवुं ते ।

स्थितिकरण

ज्ञानादि सम्यक त्रयनी ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरता थवाना हेतु लक्षने अवलंबी ते अर्थे सन्मुखपणानी पुरुषार्थमा पोताना विपर्यात्मक रुचीना वलणने प्रेरीत करवु, एवी ते स्थितिकरणरुप परम गुण अवस्था विशेषनु प्रगटपणुं थवुं ते ।

वात्सल्य

परिषह उपसर्गादि जेवा प्रतिकुल प्रसंगमा पण शुद्ध सम्यग्दर्शनना बळे त्यां स्वरुप लक्ष न चुकवारुप के थती शिथिलतानु अभावपणु करवारुप एवा वात्सल्यरुप परम गुण अवस्था विशेषनु प्रगटपणु थवु ते ।

प्रभावना

शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मनुं उत्कर्षपणुं करवाना हेतु लक्षने अवलबी ते अर्थे अत्यन्त विर्योल्लास

भाव पुर्वक स्वभाव एकत्वरुप अतर स्थिरताना पुरुषार्थमा योजाय के तेवा आत्मार्थी जीवोने त्या प्रकारना बोध सन्मुख प्रेरीत थवुं एवी प्रभावनारुप परम गुण अवस्था विशेपनु प्रगटपणु थवुं ते।

आ प्रमाणे सम्यग्दर्शनना अष्टात्मक अगनु स्वरुप छे, अने ते सर्व सम्यग्दृष्टी जीवोने शुद्ध परिणामे स्वरुप पुर्णता पर्यंत सदा टकीने ज रहे छे, अने ए पण तेनी शक्ति विशेपनु आश्चर्यकारक महात्म्य विशेष प्रशशवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेपथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> अहि सेण विपे समता दीसे, वळी नेणे न लेप विकार।
> ते साथे वेण मधुर ने, होय अपुर्वता अपार॥
> करुणा कोमलता पण चित्त, परमार्थ लक्षे होय स्थित।
> प्रसन्नता मुद्रामां होय, सर्वत्र सम दृष्टीए जोय॥२॥

अन्वयार्थ—वळी अहिं तथारुप गुण अवस्था विशेपना प्रगटपणाथी [illegible] शारिरीक चेष्टाओना विपे पण समता भाव जोवामा आवे छे, एटले मनादि योगो [illegible] तारुप परिणामने भजता होय छे। वळी नेण कहेता नेत्रोना विपे पण अश मात्र [illegible] ते साथे वेण कहेता वचननु मधुरपणु अने अपुर्वपणुं पण अपार कहेता बेहद होय [illegible] कोमलतादि पण तेना चित्तना विपे परमार्थ लक्षे स्थित होय छे। वळी तेनी [illegible] विपे पण प्रसन्नता छवाई रहेली होय छे, अने सर्वत्र ते सम दृष्टीए जुए छे [illegible] जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेपार्थ—सम्यग्दृष्टी जीवने तथारुप गुण अवस्था विशेपनु [illegible] शारिरीक चेष्टाओना विपे पण विशेपे करी समता भाव जोवामा [illegible] अवस्थाना बळे अनेक प्रकारना पर निमित्त जन्य भावोमा विशेष [illegible] अने तेथी मनादि योगो त्या स्थिर परिणामने भजता होय ए [illegible] कहेता नेत्रोना विपे पण अश मात्र विकार होतो नथी, ते पण [illegible] एवु तेना अंतरना विपे विशेप प्रकारे निर्विकारपणु ज होवानु [illegible] पणु अने अपुर्वपणुं होवानु मुख्य कारण पण तथारुप गुण [illegible] एवी मती श्रुतरुप निर्मल ज्ञान अवस्थानु ज छे, अने तेनुं [illegible]

निर्मल
अहिं
भाव

श्रवण न करी होय तेवी आत्म स्पर्शी, अपुर्व आत्मार्थ गुण प्रेरक अने शांत रसोत्पादक एटले वैराग उपशम भावने पोषण आपनारी होय छे । वळी ते साथे करुणा कोमलतादि पण तेना चित्तना विषे परमार्थ लक्षे एटले सामान्यरुप एवा वस्तु स्वभावे सर्वे जीव सिद्ध सम शुद्ध होवा छता विशेषरुप एवी पर्यायात्मक दृष्टीए सौ जीव पोताना अज्ञानात्मक भावने वश थई असीम दुःखरुप एवा संसारना विषे भवथी अने भावथी अनेक प्रकारना बहु विपाकने अनुभवी रह्या छे, ते जीवो बोध बीजने पामो, स्वभाव स्थिरताने पामो, एवा प्रकारनी निष्कारण करुणात्मक बुद्धी, अने दृष्यावलोकनमां हृदयनु अती कोमलपणु तेना अंतरना विषे स्थित होय छे । वळी तेनी मुद्रा कहेतां मुखाकृतिना विषे पण अंतरंग निराकुल स्थिरताना लीधे सहज प्रसन्नता छवाई रहेली होय छे, अने ते साथे तयारुप निराकुल स्थिरता तरफ उपयोगनुं सहज ढळावपणुं रहेतु होवाथी सर्वत्र ते सम दृष्टीए जुए छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

ते साथे निस्पृहता अने, होय निर्भयता मन स्थिर ।
निडरता उदारता, क्षमावंत वळी गंभीर ॥
सरलता मध्यस्थता होय, विशाल बुद्धीथी सौ जोय ।
वळी एकत्वपणे के असंग, असहाईपणे रहेवानो उमंग ॥१०॥

अन्वयार्थ—वळी ते साथे निस्पृहपणु, निर्भयपणु, निडरपणुं, उदारपणुं, क्षमावंतपणुं, अने गंभीरपणुं आदि निर्मळ अवस्था पण तेना चित्तना विषे स्थिरपणे वर्तती होय छे। वळी ते साथे सरलपणुं, मध्यस्थपणुं, अने बुद्धीनु विशालपणु पण होय छे, अने तेथी सर्व कोर्ट अवलोकन तेनु तयारुप लक्षे एटले विशाल बुद्धी के विशाल दृष्टीपुर्वक ज थतु होय छे । वळी तेने एकत्व के असंग पणे असहाईपणे रहेवानो पण उमंग होय छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थ श्रवण कर।

विशेषार्थ—वळी अहिं एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवना अंतर परिणामना विषे मोह जन आकांक्षानु अभावपणु होवाथी त्या निस्पृहपणुं सहज स्थिर परिणामे वर्ततु होय छे । ते साथे पोता पोताना चैतन्यात्मक स्वभावनु सर्व प्रकारे निःशंकपणुं के दृढ स्वरुप प्रतितीपणु होवाथी त्या सतात्म भपना अभावरुप एवु वास्तविक निर्भयपणुं वर्ततु होय छे, अने तेम होवाथी पोते पोतानो स माथावर प्रकृतिमा के परिषह उपसर्गादि जेवा विकट प्रसंगमा पण निडरताने अग्र स्थान आपी आत्मा

भावने अनुकूलपणे वर्ते छे, अने ते साथे संकुचित द्दष्टीनुं सर्वथा अभावपणु होवाथी सर्वत्र ते विशेष प्रकारे उदार चित्तथी वर्ते छे। वळी ते साथे सर्वत्र मैत्री भावनु मुख्यपणुं होवाथी सामा जीवना अनुचित कार्य के कोई दोष प्रत्ये पण त्या पोताना विषे क्षमावतपणुं वर्ते छे, अने ते साथे तथारुप दोष गुम राखवारुप एवु गंभीरपणु पण विशेष प्रकारे होय छे। वळी ते साथे क्वचित कोई विसर्जन उपयोगे थयेला एवा पोताना अल्प पण तत्व संबधी दोषने ते दोष रुप स्वीकारी तेनो नम्र भावे परिहार करवारुप एवु पोताना विषे सरलपणुं पण परमार्थ लक्षे वर्ततुं होय छे। वळी ते साथे तेना कोई तत्व विशेष अर्थनो वास्तविक परमार्थ पोताने ख्यालमा न आवतो होय तो तेनो योग्य निर्णय थता पर्यंत धीरजने केळववारुप एवु पोताना विषे मध्यस्थपणु पण परमार्थ लक्षे वर्ततुं होय छे। वळी ते साथे तेना कोई तत्व विशेष अर्थना निर्णयमा उपयोगने प्रेरीत करता त्या शब्दार्थ, नयार्थ, मतार्थ, आगमार्थ, अने भावार्थ एम अनुक्रम पुर्वक अंतर समालोचना करवारुप एवी पोताना विषे विशाल बुद्धी होय छे, अने तेथी ते द्वारा ते कोई अपेक्षा विशेषने अवलबी सर्वत्र तथारुप लक्षे एटले विशाल बुद्धि के विशाल द्दष्टीपुर्वक ज जुए छे। वळी ते साथे पोताने पोतानु एकत्वपणु के अभगपणुं भास्यमान थवाथी एटले निश्चय नयथी शुद्ध टंकोत्कीर्ण एवो पोतानो अखड ज्ञायक स्वभाव अनुभवमा आववाथी ते तथारुप लक्षे पोतानी एकत्वरुप के अभग एवी अप्रमत्त स्थिरता थवारुप सद्‌भावनामा उपयोगने सम्यक योगे प्रेरे छे, अने ते साथे पोताना चैतन्यात्मक स्वभावनु निर्पेक्षपणु होवानुं विचारी एटले स्वाधिन एवा स्वरुप परिणमनमा परनी अपेक्षा किंचित मात्र पण रहेती नथी, एम वस्तु स्वभावनो निर्णय करी, तथारुप लक्षे पोते असहाईपणे रहेवानी एटले पोते पोताने अवलबीत थई पुर्ण स्वरुप वितरागता पदे समाई जवानी सद्‌भावनामा उपयोगने सम्यक योगे प्रेरे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> उपलब्धी सम्यक्त्वनी, थता एम अनेक प्रकार।
> निर्मल अवस्था गुणनी, प्रगटे अंतर एम तु धार ॥
> सम्यक्त्वनुं एवुं महात्म्य, मे समजाव्यु करी तारतम्य।
> थई ए पंचम अवस्थानी वात, हवे छठ्ठी बोधु सुण भ्रात ॥११॥

अन्वयार्थ—आ प्रमाणे सम्यग्दर्शननी उपलब्धी थता तेनी साथे अनेक प्रकारनी निर्मल गुण अवस्था प्रगटे छे, एम तु अतरना विषे धार। आवु सम्यग्दर्शननु परम महात्म्य में तने अहिं तारतम्य करी एटले विशेष पृथक्करणपुर्वक स्पष्ट करी समजाव्यु। अहिं सुधी पचम अवस्थानी वात

थई। हवे तने छट्ठी अवस्था बोधु छुं, ते हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेपार्थ—आ उपरथी सम्यग्दर्शननुं परम महात्म्य सौ कोई आत्मार्थी जीवने समजाशे के जेनी उपलब्धी थता, अनेक एवी निर्मल गुण अवस्थानी उपलब्धी सहज तेनी साथे थई जाय छे, के थती जाय छे, अने तेथी मोक्ष मार्गनी शरुआतमां के तेनी सर्व आत्मीक साधनामा तेनु मुख्य-पणु होवाथी सर्व आत्मज्ञ पुरुषोए तेनु सर्वोत्कृष्टपणु ठाम ठाम जिनागमना विषे दर्शाव्युं छे, तेनी विशेष विशेष तत्व सिमामा वरी जे कोई जिज्ञासु जीव तेनी प्राप्तीना वास्तविक मार्गने आत्मार्थे सद्विवेकपुर्वक अनुसरे छे, ते अवश्य तेनी प्राप्ती करी शके छे। तथारुप एवी आ वस्तु प्राप्तीनो मार्ग अने तेनी पुर्णता मात्र एक पोताना वस्तु स्वभावमा ज अभेद परिणामरुप होवाथी कोई पण स्वरुप जिज्ञासु जीवे तथारुप एवा पोताना वस्तु स्वभावने भेद विज्ञानपुर्वक अवलबीत थवुं ते ज तेनी प्राप्तीने सम्यक उपाय छे।

उपरोक्त बोधना परमार्थ लक्षे स्वरुप प्राप्तीना वास्तविक ध्येयपुर्वक थयेली एवी जे स्वभाव सन्मुखता ते ज शुद्ध सम्यग्दर्शननो प्राप्तीना निश्चयात्मक हेतुरुप छे। तथारुप स्व समयने अतर्मुख अवलबीत थता, त्या जे निर्मल अवस्थानी उपलब्धीरुप एवी स्वरुप प्रतिती थाय छे, ते ज प्रतित सम्यग्दर्शनरुप एवी स्वरुप प्राप्तीनी निर्णयात्मक छे। जीव तथारुप स्वरुपानुसंधानपुर्वक स्वरुपने थती, के थवा योग्य एवी जे जे निर्मल अवस्थाना चिंतवनमा उपयोगने प्रेरे छे, ते ते निर्मल अवस्था रुपे ते बनी जाय छे, अर्थात तथारुप लक्षे सम्यक्त्वना स्वरुपनी चिंतवना करनार जीव सम्यक्त्व रुप ज बने छे, अप्रमत्त भावनी चिंतवना करनार जीव अप्रमत्त अवस्थाने अनुभवे छे, अने केवल्य दशानो चिंतवना करनार जीव केवल्य स्वरुपने ज पामे छे। मतलब के सम्यग्दर्शनथी सिद्ध पर्यंतनी थती के थवा योग्य एवी शुद्ध चैतन्यात्मक वस्तु स्वभावनी अवस्था विशेषनु जे जे चिंतवन करवामा आवे छे, ते ते चिंतवनरुप निर्मल अवस्था विशेषनी ते अवश्य प्राप्ती करे छे, अर्थात ते स्वरुपे ते बने जाय छे, अने ए ज स्व सन्मुख थयेली शुद्ध एवी द्रव्यात्मक दृष्टीनु फल छे।

आ उपरथी सम्यग्दर्शननुं महात्म्य अने तेना धारक पुरुषनी निर्मल गुण अवस्था केवा प्रकारे होय छे, ते सहज लक्षमा आवशे, अने ते उपरथी पोतानी जीवन प्रगतीना हेतुरुप एवा परमार्थ मार्गनो वास्तविक लक्ष पण तथारुप बोध विशेषथी थशे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं छट्ठी अवस्थाना बोध विशेषनु आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

(छट्टी बोध अवस्था अधिकार)

छट्ठी अवस्थाना विषे, बोध तारानी प्रभा समान ।
तेथी उज्जवळरुप अहिं, सम्यकज्ञानादि अंतर जाण ॥
तेथी सेवना तेनी नित्य, करे थवा स्वभावे स्थित ।
लावी अतरमां उल्लास, स्वरुप प्रतितीनो ते खास ॥१॥

अन्वयार्थ—छट्ठी अवस्थाना विषे बोध तारानी प्रभा समान एटले जेम तारानो प्रकाश रत्नना प्रकाश करता विशेष जोरदार होवाथी विशेष तेज रुपे एक सरखो स्थिर टकी शके छे, तेम सम्यकज्ञान दर्शनादिरुप आतम बोधनु अस्तित्व पण अहिं पुर्व अवस्था करता पण काईक विशेष शुद्धता अने स्थिरतारुप परिणामे एक सरखुं टकी शके, तेवु योग्यपणु तेना विषे होय छे, अर्थात उपलब्धरुप थाय छे, अने तेथी अहिं तथारुप योग्यतानुसार ते परिणमन तेना अतरना विषे उज्जवळ रुपे वर्ततु होय छे, एम तु जाण, अने तेथी ते स्वभाव स्थित थवा अर्थे नित्य तथारुप सेवना तथा प्रकारनी स्वरुप प्रतितीनो अंतरना विषे खास उल्लास लावीने करे छे, एम हे शोप्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जे जीवने सम्यकज्ञान दर्शनादिरुप एवी निर्मल अवस्थानी उपलब्धी थाय छे, ते जीवने तथारुप निर्मल अवस्थानु सम्यक भान पोताने पोताना प्रत्यच एवा ते स्वरुप सवेदनथी स्वभावीकज थई जाय छे, अने ते द्वारा पोताने पोतानु एवु ते स्वरुप सवेदनरुप प्रतितीपणु आवता त्या अत्यंत उल्लासीतपणु प्रगटी ते ज क्षणथी पोतानी निर्यात्मक रुचीनु वलण मात्र एक स्वभाव स्थिरताना हेतुरुप एवा सन्मुखवर्ती पुरुषार्थने मुख्यपणे अवलंबीत थाय छे, अने ते स्वरुप पुर्णता पर्यंत मात्र एक पोताना सम्यक त्रयरुप एवा शुद्ध ज्ञायक स्वभावनी मुख्यतापुर्वक एक सरखो टकीने पण रहे छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे ।

प्रश्न—सम्यग्दर्शन ए श्रद्धा गुणनी निर्मल पर्यायनु सुक्ष्म परिणमन होवाथी परोक्ष एवा मती श्रुत ज्ञानने तो ते विषय नथी, अने वर्तमानमा केवळज्ञान प्रत्यक्षरुप नथी, तो पछी तेनी उपलब्धीनु सम्यक भान जीवने कई रीते थई शकवा योग्य छे ?

उत्तर—सम्यक पदवी अलंकृत थयेल एवा ते मती श्रुतरुप ज्ञानथी ज तेनी उपलब्धीनुं सम्यक् भान थई शकवा योग्य छे, अने ते समये स्व समयनु एटले स्व तरफना ज्ञान निशेष उपयोगनु मुख्यपणुं होवाथी ते उभय ज्ञान त्या परोक्षरुप नहि पण नियमा प्रत्यक्षरुप ज होय छे। मतलब के ज्यां ज्या मती श्रुतरुप एवा ते ज्ञानोपयोगनी पर तरफ एटले शुभाशुभ उदयिक भावमा प्रवृति होय छे, त्या त्यां मन इंद्रियादिना निमितपणानी अपेक्षाए ते उभय ज्ञानने परोक्षरुप कहेवा योग्य छे, अने ज्या ज्या तथारुप ज्ञान निशेष उपयोगनी स्व तरफ एटले स्वरुप एकत्व के तेनी अतर स्थिरतारुप प्रवृति होय छे, त्यां त्या मन इंद्रियादि निमितपणानुं अभावपणु थतुं होवाथी ते अपेक्षाए ते उभय ज्ञानने प्रत्यक्षरुप कहेवा योग्य छे।

प्रश्न—जो एम ज होय तो जिनागमना विषे सम्यग्दर्शन मती श्रुत ज्ञान गोचर न होवानु निरुपण करवानो मूळ हेतु शुं छे ?

उत्तर—तथा प्रकारना निरुपणनो मुळहेतु केवळज्ञानना जेम ते मती श्रुत ज्ञाननो प्रत्यक्ष विषय नहि होवानी अपेक्षाए छे, पण पोताना विषे उत्पन्न थयेल एवा ते सम्यग्दर्शनने तथारुप एवा ते मती श्रुतज्ञानथी कोई पण प्रकारे जाणी न ज शकाय एम कहेवानो खास एवो शास्त्रकारनो हेतु नथी। जो एमज तेम मानवामा आवे तो कुमति, श्रुतरुप एवा ते मिथ्याज्ञाननी निवृतिपुर्वक सम्यक पदवी अलकृत थयेला एवा ते मती श्रुतज्ञाननु के अविरती सम्यग्दृष्टी एवा चतुर्थ गुणस्थाननु महात्म्य काई पण प्रकाशवा योग्य रहेतु नथी। मतलब के अज्ञानरुप तिमीर अने ज्ञानरुप प्रकाश ए बनेनुं त्या अन्युनाधिकपणु ठरे छे।

उपरोक्त बोधनी तत्व मिमासा करतां एम सिद्ध थई शकवा योग्य छे के शुद्ध क्षायिक परिणामरुप एवा केवळज्ञान स्वभावमा लक्षण लक्ष्यना भेदत्व विना स्व पर वस्तुनो निरधार युगपत थई शकवा योग्य, एवु संपुर्ण योग्यपणुं होवा छता वर्तमानकाळे तेनुं अभावपणु होवाथी ते अपेक्षाए सम्यग्दर्शननु जाणपणु परोक्षरुप छे, अने क्षायोपशमीक परिणामरुप एवा मती श्रुत ज्ञानमा लक्षण लक्ष्यना भेदत्व पुर्वक स्व पर वस्तुनो निरधार क्रमथी थई शकवा योग्य, एवु अल्पत्व योग्यपणु होवा छता वर्तमान काळे तेनु सद्भावपणुं होवाथी ते अपेक्षाए सम्यग्दर्शननु जाणपणु प्रत्यक्ष रुप छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे।

आ उपरथी स्पष्ट ख्यालमा आवशे के सम्यग्ज्ञानी पुरुष, पोताने सम्यग्ज्ञान उत्पन्न थवानो निर्णय जेम ते सम्यग्ज्ञान वडे करी शके छे, तेम ते ज्ञान स्व पर प्रकाशक होवाथी अने तेनी साथे

सम्यग्दर्शनना अविनाभावी सबध रहेवाथी तेनो पण ते ज समय निर्णय त्या स्वभावीक ज थई जाय छे, एम वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य, अने तेने सम्यक प्रकारे अवधारवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये पंचात्मक ज्ञानना बोध सबधी याचना करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, पुछे प्रश्न करी बहु मान।
पचात्मक सु ज्ञाननुं, शु स्वरुप कहो भगवान॥
तेना प्रत्यक्ष परोक्षरुप शुं, भेद विशेषे पुछुं हुं।
गुरुजी कहे समजावुं ते, सुण तुं सन्मुख भावे ए॥२॥

अन्वयार्थ--अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये तेमनु बहु मान करी प्रश्न करे छे के हे भगवत! पाच प्रकारना सम्यग्ज्ञाननु शु स्वरुप छे, ते मने कहो, अने तेना प्रत्यक्ष परोक्षरुप विशेष भेद ते शु? अर्थात क्या ज्ञानने प्रत्यक्ष के परोक्षरुप कहेवामा आवे छे, ते पण हुं आप प्रभुने पुछु छुं, अहि गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के ते हु तने समजावु छुं ते हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— आत्मीक साधनानी प्राथमीक भुमीका ज्ञानथी ज शरु थाय छे, अने तेथी तेनु महत्वपणु पण जिनागमना विषे ठाम ठाम दर्शाववामा आव्युं छे, अने ते अनुसार आजे जैन दर्शनना विषे केवा अल्प जीवो तेनी उपासना पण करे छे, तेम छता अश मात्र पण तेओ आत्मार्थ हेतुभुत एवा परमार्थ मार्गनी अतरग सन्मुखताने पाम्या होय के पामता होय तेम देखातु नथी, तेनुं मुख्य कारण ज्ञानना वास्तविक स्वरुपनु पोताना विषे अबोधपणु होवानु ज छे। तथा प्रकारनी अबोधतानो विशेष प्रकारे परिहार उपरोक्त सुसाधकने ज्ञान सबधीना परमार्थ बोधनी विशेष सन्मुखताना बळे होवा छता के थवा छता पण ते विशेष प्रकारे उपयोगनी अतरग सन्मुखता पुर्वक तथारुप एवा ते ज्ञान सबधीना विचारने मुख्य करी पोतानी विशेष समाधानी अर्थे श्री सद्गुरु सन्मुख ते सबंधी प्रश्न उपस्थित करे छे। एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

मुख्यपणे ज्ञान गुणनी, अवस्था अष्ट प्रकार।
तेमां पंचात्मक ज्ञान ने, त्रण अज्ञान एम तु धार॥

तेमां मती श्रुत आदिना ज्ञान, सांव्यवहारीक प्रत्यक्ष जाण।
अवधि मनःपर्यय विकल प्रत्यक्ष, सकल प्रत्यक्ष केवळ ले लक्ष ॥३॥

अन्वयार्थ—ज्ञान गुणनी अवस्थाना मुख्यपणे पाच ज्ञान अने त्रण अज्ञान एम एकंदर आठ प्रकार छे, एम तु धार, तेमां मती श्रुत एवा जे आदिना बे ज्ञान ते सांव्यवहारीक प्रत्यक्ष छे, एम तु जाण, अने अवधि मनःपर्यय ए विकल प्रत्यक्ष अने केवळज्ञान सकल प्रत्यक्ष छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी तेने लक्षमां ले।

विशेषार्थ—ज्ञानादि गुण समुदायनो धारक एवो जे गुणी आत्मा तेमां सामान्यपणे अनेक गुणो रहेला छे, अने विशेषपणे मात्र एक ज्ञान गुण छे, ते ज्ञान गुण स्व पर प्रकाशक होवाथी तेमा स्व पर स्वरुपने के वस्तु मात्रने जाणवानु सामर्थ्य स्वभावीक ज शक्ति विशेष रुपे रहेलुं छे, अने तेम होवाथी वस्तु मात्रनो निर्णय पण ते द्वारा ज थई शके छे। तथारुप ज्ञान गुणनी सम्यक् ज्ञाननी अपेक्षाए पाच, अने मिथ्याज्ञाननी अपेक्षाए त्रण एम एकंदर आठ अवस्थाओ छे। सम्यक् ज्ञानमा मती, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय अने केवळ ए पाचनो समावेश थाय छे, अने मिथ्याज्ञानमा कुमती, कुश्रुत, अने विभंग ए त्रणनो समावेश थाय छे।

उपरोक्त पाच ज्ञानमा आदिना चार ज्ञान क्षयोपशम लब्धीरुप होवाथी ते जीवनी अपुर्ण अवस्थामा ज होय छे, अने अंतनु केवळज्ञान क्षायिक लब्धीरुप होवाथी ते जीवनी पुर्ण अवस्थामा ज प्रगटे छे। आम होवाथी मती श्रुतरुप एवा आदिना बे ज्ञानथी थता पदार्थ विषयमा मन अने इंद्रियोनी अपेक्षा रहे छे, अने ते वडे ते रुपी पदार्थने एकदेश स्पष्ट जाणे छे, अने तेथी तेने सांव्यवहारीक प्रत्यक्ष कहेवामा आवे छे, अने अवधि मनःपर्यय ए बे ज्ञानथी थता पदार्थ विषयमा तथारुप ज्ञाननी जाणवारुप शक्तिनी योग्यतानुसार ते मन अने इंद्रियोनी अपेक्षा विना, अमुक मर्यादित प्रमाणमा रुपी पदार्थने स्पष्ट जाणे छे, अने तेथी तेने विकल परमार्थीक प्रत्यक्ष कहेवामा आवे छे, अने केवळ-ज्ञानमा त्रीकाळवर्ती एवा समस्त पदार्थोने युगपत स्पष्ट जाणवारुप शक्ति विशेषनुं सर्वथा प्रगटपणु होवाथी त्या मन अने इंद्रियोनी अपेक्षा किंचीत मात्र पण रहेती नथी, अने तेथी तेने सकल परमार्थीक प्रत्यक्ष कहेवामा आवे छे।

उपरोक्त पाच ज्ञानमा मती श्रुतरुप एवा आदिना बे ज्ञाननुं आत्मीक साधनामा मुख्यपणुं होवाथी अहिं तेनु परमार्थ लक्षे विशेष प्रकारे निरुपण करवामा आवे छे।

मतीज्ञान

शुद्ध चैतन्य धन स्वभावना वास्तविक बोधपुर्वक त्रयात्मकरुप एवा मतीज्ञाननु एटले मतीज्ञानरुप लब्धी, भावना अने उपयोगनु स्वाश्रीत एवु सन्मुखवर्ती वलण दर्शनोपयोगपुर्वक थवु ते।

श्रुतज्ञान

मतीज्ञान पुर्वक जाणेला एवा चैतन्यात्मक बोधना विशेष अतर्मुख चिंतवनमा के तथारुप लक्षे अतर स्थिरता करवामा त्रयात्मकरुप एवा श्रुत ज्ञाननु एटले श्रुतज्ञानरुप लब्धी, भावना, अने उपयोगनु स्वाश्रीत एवु सन्मुखवर्ती वलण थवु ते।

उपरोक्त लब्धी, भावना, अने उपयोगना स्पष्टार्थ बोधने विचारीए तो लब्धी एटले जीवना पुरषार्थ बळे मतीज्ञानना उघाडमा मतीज्ञानावरण कर्मनो अने श्रुतज्ञानना उघाडमा श्रुतज्ञानावरण कर्मनो थयेलो एवो जे जीवनो ज्ञान विशेष क्षयोपशम तेनुं चैतन्यात्मक बोधना अंतर्मुख लक्षे स्व तरफ ढळवु एटले शुद्धोपलब्धीरुप एवुं तेनुं स्व सन्मुख परिणमन थवुं ते। भावना एटले ते लब्धीरुप शक्तिनु निरतर ते अनुसार स्वभाव स्थिरता थवारुप एवु सन्मुखवर्ती वलण रहेवु ते, अने उपयोग एटले तथारुप लक्षे अतर्मुख जोडाणमा उपयोगनु प्रेरीत थवु ते। एम लब्धी, भावना, अने उपयोगना स्पष्टार्थ बोधनो परमार्थ छे।

आ उपरथी समजाशे के शुद्ध चैतन्य धन स्वभावना वास्तविक बोधरुप एवुं ज्यों सम्यकरुप शुद्ध परिणमन वर्ते छे, त्यां त्रयात्मकरुप एवा ते मतीश्रुत ज्ञाननुं एटले मतीश्रुत ज्ञानरुप लब्धी, भावना, अने उपयोगनुं सन्मुखवर्ती वलण होय छे, अने ज्या तथारुप स्वभावना अवास्तविक बोधरुप एवु ज्या असम्यक्रुप अशुद्ध परिणमन वर्ते छे, त्या मती श्रुत ज्ञानरुप एवी ते उभयात्मक लब्धीनु विमुखवर्ती वलण रहेवाथी स्व प्रत्येनी भावना उपयोगनुं सर्वथा अभावपणु होय छे, अने तेथी परमार्थ दृष्टीए तेने मती श्रुत अज्ञान ज कहेवा योग्य छे।

आ प्रमाणे पचात्मक ज्ञानना परमार्थ बोधने आत्मार्थी जीवे पुन: पुनः विचारवा योग्य छे, अने तेमां मतीश्रुतरुप एवा जे आदिना बे ज्ञान ते कुमती श्रुतरुप अज्ञानभावनी निवृत्तिना अने आत्मार्थ भावनी सन्मुखताना मुळ हेतुरुप होवाथी तेनी अतर्मुख साधनाने सम्यक योगे अवलबवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये मतीश्रुतरुप एवा ते बने ज्ञाननी अतर्मुख साधनाना सम्यक उपायनी याचना करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहि, करी वदन पुछे एम ।
मती श्रुत बे ज्ञाननी, थाय अंतर साधना केम ॥
लक्षण भेदे तेनो शु, होय अनुक्रम पुछुं हु ।
गुरुजी कहे सांभळ भ्रात, लक्षण भेदे कहुं ते वात ॥४॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये वदन करी एम पुछे छे, के हे भगवत ! मती श्रुतरूप एवा ते बने ज्ञाननी अतर्मुख साधना केम थाय ? अने तेनो लक्षण भेदे शु अनुक्रम होय ? ते हु आप प्रभुने पुछुं छुं । अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे भ्रात ! ते वात हु तने लक्षण भेदे कहुं छुं, ते तु आ जिन प्रवचनरूप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—मतीश्रुतरूप ए एक ज ज्ञान गुणनी क्षयोपशम लब्धीरूप एवी बे जुदी शक्तिओ छे, अने जुदी शक्ति होवाथी बनेनी परिणमनशील अवस्थाओनु पण भेदत्वपणु पोत पोताना कारणे स्वभावीक ज रहेलुं छे, तेनी अतर्मुख साधनाना मुख्यत्वे करी बे विभाग थई शके छे, एक मती श्रुत ज्ञाननु सम्यक्रूप परिणमन थवारूप, अने बीजी ते अनुसार तेनी ज्ञायकरूप स्वभाव स्थिरता थवारूप । आवा प्रकारनी अतर्मुख साधनामा उपरोक्त बने लब्धीओ परस्पर अविनाभावी संबधरूपे टकीने पोत पोतानी परिवर्तनशील अवस्थाओ पोत पोताना कारणे क्रमथी करे छे, ते क्रम जीवनी अतर्मुख साधनामा लक्षण भेदे केवा प्रकारे होय छे, ते एक महत्वनो प्रश्न उपरोक्त साधकने उपस्थित थतां, ते पोतानी विशेष आत्मार्थ सन्मुखता अर्थे ते सबधीना वास्तविक बोधनी श्री सद्गुरु प्रत्ये याचना करे छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

अवग्रहादि मतीज्ञानना, चार भेदने अवलंबी कोय ।
स्व सन्मुख विचारणा, करी निर्णय त्यां स्वनो होय ॥
ते पछी करी श्रुतज्ञानने मुख्य, थाय ते विशेष अंतर्मुख ।
त्यां भेदविज्ञानथी साधे ते, सम्यक्त्व ने स्व स्थिरता ए ॥५॥

अन्वयार्थ— प्रथम जीवे मतीज्ञानना अवग्रहादि चार भेदने अनुक्रमे अवलंबी अने त्या स्वसन्मुख विचारणाने मुख्य करी पोतानी चैतन्य सत्ता होवा संबधीनो निर्णय करवा योग्य छे, अने त्यार बाद त्या श्रुतज्ञानना उपयोगने मुख्य करी, तेने विशेष अंतर्मुख प्रेरी अने तद्रूप श्रुत

विशेष उपयोगना बळे त्या भेदविज्ञान उत्पन्न करी ते द्वारा ते शुद्ध सम्यग्दर्शनने अने ते अनुसार स्वभाव स्थिरताने अनुक्रमे साधे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्म जिज्ञासु जीवे पोतानी प्राथमीक भुमीकामां सत्सग योगे सप्राप्त थयेला एवा आत्मार्थ बोधना अतर्मुख चिंतन अर्थे मतीज्ञानना अवग्रहादि चार भेदने अनुक्रमे अवलबी पोताना ज्ञानोपयोगने स्व सन्मुख विचारणामा प्रेरीत करवा योग्य छे, तेनो अनुक्रम निचे प्रमाणे छे।

अवग्रह

अनुत्पन्न अने अमिलन एवी पोतानी चैतन्य सत्ता होवा, मनधीना बोध विचारमा उपयोगने प्रेरीत करवो ते।

ईहा

तयारुप बोध विचारनी वर्द्धमानतापुर्वक तेना वास्तविक निर्णयमा उपयोगनु सन्मुखवर्तीपणु करवु ते।

अवाय

युक्ति अनुमानादिना अवलम्बनपुर्वक पोतानी चैतन्य सत्ता होवा सबधीनो वास्तविक निर्णय पोते पोताना ज्ञानथी करवो ते।

धारणा

पोते निर्णय करेला एवा पोतानी चैतन्य सत्ता होवा सबधीना बोधने अस्खलित स्मृति रुपे धारण करी राखवो ते।

अहिं सुधी थयेली सामान्यरुप एवी स्थुल बोधनी विचारणामा, के ते द्वारा थयेला स्व सबधीना निर्णयमा मात्र एक मतीज्ञाननी ज अपेक्षा रहे छे, अने तेथी तेना निमितभुत एवी मन इंद्रियोनु होवु अनिवार्यरुप होवाथी-ते अहिं अवश्य होय छे। त्यार बाद ज्यारे ते साधक जीव तथारुप वस्तु स्वभावना सामान्य विशेषात्मक धर्मनी अतर्मुख विचारणाने मात्र एक श्रुत विशेष उपयोगनी कहेता मात्र श्रुतज्ञाननी प्रधानरुप दृष्टी करी तेने भेदविज्ञानपुर्वक अवलंबीत थाय छे, अने ते द्वारा पोताना लक्षने क्रमे क्रमे स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करे छे, त्यारे स्व स्व तरफना ज्ञानोपयोगनी अत्यत विशुद्धीना बळे अतरगना विषे रहेला एवा मन योग सबधनी पृथक्तापुर्वक रागादि भावनी अतरसंधीनु क्रमे क्रमे अभावपणु थई जाय छे, अने तेम थता अहिं ते साधक जीव पोते पोताना विषे स्व सवेदनरुप एवा सुक्ष्म बोधनी अंतर्मुख स्पर्शणाने एटले अखड अभेद एवा ज्ञायकरुप शुद्ध स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताने पामे छे।

प्रश्न—मतीश्रुतरुप ए एक ज ज्ञान गुणनी बने लब्धीओ परस्पर अविनाभावी संबंध रुपे होवा छता अवग्रहादि चार भेदमा मात्र मतीज्ञाननु अने त्यार बाद श्रुतज्ञाननु एम एक ज पदार्थ विषयमा बनेनु भेद अवस्था रुपे परिणमन थवानो मुळ हेतु शु छे ?

उत्तर—तेनो मुळ हेतु पोत पोतानी कार्यात्मक शक्तिमा रहेला भेदत्वपणानुं ज छे, अने तेथी मती श्रुतरुप एवी बने लब्धीओ परस्पर अविनाभावी संबध रुपे हवीने, पोत पोतानी कार्यात्मक शक्तिनी योग्यतानुसार पोत पोताना कारणे भेद अवस्था रुपे परिणमन करे छे।

आ उपरथी तत्त्व शोधक जीवने समजाशे के पदार्थ विषयमा मती श्रुतरुप एवी ज्ञान गुणनी बने अवस्थाओनु परस्पर संबंधपणु होवाथी जो के बनेनी अपेक्षा रहे छे, परंतु ते बने अवस्थाओनु भेदरुप एवु स्वतंत्र परिणमन होवाथी अने ते साथे पदार्थ विषयमा पण भेदाभेद के स्थुल सुक्ष्म दृष्टीए तेना अनेक सामान्य विशेषात्मक धर्मनी तारतम्यता रहेती होवाथी कोई पण पदार्थ विषयमा ते पोत पोतानी भेदरुप अवस्थाने अवलंबीने ज पोत पोतानुं स्वतंत्र कार्य क्रमथी करे छे, अने तेम होवाथी स्व पर एवा कोई पण पदार्थ विषयमा, विषय करनार व्यक्तिना उपयोगनी तारतम्यानुसार ज्ञान गुणनी एवी ते बने अवस्थाओनुं मुख्य गौणपणु त्या स्वभावीक ज होय छे।

आ उपरथी अवग्रहादि चार भेदमा मतीज्ञाननु मुख्यपणुं होवानु मुळ कारण समजाशे, के त्या मतीज्ञानना विषयभुत एवी मात्र एक ज चैतन्य सत्ता होवा संबंधीनी विचारणानु के तेनु त्रीकाळवर्ती पणु होवा संबधीना निर्णयनु ज मुख्यपणु छे, अने तेथी त्या भेदाभेद के स्थुल सुक्ष्म दृष्टीनी, के चैतन्यात्मक वस्तुना सामान्य विशेषात्मक धर्मनी, सर्व अपेक्षानुं अभावपणु होवाथी तथारुप बोध विशेषना निमितभुत एवा श्रुतज्ञानतुं अभावपणु पण त्या स्वभावीक ज होय छे, त्यार बाद ज्यारे ते साधक जीव मतीज्ञानना विषयभुत (वाचक शब्दरुप एवा आत्माना सामान्य बोधने) पदार्थने मतीज्ञान पुर्वक जाणी, एटले चैतन्य सत्ता होवा संबधीनो वास्तविक निर्णय करी, पुनः तेनी उत्तर-तर्कणारुप एवा स्व संबधीना विशेष निर्णयमा भेदाभेद के स्थुल सुक्ष्म दृष्टीनी, के वस्तुना सामान्य विशेषात्मक धर्मनी, अंतर सन्मुखता पुर्वक योजाय छे, त्यारे त्या ज्ञान गुणनी मतीज्ञानरुप अवस्थानु अभावपणु थई ते जग्याए श्रुत विशेष कहेता भाव श्रुतज्ञानरुप अवस्थानु (वाचक शब्दरुप एवा आत्माना सामान्य बोधथी वाच्य एवी वस्तुनो विशेष बोध थवो ते) उपलब्धीपणु थाय छे, अने ते मतीज्ञान करता अति विशुद्ध होवाथी अने क्रमे क्रमे ते विशुद्धीनु स्व सन्मुख विचार श्रेणीना बळे वर्द्धमानपणु थवाथी ज सम्यक्ज्ञान दर्शनादिनी उत्पत्तिना, के स्व संवेदनरुप एवी स्वभाव स्थिरताना हेतुरुप पण बने छे

आ प्रमाणे मती श्रुत ज्ञाननु सम्यक्रूप परणिमन थवु ते मती श्रुत ज्ञाननी अंतर्मुख [illegible] पहेलो प्रकार छे, अने ते सम्यग्दर्शननी उपलब्धी पर्यंत टकीने रहे छे, अने त्यार बाद [illegible] साधनानु परिवर्तन थई बीजी अतर्मुख साधनानी शरुआत थाय छे, अने ते ज्ञानादि [illegible] ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरता थवारुप होवाथी ते स्वरुप पुर्णता पर्यंत एक सरखी इत्यादि [illegible] बने अतर्मुख साधनाना परमार्थने आत्मार्थी जीवे विचारवा योग्य छे, अने पोतानी प्राथमिक [illegible] कामा पहेली अंतर्मुख साधनाने, ते बीजी अतर्मुख साधनानी सिद्धीना हेतुरुप होवाथी [illegible] योगे अवलबवा योग्य छे।

उपरोक्त बोधनी तत्त्व मिमासा करता आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाशे के [illegible] ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप एवी शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभाव स्थिरतानु ज मुख्यपणु छे, [illegible] लब्धीमा ज्ञान गुणनी मती श्रुतरुप एवी बने अवस्थाओनु-सम्यक्रूप शुद्ध परिणमन [illegible] अने तेनी सिद्धी मतीज्ञानपुर्वक भाव श्रुतज्ञाननी अतर्मुख विचार श्रेणीने अवलंबवाथी [illegible] अने तेथी मती श्रुतरुप एवी ज्ञान गुणनी बंने अवस्थाओमा दर्शन विशुद्धीना [illegible] भाव श्रुतज्ञाननी अवस्था विशेषनु ज मुख्यपणु छे, के जे वडे, वस्तु स्वभावने [illegible] पोताना ज्ञानथी थई उपयोग सहज स्वभाव स्थिरताने पामे छे, अने तेथी [illegible] गुण विशेष परिणमनमा श्रुतज्ञानने प्रधानरुप गणी तेनी उपलब्धीना सन्मुखता [illegible] योगे योजावा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथा सुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। [illegible] साधकनी साधनात्मक प्रवृति सबधी आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> दृढपणु स्वभावनु, अहिं थाय [illegible]।
> ज्ञानादि स्व स्थिरता, थवा उल्लसे [illegible]।
> ज्ञप्ति क्रिया तेथी मुख्य, साधकने होय [illegible]।
> ते साथे सयम देशे धार, परमार्थरुप [illegible]॥७॥

अन्वयार्थ—जेम जेम अहिं ते सम्यग्दृष्टी जीवने [illegible] पामतु जाय छे, तेम तेम ज्ञानादि सम्यक्रूप स्वभाव स्थिरता [illegible] वलण स्व सन्मुख उल्लसतु जाय छे, अने तेथी अहिं ते साधक [illegible] ज्ञप्तिरुप एवी ज्ञान क्रिया मुख्यपणे वर्तती होय छे, अने ते [illegible]

पण तेने तथारुप लक्षे होय छे, अने तेथी तेने परमार्थरुप व्यवहारना नामथी संबोधवामां आवे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—जे जीवने सम्यग्दर्शन थाय छे, तेनुं वास्तविक फल वितरागपणुं होवाथी जेम जेम तेने पोताना स्वभावनुं दृढत्वपणुं वर्द्धमानताने पामतु जाय छे, तेम तेम ज्ञानादि सम्यक त्रयरुप एवा पोताना चैतन्यात्मक स्वभावना विषे पोतानी अंतर्मुख स्थिरता थवा अर्थे पोतानी निर्यात्मक रुचीनु वलण सहज सन्मुख भावे उन्नमतु जाय छे, अने तेथी अहिं ज्ञप्तिरुप क्रियानुं मुख्यपणु होवु अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने ते साथे तथारुप एवी ते ज्ञप्तिरुप क्रियानो विशुद्धीना वळे अविरतीरुप एवा अप्रत्याख्यान कषायोदय जन्य रागादि भावोनु क्षायोपशमीक भावे निर्वरवापणुं थवाथी ते स्वरुप साधक जीव वाह्य देशव्रतरुप संयमने पण पामे छे, जेमां समिति गुप्तिरुप एवुं शुभाचरण सेववानो समावेश थई जाय छे।

प्रश्न—समिति अने गुप्ति ए बंनेना एकंदर केटला प्रकार छे, अने ते व्यवहार सेववानो आदर सम्यक्दृष्टी जीव केवा प्रकारे करे छे ?

उत्तर—समितिना एकंदर पांच प्रकार छे, अने गुप्तिना नास्तिरुप निमितना अभावनी अपेक्षाए तेना व्यवहार नयथी त्रण प्रकार छे, अने अस्तिरुप स्वभाव स्थिरतानी के वितराग भावनी अपेक्षाए तनो निश्चय नयथी एक ज प्रकार छे। तथारुप व्यवहार सेववाना आदरमां सम्यक्दृष्टी जीवनो मुख्य एवो अंतर्मुख लक्ष होवाथी ते तथारुप लक्षे तेनो आदर मात्र ज्ञाता भावे करे छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

ईर्या समिति

शरिराश्रीत थवी एवी तेनी हलन चलनरुप क्रियामा, ते क्रियाथी भिन्न एवा पोताना ज्ञायक स्वभावरुप शुद्धोपयोगने अप्रमत्त योगनी सम्यक सावधानीपुर्वक टकावी राखवो ते।

भाषा समिति

शरिराश्रीत थती एवी हित मिष्ट आवश्यक वाणीरुप क्रियामा, ते क्रियाथी भिन्न एवा पोताना ज्ञायक स्वभावरुप शुद्धोपयोगने अप्रमत्त योगनी सम्यक सावधानीपुर्वक टकावी राखवो ते।

एषणा समिति

शरिराश्रीत थती एवी संयम निर्वाहना हेतुरुप शुद्ध आहारादि क्रियामा, ते क्रियाथी भिन्न एवा पोताना ज्ञायक स्वभावरुप शुद्धोपयोगने अप्रमत्त योगनी सम्यक सावधानीपुर्वक टकावी राखवो ते।

१—समितिमा व्यवहार प्रवृतिनुं मुख्यपणुं छे, त्यारे गुप्तिमां तयारुप व्यहार प्रवृतिना निरोधनु मुख्यपणुं छे।

२—समितिमा शुभोपयोगनु होवुं अनिवार्यरुप होवाथी त्या बंधनी अपेक्षा अवश्य रहे छे, त्यारे गुप्तिमा शुद्धोपयोगनु होवु अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य संवर निर्जराना हेतुरुप बने छे।

३—समितिमा पराश्रीत भावनु मुख्यपणु रहेवाथी त्या निमित, पर्याय के भेदरुप व्यवहारनी हाजरी नियमा होय छे, त्यारे गुप्तिमा स्वाश्रीतपणु मुख्यरुप होवाथी त्या निमित, पर्याय के भेदरुप व्यवहारनु सर्वथा अभावपणु थई जाय छे।

४—समितिमा शुभोपयोगनी मुख्यताए पाचमुं अने छठ्ठुं ए बे गुणस्थानकोनो समावेश थाय छे, त्यारे गुप्तिमां शुद्धोपयोगनी मुख्यताए सातमाथी बारमा पर्यंतना छ अने गौणताए चोथाथी छठ्ठा पर्यंतना त्रण एम एकदर नव गुणस्थानकोनो समावेश थाय छे।

५—समितिमां व्यवहार नयनुं मुख्यपणु होवाथी त्या तयारुप समितिना पाच प्रकारनो समावेश थाय छे, त्यारे गुप्तिमा निश्चय नयनु मुख्यपणुं होवाथी तेमा निश्चय गुप्तिरुप एवा एक ज प्रकारनो समावेश थाय छे।

आ प्रमाणे समिति अने गुप्ति ए बंनेमा तत्त्व दृष्टीए रहेला तफावतनु स्वरुप छे, ते उपरथी तत्व शोधक जीवने स्पष्ट समजाशे के जे जीवने सम्यग्दर्शननी उपलब्धी थाय छे, त्यां ज समिति गुप्तिनुं अस्तित्व सम्यक प्रकारे होय छे, अने त्या ज क्रमे करी पुर्ण स्वरुप वितरागत्वपणु ते सम्यग्दर्शनना वास्तविक फलरुप होवाथी प्रगटे छे। आम वस्तुस्थिति होवाथी ज्या ज्यां जेटले अशे वितरागपणु होय छे, त्या त्या तेटले अशे गुप्तिनु होवु अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने ते अपेक्षाए तेने निश्चय गुप्ति के स्वरुप गुप्तिना नामथी ते एक ज प्रकाररुप होवानु संबोध नामा आव्यु छे, ते सिवाय गुप्तिना त्रण प्रकार जे व्यवहार नयाश्रीत छे, ते निमितरुप कथन होवाथी स्वरुप साधक जीवे मात्र तेने अनेकात दृष्टीए जाणना योग्य छे, कारण के मन, वचन, कायरुप एवी ते पर जन्य क्रिया स्वमा नास्तिरुप होवाथी ते कोई पण प्रकारे जीवना आधिन नथी, अने तेथी ते क्रिया साथे बध मोक्षनी अपेक्षा पण रहेती नथी, एम सम्यक्दृष्टी जीवे स्वभाव लक्षे विचारी मात्र एक निश्चय गुप्तिरुप एवा परम शुद्ध वितराग भावने ज संवर निर्जराना के मात्र मोक्ष मार्गना हेतुरुप गणी तेनी प्राप्तीना सन्मुखवर्ती साधनने निश्चय व्यवहाररुप ए उभयात्मक नयना वास्तविक बोधपुर्वक अवलबवा योग्य छे।

आना प्रकारनु बोध विशेष परिणमन उपरोक्त एवा ते सुमाधकने होवाथी ते निश्चय व्यवहाररूप एवी पोतानी बाह्यांतर भावनामा एकत्व अनेकत्व अने हेयोपादेयना परमार्थने समजी ते अनुसार ते मात्र एक पोतानी शुद्ध आत्मार्थ साधवाने ज अवलबे छे. अने तेथी त्या शुद्धनयनु उपादेयपणु अने तेनी अंतरंग मुख्यतापुर्वक थती एवी जे शुभोपयोगरुप बाह्य सेवना तेमां हेय बुद्धीपणु अने तेम होवाथी ते भावनु अकर्तापणु एम अतरग श्रद्धानना विषे वर्ततु होय छे, अने तेथी उत्तरोत्तर ते माधक तथारुप भेदविज्ञानना बळे शुद्ध सम्यक रत्नत्रयात्मक एवी ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरतानु वर्द्धमानपणुं करी केवळ स्वरुपने पामे छे, अने तेथी शुद्धना लक्षे थती एवी जे शुभोपयोगरुप व्यवहार सेवना, तेने ज परमार्थरुप एवा सद्‌भुत व्यवहारना नामथी सबोधवामा आवे छे।

प्रश्न—सद्‌भुत अने असद्‌भुत ए उभयात्मक व्यवहारमा तत्व दृष्टीए शुं तफावत छे, अने तेमा हेयोपादेयनो शुं परमार्थ रहेलो छे ?

उत्तर—शुद्धात्म स्वरुपना श्रद्धान, ज्ञान, आचरणरुप एवी जे रत्नत्रयनी स्वभाव परिणामरुप सेवना, ते निश्चयनयने अवलबीत होवाथी तेने परमार्थरुप एवा सद्‌भुत व्यवहारना नामथी संबोधवामां आवे छे, अने ते मोक्षमार्गमा उपादेयरुप एटले आदरवा योग्य छे, अने व्रत महाव्रतादि के सुदेवादिनी भक्ति आदिरुप एवी शुभ विकल्पात्मक रत्नत्रयनी विभाव परिणामरुप सेवना, ते व्यवहारनयने अवलबीत होवाथी तेने अपरमार्थरुप एवा असद्‌भुत व्यवहारना नामथी संबोधवामा आवे छे, अने ते मोक्षमार्गमा हेयरुप एटले त्यागवा योग्य छे, एम उभयात्मक व्यवहार सेवनानी वास्तविक समजपुर्वक अने ते अनुसार हेयोपादेयनी पृथक्त्वाना अतरग लक्षपुर्वक स्वरुप-साधक एवो ते सम्यक्दृष्टीजीव ते पोते पोतानी स्वभावाश्रीत दृष्टीना बळे निमिताश्रीत एवा सर्व शुभाशुभ भावोनो परित्यागी थाय छे, अने तेथी शुभोपयोगरुप एवी असद्‌भुत व्यवहार सेवनानो आदर थवा छता, के स्थुल दृष्टीए तेम देखाता छता, पण ते भावोनु अकर्तापणु पोतानी अंतरग श्रद्धानमा रहेवाथी तत्व दृष्टीए तेने शुद्धोपयोगरुप एवी सद्‌भुत व्यवहार सेवनानो ज कर्ता के तेनो उपासक कहेवा योग्य छे, अने ते ज सद् असद्‌रुप एवा उभयात्मक व्यवहारना वास्तविक बोध परमार्थनुं फल छे।

आ उपरथी लक्षमा आवशे के जे साधक जीव शुद्धनयना अवलबनपुर्वक शुभोपयोगरुप एवी बाह्याचरण सेवनानो आदर अकर्ताभावे एटले ते भावोमा पोताना स्वामित्वभावनी नकार-बुद्धीपुर्वक करे छ, त्या ज आत्मार्थपणुं घटे छे, अने तेने ज सद्‌व्यवहारना नामथी सबोधवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये निश्चय व्यवहारनयना वास्तविक बोधनी याचना करे छे।

शीष्य गुरु प्रत्ये अहिं, करी वंदन पुछे हे नाथ।
नय निश्चय व्यवहारनो, मने समजावो परमार्थ॥
एकांत ने अनेकांत शु, ते पण पुछुं आपने हुं।
गुरुजी कहे सुण दई ध्यान, ते समजावु करी विज्ञान ॥७॥

अन्वयार्थ—अहिं शीष्य गुरुजी प्रत्ये वंदन करी पुछे छे के हे नाथ ! निश्चय अने व्यवहार ए उभय नयनो परमार्थ एटले तेनु वास्तविक स्वरुप शु ? ते मने कृपा करी समजावो, अने ते साथे एकात अने अनेकात ते शुं ? ते पण हु आप प्रभुने पुछुं छुं। अहि गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के हे शीष्य तथारुप बोधनुं विज्ञान करी ते हु तने समजावु छु, ते तु आ निज प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयना वास्तविक बोध परमार्थनु ज्या केवळ अबोधपणु वर्ते छे त्या आत्मार्थ भावनु अस्तित्व अशमात्र पण होतु नथी, एम जे जीवने आत्मार्थ सद्विवेकपूर्वक समजाय छे, ते ज तथारुप बोध प्राप्तीनी वास्तविक जिज्ञासा उत्पन्न करी, ते अर्थे प्रत्यक्ष एवा कोई सत्संगनी सन्मुखवर्ती उपासना करे छे। आवा प्रकारना बोध परमार्थनु अतर्मुख चिंतन उपरोक्त सुलक्षणने आत्मार्थ लक्षपुर्वक होवा छता हजु पण पोताना विषे तथारुप बोधनी उणप समजी ने पोतानी विशेष आत्मार्थ सन्मुखतापुर्वक ते संबंधी सद्गुरु प्रत्ये याचना करे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

निश्चयनय स्वाश्रीतरुप, पराश्रीतरुप व्यवहार।
तेथी उभयात्मक नयो, प्रतिपक्षी परस्पर धार॥
निश्चयथी परमार्थ एक, व्यवहारथी अन्य रुपे अनेक।
तेथी ते नयथी स्वीकार, निश्चयथी तेनो परिहार ॥८॥

अन्वयार्थ--निश्चयनय ए स्वाश्रीतरुप छे, अने व्यवहारनय ए पराश्रीतरुप छे, अने अने तेथी उभयात्मक नयनु परस्पर प्रतिपक्षीपणु छे, एम तु धार, अने तेम होवाथी निश्चयथी वस्तुनो परमार्थ त्रीकाळ एकरुप छे, त्यारे व्यवहारथी तेनु अनेक एवु अन्य रुपे निरुपण होय छे

अने तेथी ते नयथी थयेलो स्वीकार तेनो निश्चयनय सर्व प्रकारे परिहार करे छे; एम हे भीष्म तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ— ज्या ज्ञानादि उपयोगनु स्वभावाश्रीत एवु शुद्ध परिणमन वर्ते छे, ते निश्चय नयनु स्वरुप छे, अने ज्या तयारुप उपयोगनु पराश्रीत एवु अशुद्ध परिणमन वर्ते छे, ते व्यवहार नयनु स्वरुप छे। आवा प्रकारनु भेदत्वपणु होवाथी ते उभयात्मक नयोनु परस्पर प्रतिपक्षीपणु छे, अने तेम होवाथी निश्चयनयथी परमार्थरुप एवा वस्तु-स्वभावनु निरुपण श्रीकाळ एकरुपे अवस्थित होय छे, त्यारे व्यवहारनयथी तेनु निरुपण अन्यरुपे एटले पर निमितजन्य भावना उपचारपणे अनेक प्रकारना दृष्टीभेद स्थनथी करवामा आवे छे, अने तेथी तयारुप नयथी थयेलो स्वीकार तेनो निश्चयनय सर्व प्रकारे परिहार करे छे, एटले असत्यार्थरुपे होवानु दर्शावे छे। तयारुप बोधना विशेष अतर्भुत चिंतन अर्थे अहि तेना लक्षणभेदे रहेला तफावतनु विशेष प्रकारे स्पष्टीकरण करवामा आवे छे।

१—निश्चयनय वस्तुना यथार्थ स्वरुपने ग्रहण करी तेमा पोतानु एकत्वपणु प्रदर्शीत करतो होवाथी ते सर्व प्रकारे शुद्धरुप छे, त्यारे व्यवहारनय वस्तुना यथार्थ स्वरुपने अयथार्थरुपे एटले तेने कोई बीजा स्वरुपे ग्रहण करी ते भिन्न द्रव्यमा पोतानु एकत्वपणु प्रदर्शीत करतो होवाथी ते सर्व प्रकारे अशुद्धरुप छे।

२—निश्चयनय अनेकातरुप होवाथी त्या शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी पर निमित जन्य अशुद्धतानु मात्र ज्ञायकरुपे जाणवापणु रहे छे, त्यारे व्यवहारनय एकांतरुप होवाथी त्यां शुभाशुभ रागादि भावरुप एवी पर निमितजन्य अशुद्धतानु स्वामित्वभावपुर्वक कर्ता-भोक्तापणु स्वीकारवामा आवे छे।

३—निश्चयनय पोताना स्वभावीक भावने अवलंबतो होवाथी ते लवे अवस्थाजन्य अशुभ राग भावना परित्यागरुप प्रत्याख्यानना विकल्पमा वच्चे शुभ रागमाय आवता छता स्वभाव अपेक्षा ते पण नास्तिरुप भावनु हेयरुप नकारपणु अतर श्रद्धानमा होवाथी तेनु पण मात्र ज्ञायकरुपे जाणवापणु ज रहे छे, त्यारे व्यवहारनय पराश्रीत औपाधिक भावने अवलंबने होवाथी ते लवे अवस्थाजन्य अशुभत्व रागभावना परित्यागरुप प्रत्याख्यानना विकल्पमा [illegible] एवा शुभ रागभावनु एकात उपादेयरुप हकारपणु मान्यतामा होवाथी तेनु [illegible] पणु स्वीकारे छे।

४—निश्चयनय पोताना स्वभावीक भावने पोतापणे स्वीकारतो होवाथी अने ते लक्षे शुभाशुभ रागादि भावरूप एवी मलीन के निर्मल उभय यथोत्पादक विकारजन्य पर्यायना अस्वीकार पुर्वक उपयोगनी स्व-लक्षे स्थिरता रहेवाथी शुभाशुभ एवा ते उभय भावोनु शुद्ध-स्वभाव पुर्वक अबंध परिणामे निर्जरवापणुं अने स्व-लक्षे क्रमबद्ध एवी अविकारजन्य निर्मल पर्यायनु उत्पादकपणु भावमोक्षमार्गनी सम्यक् स्थिरतापुर्वक थाय छे, त्यारे व्यवहारनय पराश्रीत औपाधिक भावने पोतापणे स्वीकारतो होवाथी अने ते लक्षे शुभाशुभ रागादि भावरूप एवी मलीन के निर्मल उभय यथोत्पादक विकारजन्य पर्यायना स्वीकारपुर्वक उपयोगनी पर लक्षे स्थिरता रहेवाथी शुभाशुभ एवा ते उभय भावोनु एकांत आश्रव भावपुर्वक बंध परिणामीपणु अने पर लक्षे क्रमबद्ध एवी विकारजन्य मलीन पर्यायनु उत्पादकपणु भावमसारनी वर्द्धमानतापुर्वक थाय छे।

५—आ प्रमाणे उभय नयमा लक्षणभेदे पुर्व पश्चिम जेटलु अंतर रहेलु छे, अने तेथी निश्चयनयने अवलंबनार जीव शुद्ध सम्यग्दृष्टी, अनेकांत सेवी, अने शुद्ध-स्वभावमा धर्मना अस्तित्वने श्रद्धनारो होय छे, त्यारे व्यवहारनयने अवलंबनार जीव मिथ्यादृष्टी, एकांत सेवी, अने पुण्यथी धर्म थाय एवी मिथ्या मान्यताने दृढ करनारो होय छे।

६—निश्चयनयने अवलंबनार जीव अंतरात्म भावपुर्वक आत्मार्थ भावनो साधक अने त्रयात्मक शल्यना अभावपुर्वक पुण्य पापना विकारजन्य भावने अने तेना संयोगजन्य उदयने मात्र ज्ञायकरूपे जाणनारो होय छे, त्यारे व्यवहारनयने अवलंबनार जीव बहिरात्मभावपुर्वक मतार्थभावनो उपासक, अने त्रयात्मक शल्यनी मलीनतापुर्वक पुण्य पापना विकारजन्य भावने अने तेना संयोगजन्य उदयने स्वामित्वभावपुर्वक कर्ता-भोक्तापणे सेवनारो होय छे।

७—निश्चयनयने अवलंबनार जीवने निमित उपादाननी अनुकूल संधीना, अने कार्यकारण भावनो अभिन्नताना वास्तविक बोधनुं सम्यक् भान होवाथी अने ते अनुसार कार्यरुची एवा उपादान कारणनी अंतरंग तैयारी वखते बाह्य निमित कारणनी मात्र औदासीन हाजरी होय, एम स्व-तरफनुं वजन अंतरंग श्रद्धानमा रहेवाथी ते उपादान कारणनी सन्मुखतापुर्वक स्व-लक्षे रही पोताना अंतरंग स्वतंत्र पुरुषार्थना वेगनो पोषक बने छे, अने परिणामे स्व-कार्यनी सिद्धीने पामे छे, त्यारे व्यवहारनयने अवलंबनार जीवने निमित उपादाननी संधीना, अने कार्य-कारण भावनी अभिन्नतांना, वास्तविक बोधनु एकांत मुढत्वपणु होवाथी अने ते अनुसार कार्यरुची एवा उपादान कारणनी अंतरंग तैयारीनी बेभानतापुर्वक शरिरादि एवी बाह्य अनुकूल सामग्रीयो के

प्रश्न—तथारुप व्यवहार स्वकार्य सिद्धीना साधकरुप होय, तो जिनागमना विषे तथारुप नयनी मुख्यतापुर्वकनु कथन अनेक स्थळे जोवामा आवे छे, तेनु मुळ कारण शुं ? अने त्या निश्चय नयनी सिद्धीनो उपाय शुं ?

उत्तर—जिनागमना विषे व्यवहारनयनी मुख्यतापुर्वकना कथननो मुळ हेतु व्यवहारनयना विषयभुत एवा पर द्रव्य अने पर निमितजन्य शुभाशुभ रागादि भावो तेनुं आ जीवने मात्र ज्ञान कराववा अर्थे छे, अने तथारुप ज्ञान करवामा स्वपर प्रकाशक एवा ज्ञान गुणनु मुख्यपणु होवाथी अने स्वनी अपेक्षाए तेनु गुणी एवा आत्मा साथे त्रीकाळ एकत्वपणु रहेवाथी त्या निश्चयनयनु मुख्यपणुं होउ ए स्वभावीक ज सिद्ध थाय छे, अने तेथी तथारुप लक्षे त्या वर्तवु ए ज तेनी सिद्धीनो सम्यक उपाय छे ।

आ उपरथी समजाशे के स्व-सिद्धीना हेतुरुप एवी सर्व आत्मार्थ साधनामा निश्चयनयनी मुख्यतापुर्वक व्यवहारनयनु गौणपणे सर्वज्ञविशेषरुपे होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे, अने तेथी जिनागमना विषे तथारुप नय विभागना परस्पर भेदरुप कथननी सिद्धी अर्थे कोई स्थळे निश्चयनयनी मुख्यतापुर्वक कथन करवामा आव्यु होय, अने कोई स्थळे व्यवहारनयनी मुख्यतापुर्वक कथन होय, पण ते बने दृष्टी भेदरुप कथनना, परमार्थ हेतुने विचारीए तो ते ए ज के निश्चय अने व्यवहार ए बंने नयो जाणवा योग्य छे, पण स्व सिद्धी के शुद्धता अर्थे के स्व धर्मनी उपलब्धी अर्थे आश्रय करवा योग्य तो त्रणे काळना विषे मात्र एक निश्चयनयनु ज मुख्यपणुं छे, एम वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य छे ।

उपरोक्त बोधथी एम अवधारवा योग्य छे के जे जीवना आत्म-परिणामना विषे मात्र एक निश्चयनयनुं ज मुख्यपणुं वर्ते छे, तेने ज आत्मार्थ-साधक कहेवा योग्य छे, अने त्या ज व्यवहारनयनो आदर थवा छतां, पण ते प्रत्ये पोतानी अनादरणीय दृष्टी अंतर-श्रद्धानना विषे होवाथी क्रमे करी तेनुं अभावपणुं पण पुर्ण स्वभाव स्थिरताना बळे थवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे । हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे ।

उभय नयना बोधनो, करी साधक मन विचार ।
वर्ते अवलंबी शुद्धने, तेनुं नाम अनेकांत धार ॥
तेवण केवळ व्यवहार लक्ष, के निश्चयनो ग्रहीने पक्ष ।
वर्ते अंतरमां वेभान, एकांत नय तु तेने जाण ॥१०॥

अने क्रमे करी तथारुप नयनी मुख्यतापुर्वक थती एवी ते अंतर्मुख साधनाना बळे शुद्ध ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरतानुं वर्द्धमानपणु थई जीव स्वरुपपुर्णताने पण पामे छे।

प्रश्न—कार्यकारणभावना सिद्धांतिक नियमनी दृष्टीए निश्चय साथे तेना साधनरुप व्यवहारनुं होवु पण अनिवार्यरुप छे, तेम छता अहिं वस्तु-धर्मनी प्राप्तीमा के तेनी पुर्णतारुप सिद्धीमा मात्र एक निश्चयनयने ज उपादेयरुप गणी, तेनु एकांत मुख्यपणु दर्शाववामा आव्यु छे, तेनो मुळ हेतु शुं छे?

उत्तर—वस्तु-धर्मने विचारीए तो तेमां कार्यकारणभावनु अभिन्नपणु स्वभावीक ज रहेलु छे, अने तेम होवाथी तेनेनु सजातीपणु होवुं पण अनिवार्यरुप छे, अने तेथी निश्चयरुप एवा स्व धर्मनी प्राप्तीमा के तेनी पुर्णतारुप सिद्धीमा निश्चयरुप एवा स्व तरफ ढळेला ज्ञान साथे ज्ञानरुप व्यवहारनु के तथारुप एवी ते ज्ञानरुप क्रियानुं अभिन्नपणु होवाथी तेनेनु सजातीपणु पण स्वभावीक ज सिद्ध थाय छे, जेम के हुं शुद्ध ज्ञायकरुप एवो स्वभाव परिणामी आत्मा छु, तेनु नाम निश्चय, अने ते अनुसार अतरंगना विषे ज्ञानादि सम्यक् त्रयनी स्थिरता थवारुप के ते अर्थे भेदविज्ञानने अवलंबवारुप के ते पुर्वक शुभाशुभ रागादि भावनी सुक्ष्म एवी अंतरसधीने छेदवारुप, एवा सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमा योजावुं तेनुं नाम व्यवहार, एम निश्चयरुप ज्ञान साथे ज्ञानरुप व्यवहारनु के तथारुप ज्ञान क्रियानु कार्यकारणभावरुप अभिन्नपणु सजाती स्वरुपे स्वभावीक ज रहेलुं छे, अने ते ज ज्ञानादि सम्यक् त्रयनी अभेद स्थिरतारुप एवा भावमोक्षमार्गनी प्राप्तीनो अने ते द्वारा क्रमवद्ध विशुद्ध पर्यायनी अतरंग श्रेणीपुर्वक केवळज्ञानरुप सपुर्ण वितरागत्वने पामवानो सम्यक् उपाय छे।

आ उपरथी समजाशे के वस्तुमात्र स्वतंत्ररुप होवाथी, अने ते अनुसार तेनो प्रदेशभेद अने द्रव्यत्वगुणनु परिणमनभेद रहेवाथी, तेना कार्य-कारणभावनु अभिन्नपणु पोत पोताना स्वभावाश्रीत सजाती स्वरुपे स्वभावीक ज रहेलु छे, अने तेथी प्रत्येक प्रत्येक वस्तुनी कार्य-सिद्धी तेना अभिन्नरुप एवा सजाती कारणथी ज थाय छे, ए कार्य-कारणभावना स्वभावीक नियमनु उल्लघन करी, ते अर्थे प्रतिकुल पुरुषार्थ के उपाय योजवामा आवे, अर्थात निश्चयरुप एवा स्व-कार्यनी सिद्धीमा तेना कारणरुप एवो जे परमार्थरुप व्यवहार तेनाथी उपेक्षीत थई ते अर्थे अपरमार्थरुप एवा पराश्रीत व्यवहारनी एकांत मुख्यताने अवलंबी त्याग वैरागरुप एवा बाह्याचरण साधनो सेववामा आवे, अने ते शुभोपयोगरुप विकारी तत्वोथी निश्चयरुप एवा स्व-धर्मनी के मोक्षमार्गनी प्राप्तीरुप एवी स्व-कार्य सिद्धी इच्छवामा आवे तो ते सिद्धी पश्चिमने पुर्व मानी गमन करवाना जेम सर्व प्रकारे असिद्धरुप अर्थात निरर्थकरुप ठरे छे। मतलब के ते व्यवहार कार्यसिद्धीना साधकरुप नहिं पण बाधकरुप छे, एम परमार्थ दृष्टीए समजवा योग्य छे।

अवलंबीत थशे, अने ते द्वारा ते स्वसिद्धीने पण पामशे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तथारुप लक्षे साधकनी साधनात्मक प्रवृत्ति संबंधी आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

ते साधे विशेषे अहिं, भावे भावना एम ते नित्य।
बाह्यांतर निर्ग्रंथदशा, ग्रही पुर्ण पदे थऊ स्थित ॥
ते लक्षे मुनीलींगनी आय, भावना वर्ते अंतर मांय।
क्रमे तेनो थई स्वीकार, साधे स्वरुपने ते अनुसार ॥११॥

अन्वयार्थ—ते लक्षे अहिं ते साधक जीव बाह्यांतर हु निग्रंथदशानो स्वीकार करी पुर्ण एवा वितरागत्व पदे स्थित थऊ, एम ते विशेष प्रकारे स्वरुप-भावना भावे छे, अने ते लक्षे अहिं तेना अंतर परिणामना विषे मुनीलींगनी भावना पण वर्ते छे, अने ते अनुसार क्रमे तेनो स्वीकार थई ते पोताना स्वरुपने तथा प्रकारे साधे छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप योजना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे जीवने सम्यग्दर्शन थाय छे, तेनुं वास्तविक फळ वितरागपणुं होवाथी ते पोताना अंतर परिणामना विषे मुख्यपणे ते ज ध्येयने अवलंबीत होय छे, अने तथारुप ध्येयनी सिद्धीनो वास्तविक उपाय पोते पोताना ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप एवा शुद्ध ज्ञायक स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताने अवलंबीत थवु ते होवाथी ते पोतानी बाह्यांतर सर्व साधनात्मक प्रवृत्तिमा मात्र एक पोताना वस्तु-स्वभावने ज मुख्य करी तेना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमा पोतानी वीर्यात्मक रुचीना वलणने सम्यक् योगे प्रेरे छे। आवा प्रकारना परमार्थ लक्षने अवलंबीत थयेला उपरोक्त एवा ते स्वरुप-साधक-जीवने पर तरफनी विशेष औदासीनता थता, ते पोताना मुळ एवा वितराग-चारित्रनी अंतरसिद्धीना हेतुलक्षने मुख्य करी, ते अर्थे बाह्यांतर निग्रन्थदशानी कहेता मुनीलिंगनी भावनानो विकल्प उपस्थित करे छे, अने ते भावनानुं तथारुप लक्षे वर्द्धमानपणु करी क्रमे ते तेनो स्वीकार पण करे छे, अर्थात् परम उज्जवळ एवी बाह्यांतर निग्रन्थदशाने पामे छे।

प्रश्न—निग्रंथदशानु वास्तविक स्वरुप जैनत्व-दृष्टीए शुं छे ? अने तथारुप चारित्रनी सिद्धीमा मुख्यपणे कया गुणनी अने कया उदयजन्य दोषना अभावनी अपेक्षा रहे छे ?

उत्तर—जैनत्व दृष्टीए निग्रंथदशानुं वास्तविक स्वरुप विचारीए तो श्रद्धारुप परणतिनी अपेक्षाए चतुर्दश अभ्यंतर परिग्रहथी अने आचरणरुप परणतिनी अपेक्षाए शरिराश्रीत सर्व वस्त्रना

अन्वयार्थ—उपरोक्त बन्ने नयना बोधनो जे कोई साधक जीव मनना विषे विचार करी पोते पोताना शुद्ध एवा निश्चयनयने अवलंबीत थई तथारुप लक्षे वर्ते छे, तेनुं नाम अनेकांत एम तु धार, अने ते विना क्रिया-जडत्वरुप एवा केवळ व्यवहार तरफना लक्षने के शुष्क-ज्ञाननी प्रधानतारुप एवा निश्चयनयना पक्षने ग्रहीने जे अंतरना विषे बेभानपणे वर्ते छे, तेने तुं एकांतनयनुं स्वरुप जाण, एम हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयना बोध परमार्थने जे कोई सुसाधक जीव वस्तु दृष्टीना प्रधान लक्षे जाणे छे, एटले तथारुप लक्षे तेनो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञानथी करे छे, ते पोतानी अंतर्मुख साधनामां मात्र एक निश्चयनयने मुख्य करी (निश्चयनयना विषयभुत एवा अखंड-आत्मद्रव्य स्वभावमां गुणगुणीनी एकतारुप स्थिरता शुद्ध ज्ञायकभावे करवी ते) तेने अवलंबीत थाय छे, अने तेथी त्यां व्यवहारनयाश्रीत थती एवी शुभोपयोगरुप उपचरित सेवनानुं के व्यवहारनयना विषयभुत एवा परद्रव्य के पर निमितजन्य शुभाशुभ रागादि भावोनुं के स्व द्रव्यनी अपुर्ण अवस्थानुं मात्र ज्ञाता-भावे जाणवापणुं ज रहे छे, अने तेने ज अनेकांतरुप सेवनाना नामथी संबोधवामां आवे छे ते सिवाय जे कोई साधक जीव तथारुप नयना वास्तविक बोध परमार्थथी पराङ-मुख थई मात्र क्रिया-जडत्वरुप एवा एकांत व्यवहारनयने अवलंबीत थाय छे, के शुष्क-ज्ञाननी प्रधानतारुप एवा निश्चयनयना पक्षने ग्रही अंतरना विषे बेभानतापुर्वक वर्ते छे, तेने एकांतनयना नामथी संबोधवामां आवे छे।

आ उपरथी समजावो के निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयनुं जे साधक जीवने सम्यक्-भान वर्ते छे, ते ज एकांत अनेकांतना वास्तविक बोध परमार्थने समजे छे, अने ते अनुसार ते निश्चय-नयनी मुख्यता पुर्वक थती एवी पोतानी अंतर्मुख साधनात्मक दशामां व्यवहारनयना विषयभुत एवा शुभाशुभ रागादि भावनुं अस्तित्व, उदयरुप होवा छतां के थवा छतां पण मात्र तेनो ज्ञाता-भावे स्वीकार करी पोतानी अनेकांत दृष्टीनी ज सिद्धी करे छे, अने ते निश्चयात्मक एवा सम्यक्एकांतना हेतुरुप होवाथी क्रमे करी ते द्वारा शुद्ध ज्ञायकरुप स्वभाव स्थिरतानुं वर्द्धमानपणुं करी पुर्ण स्वरुप वितरागत्वने पण पामे छे।

आ प्रमाणे निश्चय अने व्यवहार ए उभयात्मक नयना बोध परमार्थने विचारी जे कोई साधक जीव तेनो वास्तविक निर्णय पोताना ज्ञानथी करशे ते शुद्ध स्वभावथी भिन्न लक्षणरुप एवा व्यवहारनयना विषयभुत सर्व शुभाशुभ भावो प्रत्येनी मोहजन्य आकांक्षानो परिहार करी मात्र एक निश्चयनयनी मुख्यताने एटले तेना विषयभुत एवा शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावने सम्यक् योगे

प्रश्न—जो एम ज होय तो जिनागमना विषे मुर्छाने ज परिग्रह ए नामथी सबोधवामा आवे छे, अने ते दृष्टीए मुर्छा रहीतपणे रहाती एवी बाह्य वस्तुओ विद्यमान छता, त्या स्वभावीक ज अपरिग्रहपणु ठरे छे, तेनुं केम ?

उत्तर—अभ्यंतर रागरुप मुर्छानु सर्वथा अभावपणु होय, अने पोताने अनुकूल एवी बाह्य वस्तुओ संयोगरुपे टकेली होय, एम जैनत्व-दृष्टीए कोई पण प्रकारे सिद्ध थई शकवा योग्य नथी, अने तेथी जिनागमनो ते अर्थ यथार्थ पण नथी। यथार्थ अर्थ शुं छे ? तेनी तत्व-मिमासा करीए तो सम्यक्दृष्टी जीवना सम्यक्त्वनु महात्म्य दर्शाववा अर्थे तेनो यथार्थ अर्थ एम सुचन करे छे, के श्रद्धारुप परणतिनी अपेक्षाए सम्यक्‌दृष्टी जीवने बाह्य वस्तुओ प्रत्ये बुद्धीपुर्वक रागरुप मुर्छानु अभावपणु होवाथी ते अपेक्षाए त्या बाह्य वस्तुओ विद्यमान छता अपरिग्रहपणु कह्यु छे, अने आचरणरुप परणतिनी अपेक्षाए नैमितिक भावरुप एवी पोतानी रागरुप मुर्छाने अनुकूल बाह्य वस्तुओ संयोगरुपे टकेली होवाथी ते अपेक्षाए त्या परिग्रहपणु कह्युं छे, एम उभयात्मक दृष्टीए जिनागमना ते अर्थने समजवा योग्य छे। आवा प्रकारनी उभयात्मक दृष्टीनो बोध जे कोई स्वरुप-साधक-जीवने वर्ते छे, ते निग्रंथदशाना वास्तविक स्वरुपने, अने तेनी सिद्धीना सम्यक् उपायने सम्यक् प्रकारे जाणे छे, अने ते अनुसार सम्यक् प्रकारे तेनो आदर पण करे छे।

प्रश्न—तथा प्रकारनी निग्रंथदशानी सिद्धी अर्थे थतो एवो जे शुभोपयोगरुप पंच-महाव्रतादिनो आदर तेने निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रना हेतुरुप कही शकाय के केम ? जो कही शकाय तो शुभोपयोगरुप एवा ते परावलंबनी साधनथी शुद्धोपयोगरुप एवा वितराग-चारित्रनी प्राप्ती अने पुर्णतारुप सिद्धी असिद्धरुप ठरे छे, अने तेम न कही शकाय तो तथारुप हेतु-सिद्धी अर्थे अपातो एवो जे जिनागमनो उपदेश अने ते अनुसार तेनो करातो आदर तेनु अन्यथापणु के निष्फलपणु ठरे छे, तेनुं केम ?

उत्तर—वस्तुनो परमार्थ विचारीए तो निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी सिद्धी निश्चयरुप एवा आत्माना शुद्ध स्वभावने अवलंबवाथी ज थाय छे, अने तेनी पुर्णता पण ते द्वारा ज थमाय छे, अने तेथी निग्रंथ-दशानी प्राप्तीमां थतो एवो जे शुभोपयोगरुप पंच-महाव्रतादिनो आदर तेनुं निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्र साथे स्वभाव अपेक्षा विजातीपणुं होवाथी तेने तथारुप चारित्रनी उपलब्धीना हेतुरुप कही शकवा योग्य नथी। आम वस्तु-स्थिति होवा छतां निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी सिद्धी अर्थे तथारुप चारित्रनी पुर्वे एवा ते सम्यक्‌दृष्टी जीवने निग्रंथदशानी भावनारुप एवा शुभ विकल्पनु उपस्थितपणुं थाय छे, अने त्यार बाद तथारुप हेतु-सिद्धी अर्थे पंच-महाव्रतादि एवा शुभ

अभावपुर्वक दश प्रकारना बाह्य परिग्रहथी जे सर्व प्रकारे रहीत छे, ते ज निग्रथदशानुं वास्तविक स्वरुप छे, अने तेनी सिद्धी थवामां मुख्यपणे ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप एवी निर्मल गुण अवस्था विशेषनी, अने चारित्रमोहनीयना चार चतुष्टय पैकी आदिना त्रण चतुष्टयरुप एवी मलीन उदयजन्य दोष अवस्था विशेषना अभावनी अपेक्षा अवश्य रहे छे। मतलब के ते विना कोई पण प्रकारे निर्ग्रथ दशा सिद्ध थई शक्वा योग्य नथी।

आ उपरथी निग्रथ शब्दना अर्थमां रहेला एवा तेना मुळ परमार्थने जैनत्व-दृष्टीए विचारीए तो स्पष्ट समजाशे के निग्रन्थ एटले बाह्यांतर जेनी रागद्वेषरुपी ग्रन्थी भेदाई गई छे, शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावमा जेणे पोतानी सपुर्ण अपर्णतानो निश्चयात्मक ध्येय स्थिर कर्यो छे, परद्रव्य अने पर निमितजन्य एवा सर्व शुभाशुभ भावोमा जेनो उपयोग मात्र ज्ञायकमात्रे वर्ते छे, बाह्यांतर परिग्रहथी जे सर्व प्रकारे शुन्य छे, जिनाशय सत्श्रुत जेनु सम्यक्नेत्र छे, सुक्ष्मबंध-पर्यायजन्य भावोने छेदवानु प्रज्ञा जेनु शस्त्र छे, स्याद्वाद-शैलीना अंतर-लक्षपुर्वक सापेक्ष जेनुं कथन छे, सर्व प्रकारनी भोगजन्य आकांक्षाथी रहीत एवु निस्पृह जेनु वर्तन छे, अने अनेकांत दृष्टीना वास्तविक न्यायनी अंतर संधीपुर्वक सम्यक्एकांत एवु गुप्त जेनु आचरण छे, एवा परमशुद्ध ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप स्वभाव धर्मना आराधक पुरुषने ज निग्रन्थ के निग्रन्थदशाना धारक एवा परम गुणातीशयरुप नामथी संबोधवा योग्य छे, अने ए ज जैनत्व दृष्टीए प्रतिपादन थयेला बोधनुं परम एवु आ कथन छे।

प्रश्न—आवा प्रकारनी निग्रथदशानी साधनामा दश प्रकारना बाह्य परिग्रहना त्यागनी अपेक्षा अवश्य रहे छे, पण ते साथे सर्व वस्त्रना त्यागरुप एवी शरिरनी बाह्य नग्न दिगम्बर-अवस्था होवी ज जोइए एम एकांत प्रतिपादन करवानुं अहिं शुं प्रयोजन छे, अने ते जैनत्व-दृष्टीए सिद्ध कई रीते थई शक्वा योग्य छे ?

उत्तर—जैनत्व-दृष्टीए बाह्य भोगजन्य एवी जे जे वस्तुओ पोताने ते इष्टरुप होवानी बुद्धी पुर्वक संयोगरुपे टकेली छे, ते ते वस्तुओ प्रत्ये अभ्यंतर पोताने रागरुप मुर्छानुं होवुं अनिवार्य होवाथी ते अवश्य होय छे, अने तेथी ते रागरुप मुर्छाने अनुकुल एवी ते बाह्य भोगजन्य वस्तुओ परिग्रह ए नामथी ओळखवामा आवे छे, जेमा दश प्रकारना बाह्य परिग्रहनी साथे शरिराश्रीत वस्त्रादिनो पण समावेश थई जाय छे। आम वस्तु-स्थिति होवाथी निग्रथदशानी सिद्धी पण तथा एवी ते जैनत्व दृष्टीए त्यारुप रागभावनी सम्यक् निवृतिपुर्वक समस्त एवा ते बाह्य परिग्रह त्यागथी ज थाय छे। मतलब के ते विना निग्रथ-दशा कोई पण प्रकारे सिद्ध थई शक्वा योग्य न[illegible]

प्रश्न—जो एम ज होय तो जिनागमना विषे मुर्छाने ज परिग्रह ए नामथी संबोधवामा आवे छे, अने ते दृष्टीए मुर्छा रहीतपणे रखाती एवी बाह्य वस्तुओ विद्यमान छता, त्या स्वभावीक ज अपरिग्रहपणु ठरे छे, तेनु केम ?

उत्तर—अभ्यतर रागरुप मुर्छानु सर्वथा अभावपणु होय, अने पोताने अनुकूल एवी बाह्य वस्तुओ सयोगरुपे टकेली होय, एम जैनन्‍य दृष्टीए कोई पण प्रकारे सिद्ध थई शकवा योग्य नथी, अने तेथी जिनागमनो ते अर्थ यथार्थ पण नथी। यथार्थ अर्थ शु छे? तेनी तत्व मिमासा करीए तो सम्यक्दृष्टी जीवना सम्यक्त्वनु महात्म्य दर्शाववा अर्थे तेनो यथार्थ अर्थ एम सुचन करे छे, के श्रद्धारुप परणतिनी अपेक्षाए सम्यक्दृष्टी जीवने बाह्य वस्तुओ प्रत्ये बुद्धीपुर्वक रागरुप मुर्छानुं अभावपणु होवाथी ते अपेक्षाए त्या बाह्य वस्तुओ विद्यमान छता अपरिग्रहपणु कह्यु छे, अने आचरणरुप परणतिनी अपेक्षाए नैमितिक भावरुप एवी पोतानी रागरुप मुर्छाने अनुकूल बाह्य वस्तुओ सयोगरुपे टकेली होवाथी ते अपेक्षाए त्या परिग्रहपणु कह्यु छे, एम उभयात्मक दृष्टीए जिनागमना ते अर्थने समजवा योग्य छे। आवा प्रकारनी उभयात्मक दृष्टीनो बोध जे कोई स्वरुप-साधक-जीवने वर्ते छे, ते निग्रथदशाना वास्तविक स्वरुपने, अने तेनी सिद्धीना सम्यक् उपायने सम्यक् प्रकारे जाणे छे, अने ते अनुसार सम्यक् प्रकारे तेनो आदर पण करे छे।

प्रश्न—तथा प्रकारनी निग्रथदशानी सिद्धी अर्थे थतो एवो जे शुभोपयोगरुप पच-महाव्रतादिनो आदर तेने निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रना हेतुरुप कही शकाय के केम? जो कही शकाय तो शुभोपयोगरुप एवा ते परावलबनी साधनथी शुद्धोपयोगरुप एवा वितराग चारित्रनी प्राप्ती अने पुर्णतारुप सिद्धी असिद्धरुप ठरे छे, अने तेम न कही शकाय तो तथारुप हेतु-सिद्धी अर्थे अपातो एवो जे जिनागमनो उपदेश अने ते अनुसार तेनो कराती आदर तेनु अन्यथापणु के निष्फलपणु ठरे छे, तेनुं केम?

उत्तर—वस्तुनो परमार्थ विचारीए तो निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी सिद्धी निश्चयरुप एवा आत्माना शुद्ध स्वभावने अवलबवाथी ज थाय छे, अने तेनी पुर्णता पण ते द्वारा ज पमाय छे, अने तेथी निग्रन्थ-दशानी प्राप्तीमा थतो एवो जे शुभोपयोगरुप पच-महाव्रतादिनो आदर तेनु निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्र साथे स्वभाव अपेक्षा विजातीपणु होवाथी तेने तथारुप चारित्रनी उपलब्धीना हेतुरुप कही शकवा योग्य नथी। आम वस्तु-स्थिति होवा छतां निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी सिद्धी अर्थे तथारुप चारित्रनी पुर्वे एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवने निग्रन्थदशानी भावनारुप एवा शुभ विकल्पनु उपस्थितपणुं थाय छे, अने त्यार बाद तथारुप हेतु-सिद्धी अर्थे पंच-महाव्रतादि एवा शुभ

विकल्परुप व्यवहार साधननो आदर पण करवामा आवे छे, तेम छता अस्तिरुप स्वभावमां ते भाव नास्तिरुप होवाथी तथारुप शुभ विकल्पना आश्रये निश्चयरुप एवा वितराग चारित्रनी प्राप्ती के तेनी पुर्णतारुप सिद्धी थती नथी, अने ए ज वस्तुनो स्वभाव पोतानु स्वाश्रीतपणु सिद्ध करे छे।

आम वस्तु-स्थिति होवा छतां निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी सिद्धी अर्थे पंच-महाव्रतादि एवा ते शुभ साधनना ग्रहणनो जिनागमना विषे जे उपदेश कर्यो छे, ते कारणमा कार्यना उपचार हेतुनी सिद्धी अर्थे नथी, पण कार्य सिद्ध थये (थया बाद) तेमां कारणत्वनी उपचाररुप सिद्धी नियमा थती होवानु दर्शाववा अर्थे छे, अने तेथी तथारुप उपदेशनु अन्यथापणुं के ते अनुसार तेना करातां आदरनुं निष्फलपणुं एम एकांत समजवा योग्य नथी, पण अनेकांत-दृष्टीए तेना परमार्थने अवगाववा योग्य छे, ते एवी रीते के जे कोई स्वरुप-साधक-जीवने तथा प्रकारना बोधनु वास्तविक भान अने ते अनुसार निश्चय व्यवहाररुप एवा मोक्षमार्गनुं अनेकांतरुप आचरण वर्ते छे, ते तथारुप भिन्नाभिन्न साध्य-साधन-भावना सम्यक् भानपूर्वक पोते पोताना उपादान कारणने अवलंबी निश्चय मोक्ष-मार्ग रुप एवा शुद्ध रत्नत्रयात्मक भावोमा ज परिणमे छे, अने ते द्वारा मात्र एक पोताना वितराग-चारित्र-रुप स्वभाव स्थिरतानी ज पुर्णतारुप सिद्धी करे छे। आवा प्रकारनु ज्या अनेकांतरुप आचरण वर्ते छे, त्या निमित कारणनी अपेक्षाए शुभोपयोगरुप एवा ते व्यवहार प्रवर्तनने साधन कहेवा योग्य छे। मतलब के उभय नयना बोधपुर्वक थती भावनानु यथार्थपणु छे, अने तेना अभावे अन्यथापणु छे, एम उपरोक्त बोधथी समजवा योग्य छे।

आ उपरथी तत्व-शोधक जीव विचारशे तो स्पष्ट समजाशे के जे साधक जीव शुद्धनयना अव-लंबनपुर्वक शुभोपयोगरुप एवी बाह्य व्यवहार साधनानो आदर अकर्ताभावे एटले ते भावोमा पोताना स्वामित्वभावनी नकार-बुद्धीपुर्वक करे छे, त्या ज सम्यग्दृष्टीपणु के शुद्ध आत्मार्थपणु होवु घटे छे, अने त्या ज निमित उपादाननी संधीपुर्वक निश्चय व्यवहाररुप मोक्ष-मार्गनी सिद्धी सम्यक् प्रकारे थई शकवा योग्य छे, एम आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक समजवा योग्य छे।

प्रश्न—निर्ग्रन्थदशानी प्राप्तीना समये पंच महाव्रतादि शुभ विकल्पनो आदर थवा छता जेम तेना आश्रये वितराग-चारित्रनी उपलब्धी थई शकवा योग्य नथी, तेम शरिराश्रीत वस्त्रादिनो त्याग के ते ग्रहणरुप थवामां, तथारुप विकल्पनु तेने आश्रयपणु छे के केम ? जो छे तो वस्तुनु पराश्रीतपणुं जैन दृष्टीए असिद्धरुप ठरे छे, अने नथी तो तेनु कर्तापणु कोने आश्रये रहेलु छे ?

उत्तर—निग्रंथदशानी प्राप्तीना समये पंच-महाव्रतादि शुभ विकल्पनो आदर थता छता जेम तेना आश्रये वितराग-चारित्रनी उपलब्धी थई शकवा योग्य नथी, तेम वस्तु मात्रनु सदा स्वाधीन-पणु होवाथी तेना आश्रये शरीराश्रीत वस्त्रादिनो त्याग के ते पृथकरुप पण थई शकवा योग्य नथी, अने तेथी तेनु कर्तापणुं तेना आश्रये एटले ते समये पृथकरुप थवा योग्य एवा ते वस्त्रादिने ज अवलंबीने रहेलुं छे। अहिं ते संबंधी जीव अने पुद्गल कर्मना परस्पर निमित-नैमितिक संबंधने मुख्य करी तेना स्पष्टार्थ बोधनु निरुपण करवामा आवे छे।

वस्तुना परमार्थने विचारीए तो जीव अने पुद्गल कर्म, ए बंनेनी थती एवी जे परिवर्तनशील अवस्था तेनु परस्पर निमित-नैमितिकपणु छे, अने तेम होवाथी जीवनी रागादि-भावरुप एवी एक समयवर्ती अशुद्ध अवस्थाना समये तेना निमितभुत एवां द्रव्य-कषायोनु पुद्गल-कर्मना विषे उदयरुपे होवु एम स्वभावीक ज होय छे। आवा प्रकारना निमित-नैमितिक संबंधनु सम्यक् प्रकारे जाणपणु जे जीवने सम्यग्दर्शनना बळे प्रगटे छे, ते जीव सम्यग्दर्शननु वास्तविक फल वितरागपणु होवाथी जेम जेम ते तथारुप ध्येयने एटले पोताना अस्तिरुप एवा वितराग-स्वभावनी एकत्वरुप स्थिरताने अवलंबतो जाय छे, तेम तेम तथारुप शुद्ध अवस्थाना बळे स्वमा नास्तिरुप एवी रागादि-भावरुप अशुद्धतानु क्रमे करी अभावपणु थतु जाय छे, अने तेम थता ते रागादि-भावना निमितभुत एवा जे चारित्रमोहनीयना बीजा अने त्रीजा चतुष्टयरुप उदयजन्य कषायो तेनु पुद्गल-कर्मना विषे क्षायोप-शमीकभावे तेना पोताना कारणे अभावपणु थई जाय छे, ने थतु जाय छे, अने तेम थता तेना निमितभुत एवा शरिराश्रीत वस्त्रादिनुं पृथकपणुं पण तेना पोताना कारणे निग्रन्थदशानी प्राप्तीना समये त्यां स्वभावीक ज थई जाय छे, अने तेथी जीवना तथारुप विकल्प साथे पृथकरुप थवा योग्य एवा शरिराश्रीत वस्त्रादिनु कोई पण प्रकारे संबंधपणु नथी, पण पुद्गलकर्म साथे परस्पर तेनु मात्र निमित-नैमितिकपणुं छे, एम जैनतत्त्वदृष्टीए वस्तुना परमार्थने समजवा योग्य छे।

आ उपरथी स्पष्टार्थ बोध आत्मार्थी जीवे एम ग्रहण करवा योग्य छे के निश्चयरुप एवा वितराग-चारित्रनी प्राप्ती अने तेनी पुर्णतारुप सिद्धी निश्चयरुप एवा पोताना वितराग-स्वभावने अवलंबवाथी ज थाय छे, अने ते अनुसार निग्रन्थदशाने संप्राप्त थयेल एवा ते स्वरुप-साधक-जीवनी अंतर्मुख साधनामा निश्चयनयना अवलंबनभुत एवा मात्र एक ज्ञानादि सम्यक्त्वरुप भावनु के वितराग भावरुप चारित्रनु ज मुख्यपणु होय छे, अने ते स्वाश्रीत एवो सद्भुत-व्यवहार होवाथी ते स्वरुप पुर्णता पर्यंत एक-सरखो अस्तिरुपे टकीने ज रहे छे, अने पंच-महाव्रतादि एवुं जे अठ्ठावीश मुळगुण सहीत बाह्य शुभोपयोगरुप साधन ते निमिताश्रीत एवो असद्भुत व्यवहार होवाथी ते स्वरुप पुर्णता

पर्यंत स्वमा नास्तिरुपे मात्र जाणवा योग्य दृष्टीए रहे छे, अने तेने ज अनेकांतरुप साधनना नामथी मनोधवा योग्य छे। तथा प्रकारनी अंतर्मुख साधना उपरोक्त एवा ते स्वरुप-साधक जीवने होवाथी तथारुप लक्षे ते पोताना विकास-क्रमनी वर्द्धमानताने सम्यक्‌योगे अवलबतो जाय छे, अने ते ज तेना आत्मार्थ जीवनने पुनः पुनः प्रशंशवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथासुत्रना बोध विशेषथी समजवा योग्य छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> एम द्रव्यने भावथी, मुनीलींगे विचरे तेह।
> योग अने उपयोगथी, सदा अप्रमत्त थई एह॥
> त्यां होय परिषह के उपसर्ग, तो पण रहे स्वरुपे अडग।
> थईए छट्ठीअवस्थानी वात, हवे सप्तम बोधुं सुण भ्रात॥१२॥

अन्वयार्थ— आ प्रमाणे ते साधक-जीव योग अने उपयोगथी सदा अप्रमत्त थई द्रव्यथी अने भावथी मुनीलींगपणे विचरे छे। त्या अनेक प्रकारना परिषह-उपसर्गादि उदयरुपे होवा के थवा छता, पण ते स्व-स्वरुपना विषे सदा अडग रहे छे। अहिं सुधी छट्ठी अवस्थानो वात थई, हवे तने सप्तम अवस्था बोधुं छुं, ते हे शीष्य तुं आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे कोई सम्यक्‌दृष्टी जीव ज्ञानादि-सम्यक्त्रयरुप एवा पोताना शुद्ध वितराग स्वभावनी के वितरागरुप चारित्रनी अतरग सिद्धी अर्थे बाह्यातर द्रव्यथी अने भावथी निर्ग्रंथ-दशानी प्रासीरुप एवा मुनीलींगनो स्वीकार करे छे, ते जीव तथारुप एवा ते पोताना स्वरुपस्थ-ध्येयनी सिद्धी अर्थे योग अने उपयोगथी निरतर अप्रमत्तपणे विचरवाना पुरुषार्थ धर्ममा योजाय छे, ए सहज अने स्वभाविक छे। आवा प्रकारनी शुद्ध संवरभावरुप अतर्मुख स्थिरताने अवलबीत एवा उपरोक्त सुसाधकनी बाह्यातर द्रव्यथी अने भावथी एवी परम निग्रन्थदशा होवाथी ते अनुकूल प्रतिकूल परिषह उपसर्गादिना विकट प्रसगमा पण त्या पोते पोतानु स्वरुप-भान टकावी राखे एवु उत्कृष्ट स्वरुप जाग्रतीपणु तेने वर्ततुं होय छे, अने ते तथारुप एवी तेनी स्वरुप-साधना तरफ दृष्टी प्रेरता आत्मार्थी जीवने ते सहज ख्यालमा आवी शकवा योग्य छे, अने ए ज उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं सप्तम अवस्थाना बोध विशेषनु आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

卐

(सप्तम बोध अवस्था अधिकार)

सप्तम अवस्थाना विषे, बोध सुर्यनी प्रभा समान।
तेथी उत्कृष्ट भावे अहिं, होय प्रज्ञदशा स्थिर जाण ॥
तेथी अप्रमत्त थईने स्थित, वर्ते स्वरुप ध्यानमां नित्य।
तेथी आ अवस्थानु नाम, ध्यानप्रीया कहीए निष्काम ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—सप्तम अवस्थाना विषे बोध सुर्यनी प्रभा-समान, एटले जेम सुर्यनो-प्रकाश ताराना प्रकाश करता विशेष जोरदार होवाथी विशेष तेज रुपे एक सरखो स्थिर टकी शके छे, तेम सम्यग्ज्ञान दर्शनादिरुप आत्म-बोधनु अस्तित्व पण अहिं पुर्व अवस्था करता पण घणीज विशेष शुद्धता अने स्थिरतारुप परिणामे एक-सरखु टकी शके तेवु योग्यपणु तेना विषे होय छे, अर्थात उपलब्धरुप थाय छे, अने तेथी अहिं उत्कृष्ट भावे कहेता विशेष स्वरुप-एकत्वरुप परिणामे प्रज्ञरुप एवी ज्ञानदशा स्थिरपणे वर्तती होय छे, एम तु जाण, अने तेथी त्यां ते विशेष अप्रमत्त थईने नि य स्वरुप ध्यानमा वर्ते छे, अने तेथी आ अवस्थानु नाम ध्यान-प्रीया एवु निष्काम अतर-योग-वृतिपणु होवानु कहीए अर्थात कहेवा योग्य छे, एम हे शीष्य तु आ जिन प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—वास्तविक एवा स्वरुप ध्याननी शरुआत वास्तविक एवा आत्म स्वरुपनी स्व-सवेदनरुप एवी सम्यक्-प्रतिती उपलब्धरुप थये ज थाय छे, अने तथा प्रकारनी थयेली एवी जे स्वरुप-ध्याननी शरुआत ते क्रमे करी स्वरुप-स्थिरतानो, स्वरुप-स्थिरतानी वर्द्धमानतानो, अने अतिम स्वरुप स्थिरतानी पुर्णतानो हेतु पण बने छे। मतलब के ते विना एटले वास्तविक एवा आत्म स्वरुपनी स्व-सवेदनरुप एवी सम्यक्-प्रतिती प्रगट्या विना, वास्तविक एवु स्वरुप ध्यान के स्वरुपस्थ थवानो ध्याननो पुरुषार्थ होई शके नहिं, एम आत्मार्थे सद्विवेकपुर्वक समजवा योग्य छे।

प्रश्न—ध्यान कोने कहेवामा आवे छे, अने तेना एकदर केटला भेद छे, अने ते पृथक पृथक भेदनु वास्तविक स्वरुप शु छे?

उत्तर—ध्येय वस्तुमा चित्तनी एकतार-वृत्ति थवी तेने ध्यान कहेवामा आवे छे। तेना मुळ चार, अने ते प्रत्येकना पण चार एम एकंदर सोळ भेद छे, ते पृथक पृथक भेदनु वास्तविक स्वरुप अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

(आर्त ध्यान)

कोई पण अशुभ चिंतनमा चित्तनी एकतारवृत्ति थवी तेने आर्त ध्यान कहे छे, तेना चार भेदनु स्वरुप निचे प्रमाणे छे।

इष्ट वियोग

पोताने इष्ट मनायेला एवा कोई पण पदार्थना वियोगथी, पोताना विषे खेदात्मक परिणाम विशेषनु उपस्थितपणुं थवु ते।

अनिष्ट सयोग

पोताने अनिष्ट मनायेला एवा कोई पण पदार्थना सयोगथी पोताना विषे खेदात्मक परिणाम विशेषनु उपस्थितपणुं थवु ते।

वेदनाजन्य

शरिरनी व्याधिग्रस्त हालतथी पोताना विषे खेदात्मक परिणाम विशेषनु उपस्थितपणुं थवु ते।

निदानजन्य

कोई पण इच्छीत वस्तुनी कामनाथी पोताना विषे सकल्पात्मक परिणाम विशेषनुं उपस्थि तपणु थवु त।

(रौद्रध्यान)

कोई पण हिंसक प्रवृति करवामा के कराने आनद मानवामा चित्तनी एकतार-वृत्ति थवी तेने रौद्रध्यान कहे छे, तेना चार भेदनु स्वरुप निचे प्रमाणे छे।

हिंसानद

भानपुर्वक कोई जीवनी हिंसा करी के करावी पोताना विषे हर्ष-विशेष परिणामनु उपस्थित पणु थवु ते।

मृषानद

भानपुर्वक मृषाभाषण करी के करावी पोताना विषे हर्ष-विशेष परिणामनुं उपस्थितपणुं थवु ते।

चौर्यानद

भानपुर्वक पराई वस्तुनी चोरी करी के करावी पोताना विषे हर्ष विशेष परिणामनुं उपस्थितपणुं थवु ते।

परिग्रहरक्षणानंद

भानपुर्वक दश प्रकारना बाह्य परिग्रहना रक्षणार्थे अनेक प्रकारनी योजनाओ करी के करावी

तेनी आवादी टकावी राखनारुप एवा पोताना विषे हर्ष-विशेष परिणामनुं उपस्थितपणुं थवुं ते ।

(धर्म ध्यान)

परम एवा पोताना शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मनी प्राप्तीना के तेनी अंतर-स्थिरताना हेतु-लक्षने अवलंबी तना सम्यक्‌रुप चिंतवनमा चित्तनी एकतार-वृत्ति थवी तेने धर्म ध्यान कहे छे, तेना चार भेदनु स्वरुप निचे प्रमाणे छे।

आज्ञा विचय

शुद्ध आत्म-धर्मनी प्राप्तीना वास्तविक ध्येयपुर्वक वास्तविक एवा श्री जिनाशय-तत्वार्थ-बोधने सन्मुख-भावे अवलंबीत थवारुप, के ते अर्थे प्रत्यक्ष एवा कोई सद्‌गुरुनी आज्ञाने अनुसरवारुप एवी निज आत्मार्थ विचारणानु उपस्थितपणुं थवु ते ।

अपाय विचय

आ जीव अस्ति-नास्तिरुप भावना वास्तविक भेदविज्ञानना अभावे अनादि-काळथी एकांत पराधीन लक्षे असीम एवी दुःखरुप परिस्थितिने अनुभवी रह्यो छे, एम सम्यक् प्रकारे विचारवु ते ।

विपाक विचय

साता असाता के सुख दु खादिरुप एवी जे आ वर्तमान विपाकोदय जन्य परिस्थिति ते मात्र जीवना पुर्वोपार्जीत अज्ञाननु फल छे, एम सम्यक् प्रकारे विचारवु ते।

संस्थान विचय

आ जीव अनादि काळथी पोतानी विपर्यात्मक बुद्धीने वश थई षट् द्रव्यात्मक एवा आ लोकना विषे तेनी दशे दिशामा पर्यटन करी रह्यो छे, एम सम्यक् प्रकारे विचारवु ते।

(शुक्ल ध्यान)

केवळ आत्मस्वरुपना अंतर्मुख चिंतवनमा चित्तनी एकतार वृत्ति थवी तेने शुक्ल ध्यान कहे छे, तेना चार भेदनु स्वरुप निचे प्रमाणे छे ।

पृथकत्व-सवितर्क

ज्ञानादि सम्यक्‌त्रयनी विशेष अंतर्मुख स्थिरताना हेतुरुप एवा सुक्ष्म भावश्रुतनी विचारणाने अवलंबीत थई स्व द्रव्य-गुण-पर्यायनु विशेष प्रकारे स्वरुप विज्ञान करवु ते ।

एकत्व–सवितर्क

ज्ञानादि सम्यक्‌त्रयनी पुर्ण स्थिरताना हेतुरुप एवा स्व द्रव्य-गुण-पर्यायनुं सर्वथा अभेद-परिणामीपणु थवु के करवु ते।

सुक्ष्मक्रिया–प्रतिपाति

योगनी परिस्पदनरुप क्रियाना निग्रहरुप एवी सुक्ष्म काय-योगनी अवलंबनरुप क्रिया, त्रयोदश गुणस्थानकनी पुर्णाहुतीना समये थवी ते।

व्युपरतक्रिया–निवर्ती

योगनी परिस्पदनरुप क्रियाना पुर्ण निग्रहरुप एवुं सर्वथा स्वभावर्वतीपणुं अयोगी गुणस्थानकना विषे थवु ते।

आ प्रमाणे ध्यानना मुळ चार अने ते प्रत्येकना पण चार एम एकंदर सोळ भेद छे. तेमा आर्तध्यान, अने रौद्रध्यान, एवा जे आदिना बे भेद ते हेयरुप होवाथी त्यागवा योग्य छे, अने धर्म ध्यान अने शुक्लध्यान, एवा जे अतना बे भेद ते उपादेयरुप होवाथी आदरवा योग्य छे। तथारुप ध्यानना अतिम एवा जे चार भेद तेना प्रथक् प्रथक् स्वरुपने, अने गुणस्थाननी दृष्टीए तेनी स्थिरताना अनुक्रमने विचारीए तो शुक्लध्याननो एवो जे प्रथमनो भेद ते वितर्क अने वीचार एम बन्नेना सद्भावपुर्वक होय छे, अने ते उपशम-श्रेणीनी अपेक्षाए आठमाथी अग्यारमा गुणस्थान पर्यंत अने क्षपकश्रेणीनी अपेक्षाए आठमाथी दशमा गुणस्थान पर्यंत टके छे। बीजो भेद वीचार रहीत मात्र वितर्कना सद्भावपुर्वक सर्वथा अचळरुप होय छे अने ते बारमा गुणस्थानना अतपर्यंत टके छे। त्रीजो भेद योगनी परिस्पंदनरुप क्रियाना निग्रह-हेतुरुप होय छे, अने ते सयोगी केवली एवा त्रयोदश गुणस्थानना अतिम भागथी शरु थई तेनी पुर्णाहुती पर्यंत टके छे, अने चोथो भेद योगनी परिस्पदनरुप क्रियाना पुर्ण निग्रहरुप होय छे, अने ते अयोगी-केवली एवा चतुर्दश गुणस्थानना अतिम समय पर्यंत टकीने त्या समयमात्रमा पुर्णवितरागत्व-पदने पामेल एवा ते अरिहंत प्रभु उर्ध्वगमन करी सिद्धालयना विषे सिद्धपदे स्थिर थाय छे।

प्रश्न—वितर्क अने वीचार ए बनेमा लक्षण-भेदे शु तफावत रहेलो छे, अने तथारुप ध्यान सुक्ष्म एवुं अतर-श्रेणीरुप होवा छता तेने (शुक्लध्यानना पहेला भेदने) वीचारना सद्भावपुर्वक कहेवानु अहिं शु प्रयोजन छे ?

उत्तर—वितर्क अने वीचार ए बंनेमा लक्षणभेदे रहेला तफावतने विचारीए तो [illegible] सुक्ष्म एवा अतर्मुख उपयोगने वितर्क ए नामथी सबोधवामां आवे छे, अने [illegible] एवी अतर्मुख स्थिरता थवाना पूर्वे त्या ध्यानस्थ-दशामा वर्तती एवी जे [illegible] मक्रातिरुप क्रिया तेने वीचार ए नामथी सबोधवामा आवे छे।

आ प्रमाणे वितर्क अने वीचारमा लक्षण-भेदे रहेला तफावतनु स्वरूप छे। [illegible] ध्यानने वीचारना सद्भावपुर्वक कहेवानु शु प्रयोजन छे, ते सबंधी विचारीए [illegible] निश्चल एवी अतर्मुख स्थिरता न होवाना लीधे उपर कह्या प्रमाणे त्यां अर्थ, [illegible] रुप-क्रियानु सद्भावपणु अवश्य होय छे अने ते ज हेतुनी प्रधानरुप दृष्टीए [illegible] भेदने वितर्क अने वीचारमा सद्भावपूर्वक होवानु जिनागमना विषे प्रतिपादन [illegible]।

आ उपरथी स्पष्ट समजाशे के वीचाररुप परिणामनी प्रधानरुप दृष्टीए [illegible] एवो एक पण विचार अहिं उदयरुपे होतो नथी, अने तेथी तेने निर्विकल्प [illegible] यथार्थरुप छे। आवी यथार्थरुप ध्यानदशा होवा छतां अहिं ते सावकल्प [illegible] शके तेवी अति-सुक्ष्म अर्थ-सक्रातिरुप एटले स्वरुपध्याननी अतर्मुख-श्रेणीमां [illegible] चिंतवनानु परिवर्तनशीलपणु थवु ते। व्यजन सक्रातिरुप एटले श्रुतना [illegible] बीना वचनरुपे परिवर्तनशीलपणु थवु ते, अने योग-सक्रातिरुप एटले [illegible] परिवर्तनशीलपणु थवु ते। एम अनेक प्रकारनी सुक्ष्म-क्रियानु [illegible] आवी शके तेवु त्या वर्ततुं होवाथी शुक्ल-ध्यानना तयारुप पहेला भेदे [illegible] रना सद्भावपुर्वक होवानु मबोधवामा आव्यु छे, अने बीजा भेदे [illegible] आदिरुप क्रियानु अभावपणु थई स्वरुपस्थ-ध्याननु परम निश्चल [illegible] त्या मात्र वितर्कनुं ज सद्भावपणु होय छे, अने ए ज शुक्ल-ध्यानना [illegible] तारतम्यरुप अवस्था भेदे रहेलु तफावतपणुं छे।

आ प्रमाणे शुक्लध्यानना एकदर चार भेदना स्वरुपनी [illegible] वस्तुने मिमामा करवा योग्य छे। तथा-प्रकारना ध्यान-विशेष होवनु [illegible] करवी सुमावक्ने होवाथी ते तथारुप लक्षे तथारुप एवा ते स्वरुप ध्यान [illegible] तथारुप पुरु-जाय छे, अने तेथी अहिं तेनी अप्रमत्त उपयोगे स्थिरता [illegible] विषे होय स्वमाविक छे, अने ते हेतुथी उपरोक्त अवस्थाने ध्यान-श्रेणी [illegible] रुप स्वरुप

दर्शानी, तेने तथाप्रकारना परम अलंकृत नामथी सबोधगामा आवेल छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे

> स्वानुभवरुप सुखनो, अहिं होय परम आह्लाद।
> तेथी त्रैलोक सुख ते, तृणवत गणी करे बाद॥
> एवुं स्वानुभवनुं सुख, ध्यानतणुं समजावु शुं मुख।
> करी शकुं नहिं वर्णन ते, स्वानुभवे समजाशे ए॥२॥

अन्वयार्थ—अहिं स्वानुभवरुप एवा पोताना स्वाधीन स्वभाव-सुखनो तेने परम आह्लाद कहेता सहजानंदपणुं वर्ततुं होयछे, अने तेथी ते पराधीनरुप एवा त्रण-लोकना सुखने पण तृणवत् गणी बाद करे छे। आवुं जे ध्यानस्थ दशारुप स्वानुभवनुं सुख छे, तेनु वर्णन वचने करी कोई पण प्रकारे थई शक्वा योग्य नथी, एटले ते हु तने मुखवडे करीने शु समजावुं, अर्थात् ते तने स्वानुभवे समजाशे, एम हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मा ए अनंत-धर्मात्मक-वस्तु होवाथी तेना विषे जेम जोवा-जाणवारुप गुणो अस्तित्व वर्ती रहेलु छे, तेम सुखगुणनुं अस्तित्व पण तेना विषे त्रिकाळ एकरुपे रहेलुं छे, ते सुख गुणनी अवस्था अनादिकाळथी जीवना पर्यायाधीन लक्षथी विकाररुपे परिणमेली होवाथी तथारुप ए ते सुख-गुण पोताना विषे छे, एवी वास्तविक प्रतिती जीवने आज-पर्यंत स्फुरायमान थई नथी। आ प्रकारना बोध-श्रवणनो सुयोग कोई आत्मार्थी-जीवने थता, ते तथारुप बोधने आत्मार्थ सदुविवेकपु अवधारी पोताना चैतन्यात्मक स्वभावनी सर्वांग समाधानीने पामे छे, अर्थात् ते जीव सम्यक्दृ थाय छे। आवा सम्यग्दृष्टी जीवने पोताना चैतन्यात्मक स्वभावनु सम्यक् जाणपणु होवाथी ते तथा सुखगुणना हेतुभुत एवी ज्ञानादि सम्यक्त्रयरुप स्वभाव-स्थिरतानी सिद्धी मात्र एक पोताना स्व ध्यानथी ज करे छे, अने ते ज स्वरुप ध्यानथी उत्पन्न थयेलुं एवु ज परम आह्लादरुप स्वानुभ सुख तेना स्व-संवेदनने ते आस्वादे पण छे।

आ प्रमाणे उपरोक्त एवा ते सुसाधक जीवने पोताना स्वरुप-ध्यानथी उत्पन्न थयेलु एवु पोतानु स्वानुभवरुप स्वाधीन सत्-सुख तेना परम आह्लादनी वास्तविक एवी तत्त्व मिमांसा पोत स्व-सन्मुख उपयोगे थता ते पराधीन रुप एवा त्रण-लोकना सुखने पण तृणवत गणी बाद करे, ए

परिणामरुप एवा पोताना स्वाधीन सत्-सुखना अनुभवे करी तेनु सर्व प्रकारे तुच्छपणु भासे ए सहज अने स्वभावीक छे, अने ए ज स्वरुप ध्यानथी उत्पन्न थयेला परम एवा ए आह्लादनु प्रत्यक्ष एवु आ फल छे, अने ए ज उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

स्वरुप-ध्याननी अंतरे, थाय वृद्धी विशेष जेम।
अप्रमत्त भावे स्थिरता, पामे विशेष साधक तेम ॥
तेथी प्रगटे विशेष आंय, प्रज्ञ-दशा शुद्ध अंतर-मांय।
स्वरुप-ध्याननुं एवु जाण, फल तु अंतरमां सुजाण ॥३॥

अन्वयार्थ— अहिं जेम जेम अंतरना विषे स्वरुप-ध्याननी वृद्धी विशेष प्रकारे थतो जाय छे, तेम तेम अप्रमत्त भावे स्थिरता पण ते स्वरुप-साधक-जीव विशेष प्रकारे पामतो जाय छे, अने तेथी अहिं अंतरना विषे परम-शुद्ध एवी प्रज्ञ दशा कहेता निर्मल-ज्ञान अवस्था विशेष प्रकारे प्रगटे छे. एवुं स्वरुप-ध्याननु फल हे सुजाण शिष्य, तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अन्तरमां जाण।

विशेषार्थ— स्वरुपध्यानने अवलंबीत एवा सर्व कोई निग्रंथ महात्माओनो अन्तर्मुख ध्येय के पोतानो वास्तविक लक्ष क्रमे-क्रमे स्वभाव स्थिरतानी वर्द्धमानतानो, अने तेनी पुर्णता[illegible] [illegible] होय छे, अने तेम होवाथी जेम जेम तेवा स्वरुप-साधक-जीवनुं तथारुप एवा [illegible] स्वरुप ध्यानमा पोतानुं एकतारपणु थतु जाय छे, तेम तेम स्व-स्वरुपना विषे उपयोगनी [illegible] पण ते निरंतर प्रकारे पामतो जाय छे, अने तेथी अहिं अंतरंगना विषे परम उज्ज्वल एवी [illegible] कहेता निर्मल ज्ञान-अवस्था तेने विशेष प्रकारे प्रगटे छे, अने ए ज स्वरुप ध्यानना [illegible] स्वभाव [illegible] रुप के निर्मल ज्ञान-अवस्थानी उपलब्धीरुप प्रयत्न एवु आ फल छे।

आ उपरथी तत्त्वशोधक-जीवने स्पष्ट समजाशे के [illegible] स्वभाव होवे जाएया पछी स्थिरतानो प्रश्न रहतो नथी, एटले स्थिरता [illegible] तेना [illegible] पडती नथी, पण ते अर्थे स्व-तरफ वियतिमक-रुचीना [illegible] अने नि[illegible] पार्थमा निर्पोत्साहपणुं ते ज मात्र एक परम एवा ते [illegible] छे, अने ते ज लक्ष उपरोक्त एवा ते स्वरुप साधक [illegible] ते [illegible]

ध्याननी अंतर्मुख साधनाने निरंतर सम्यक् योगे अवलंबतो जाय छे, अने ते द्वारा स्वभाव
वर्द्धमानताने पण पामतो जाय छे, अने ए ज उपरोक्त गाथा-सुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे।
तेना अनुसंधानपूर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

क्वचित अहि कषायनो, थतां उदय विचारे मन।
हु छु शुद्ध चैतन्यमय, मात्र ज्ञाता ते भावोथी भिन्न।
अवलंबतां एम अस्ति स्वभाव, नास्ति-भावनो थाय अभाव।
स्वरुप-पुर्ण थवा सुखरुप, साधे अंतर एम स्वरुप।

अन्वयार्थ—क्वचित अहिं उदयनी जबरजस्तिथी कषायजन्य-भावनुं स्फुरवुं
मनना विषे एम विचारे छे के ते परजन्य भावथी भिन्न एवो हु मात्र ज्ञायक-स्वभावरुप शुद्ध
घन आत्मा छु, एम पोताना अस्तिरुप स्वभावने अवलंबीत थतां, त्यां नास्तिरुप एवा ते
भावनुं सहज अभावपणु थई जाय छे, एम पुर्ण-स्वरुप वितरागत्वनी सिद्धी अर्थे ते स्वरुपमा
पोताना अंतर-परिणामना विषे सत्-सुखामृतरुप एवा पोताना स्वरुपने साधे छे, एम हे शीघ्र
जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे कोई स्वरुपसाधक जीव पोतानी स्वरुप-साधनाने अवलंबीत थाय
पोताना विषे अत्यन्त एवु स्वरुप-जाग्रतीपणुं होवा छता, क्वचित उदयनी जबरजस्ति थी त्य
जन्य-भावनु स्फुरवु थाय छे, तेवा समये ते मुमाक्षक पोते पोताना शुद्ध ज्ञायक-स्वभावना अव
ते परजन्य विकारनुं भेदविज्ञान करी मनना विषे एम विचारे छे के वर्तमान-काळे उदयरुपे
थता एवा जे आ रागादि भावो ते पुर्वे अज्ञानात्मक-भावरुप एवा अशुद्धोपयोगनु निमित पाम
परिणामी थयेल तेनो आ मात्र विकार छे, एम पोताना अस्तिरुप स्वभावने अवलंबीत थई
त्या नास्तिरुप एवा ते परजन्य भावनु सहज अभावपणु एटले अबंध परिणामे निर्जरवापणुं
छे, अने ए रीते पोताना पुर्ण-स्वरुप वितरागत्वनी सिद्धी अर्थे एवो ते स्वरुप-मात्रक जीव
अंतर-परिणामना विषे सत्-सुखामृतरुप एवा पोताना स्वरुपने साधे छे।

प्रश्न—मात्र उदयनी जबरजस्तिथी कषायादि भावोनु स्फुरवु के ते भावोमां परि
थत होय तो [illegible]

उत्तर—उदयनी जबरजस्तिथी कषायादि भावोनु स्फुरवुं के ते भावोमा परिणमवापणु थतु के तेनो अर्थ उदय कर्म जीवने बलात्कारथी ते भावोमा प्रेरीत करे छे, तेम नथी, पण जीवने पोताना पुरुषार्थनी दुर्बलताना लीधे निमिताधीन थवाथी तेम थाय छे, एम निमितनु ज्ञान कराववा अर्थे ते कथन छे, एम तेना वास्तविक अर्थने अनेकातन्यायथी समजवा योग्य छे, अने ते ... अवधारता वस्तुस्वभाव निर्पेक्ष होवानुं एवु जे जिनागमनु कथन तेनी पण त्या सिद्धी ... योग्य छे।

प्रश्न—अहिं उपरोक्त निमिताधीत कथनने गौण करी, मुख्य एवा जीवना उपादान ... प्रेरी विचारीए तो, ते दृष्टीए सम्यक्‌दृष्टी जीवनु कषायादि भावोमा थतु परिणमन तेनो मुख्य हेतु शुं छे?

उत्तर—तथारुप-दृष्टीए विचारीए तो ते समयनी एवा ते सम्यक्‌दृष्टी जीवनी ... एटले पोताना चारित्र-गुणनी पर्यायजन्य योग्यतानुं ज कारण छे, अर्थात् श्रद्धा-गुणनी ... अपेक्षाए ते सम्यक्‌दृष्टी जीवने कषायादि भावोमा परिणमवानी भावना किंचित मात्र ... पण चारित्र-गुणनी पर्यायनुं तथाप्रकारे निर्मलत्व नहीं होवाथी तेनुं तथाप्रकारना ... पोतानी ते समयनी परिणमवा योग्य योग्यतानुसार सहज स्वतन्त्ररुपे परिणमवु थाय छे, ... वस्तुस्वभाव पोतानु निर्पेक्षपणु होवानु सिद्ध करे छे।

प्रश्न—जो एम ज होय तो तथारुप योग्यतानो यावत्-स्थिति-पर्यंत ... भावोने रोकवानु के ते रुपे नहीं परिणमवानुं एवा ते सम्यक्‌दृष्टी जीवथी ... छतां पण शी रीते बनी शके? अने पोतानी स्वरुप प्रगति पण शी रीते करी शके?

उत्तर—सम्यक्‌दृष्टी जीव तथारुप कषायादि भावोने रोकवा जो ... नहीं परिणमवा पोते पोतानी स्वरुप-जाग्रतीना बळे त्रीकाळ समर्थ छे, अने ... रहेलो एवो जे स्वरुप-प्रगतिनो मार्ग ते त्रीकाळ अबाधित होवानुं सिद्ध ... विशेष प्रकारे निरुपण निचे प्रमाणे छे।

जे जीवने सम्यग्दर्शन थाय छे, तेने वस्तुमात्रनी पोत-पोताना ... एवी जे तेनी क्रमबद्ध-अवस्था, तेनु वास्तविक निर्णयात्मकपणु ... नियमा ..., अने सम्यक्‌ज्ञानपुर्वक होय छे, अने तेथी ते पोतपोतानी योग्यतानुसार ... स्वतन्त्र पर्यायनो स्वीकार पोते पोताना अक्रमरुप एवा सामान्य ... अन्तर्लीन थई ... ने ते आवा प्रकारनो स्वीकार पोताने पोताना सम्यक्‌ज्ञानपुर्वक होवाथी ... जीवनो ... स्व-

(आठमी बोध अवस्था अधिकार)

अष्टम अवस्थाना विषे, बोध चंद्रनी प्रभा समान ।
सर्वोत्कृष्ट भावे अहिं, होय ज्ञानदशा स्थिर जाण ॥
शुद्ध पारिणामीक तेथी मुख्य, करी सेवे ध्यान अतर्मुख ।
व्यापक थईने स्वमां ते, ज्ञप्तिक्रिया त्यां ज्ञाननी ए ॥१॥

अन्वयार्थ—आठमी अवस्थाना विषे बोध चंद्रनी प्रभा समान एटले जेम चद्रनो प्रकाश सुर्यना प्रकाश करता स्वभावीक ज शीतलरुप अने शांति-प्रेरकरुप होवाथी ते अनुसार ते एक सरखा परिणामे स्थिर टकी शके छे, तेम सम्यक् ज्ञान-दर्शनादिरुप आत्मबोधानुं अस्तित्व पण अहिं परम शीतलभुत एवा शांतरसे परिणमी ते संपुर्ण शुद्धता अने स्थिरतारुप परिणामे शीतल एक सरखु टकी शके तेवु योग्यपणु तेना विषे होय छे, अर्थात् उत्कृष्टरुप थाय छे, अने तेथी अहिं सर्वोत्कृष्ट भावे रहेता विशेष एवा स्वरुप एकत्वरुप परिणाम स्वरुप एवी ज्ञानदशा स्थिरपणे वर्तती होय छे, एम तु जाण, अने तेथी ते साधक आत्मा व्यापक थई एटले पोते पोताना विषे अभेदभावे परिणमी अने त्यां शुद्ध पारिणामीकभावने मुख्य करी ते तथाप्रकारना अतर्मुख-लक्षे स्वरुप ध्यानने सेवे छे, अने तेने त्यां ज्ञप्तिरुप एवी ज्ञाननी क्रिया ए ज्ञानथी स्वात्मामा थाय छे, एम हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने ग्रहण कर ।

विशेषार्थ—अहिं ते स्वरुप-साधक जीवनी उग्र एवी स्थितिप्रज्ञदशा, ते पोतानी निर्विकल्प रचीतुं सर्व वलण एवा मात्र एक पोताना शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावना विषे पोतानी संपुर्ण अर्पणता-पुर्वक होवानु सम्यक् सुचन करे छे। आवा प्रकारनी परम उग्र एवी ज्या ज्ञानदशा वर्तती होय, त्या पोतानुं पोताना विषे स्वभाव अभेदत्वरुप एवुं अतर-व्यापकपणु होवु ए सहज अने स्वभावीक छे, अने ते पर्यायजन्य भेद-अवस्था प्रत्ये पोतानु अत्यत औदासीनपणु होवानु सुचन करे छे, अने ते साथे त्या तथाप्रकारना अतर्मुखलक्षे वर्तवा एवा स्वरुप ध्याननां ध्येयरुप के अतिम स्वरुप पुर्णतानी हेतुरुप, एवा पोताना शुद्ध पारिणामीक भावनु ज मुख्यपणु छे, अने ते पोतानी पोताना विषे स्व भावपुर्ण दृढी स्थिर होवानु सुचन करे छे, अने ते साथे त्या स्वरुप ध्याननी अतर्मुख एकाग्रतानी प्रेरक एवी ज्ञप्तिरुप वहेता ज्ञाननी ज्ञानमा स्थिरतारुप क्रिया, अत्यत विशुद्ध परिणामपुर्वक होवी ए

पण महज अने स्वभावीक छे, अने ते समस्त विभावजन्य के 'कृति' क्रिया तरफ पोतानु विशेष निर्लक्षपणु होवानु सुचन करे छे। आवा अप्रतिहत भावनी अतरग सन्मुखताने अवलबीत थयेला एटले स्वरुप स्थिरताना, तेनी वर्द्धमानतताना, अने अतिम स्वरुप पुर्णताना हेतुरुप एवो जे स्वरुप ध्यानना पुरुषार्थनो उग्र अतरवेग ते जोईए तेवा बाह्य सयोगो नचे पण पाछो न फरे एवा-उछळता निर्यात्मक-रुचीना बळ पुर्वक वर्ततो होय, ए पण सहज अने स्वभावीक छे, अने ते उपरोक्त एवा ते स्वरुपसाधक जीवनी तीव्र एवी स्वरुपपुर्ण जिज्ञासा होवानु सुचन करे छे।

आ उपरथी स्पष्टार्थ बोध एम ग्रहण करवा योग्य छे के जे जीव स्वरुप ध्यान अने तेनी स्थिरताना मुळ एवा स्वरुप-बोधरुप कारणथी पराङ्मुख थई मात्र बाह्यलक्षे तथारुप ध्यान, अने स्थिरताना उपायनी शोध करे छे ते नियमा मिथ्यादृष्टी छे, अने जे जीव तथारुप ध्यान अने स्थिरताना मुळ एवा स्वरुप-बोधरुप कारणने अवलबी ते द्वारा वास्तविक एवा वस्तुस्वभावने समजे छे, अने ते समज पुर्वक स्वभाव-सन्मुख थाय छे ते नियमा सम्यग्दृष्टी छे। मतलब के ज्या ज्या जे जे जीवने स्वरुप-ध्यान अने तेनी स्थिरताना उपायनो विकल्प उपस्थित थाय छे, त्या त्या ते ते जीवने स्वरुप-निःशकतानु न्युनपणु के तेनु अभावपणु होवु घटे छे, अने ज्या ज्या जे जे जीवने तथारुप ध्यान अने स्थिरताना उपायनो मुख्य एवो जे विकल्प तेनो स्वभावलक्षे परिहार वर्ते छे, त्या त्या ते ते जीवने निःशक एवु स्वरुप प्रतितीपणु होवु घटे छे एम उभयात्मक दृष्टीए समजवा योग्य छे।

प्रश्न — ध्यानस्थ अवस्थामा एवा ते स्वरुप-साधक जीवनु जे समये अतर व्यापकपणु होय, ते समये तेनु व्याप्यरुप परिणमन केवा प्रकारनु होय, अने ते वखते त्या ज्ञप्तिरुप-क्रियानु प्रधान कार्य शु होय, अने ते क्रियानु त्या भेदत्वपणु होय के अभेदत्वपणु वर्ततु होय ?

उत्तर—ध्यानस्थ अवस्थामा एवा ते स्वरुपसाधक जीवनु (तेनी निर्मल पर्यायनु) जे समये स्वभाव व्यापकरुप एवु अंतर व्यापकपणु होय, ते समये तेनु व्याप्यरुप परिणमन पण तेवा ज प्रकारे कहेता निर्मल एवी विनराग अवस्थारुपे ज वर्ततु होय छे, अने ते वखते त्या ज्ञप्तिरुप क्रियानु प्रधान कार्य पण तथारुप एवी ते ज्ञाननी ज्ञानमा अतर-स्थिरतारुप एवु जे ध्यानस्थ अवस्थानु निर्मल परिणमन तेने अस्खलित भावे टकावी राखवारुपे ज विशेष एवी स्वरुप-जाग्रतीपुर्वक होय छे, अने तेम होवाथी तथारुप क्रियानु पण अभेदत्वपणु त्या स्वभावीक ज होय छे।

आ प्रमाणे व्यापक-व्याप्यना अने ज्ञप्तिरुप-क्रियाना परमार्थने समजवा योग्य छे, अने ते उपरथी तेना विशेष बोधने एम अवधारवा योग्य छे, के व्यापक ए द्रव्य कहेता शुद्ध चैतन्यघन स्व-

आ उपरथी सहज लक्षमा आवशे के ते कोई स्वरुप-साधक-जीव पोते पोताना अक्रमरुप एवा शुद्ध द्रव्य स्वभावना वास्तविक भानपुर्वक तथारुप लक्षे एटले पोते पोताना तथारुप एवा शुद्ध द्रव्य स्वभावरुप परिणामे सपुर्ण अंतरव्यापक थई पोते पोताना विषे स्वभाव एकत्वरुप अभेद-स्थिरता करे छे, अने ते स्थिरताने अखंड एवी स्वरुप-ध्याननी अतर्मुख श्रेणीना बळे अस्खलित परिणामे टकावी राखे छे, ते जीव क्रमवद्ध एवी निर्मळ अवस्थाने प्रतिसमये विशेष विशेष विशुद्ध परिणामनी वर्द्धमानतापुर्वक उत्पन्न करी अतिम पुर्ण स्वरुप वितरागत्वने के केवळज्ञानरुपी दिव्य-प्रकाशने पामे छे, अने ते उपरोक्त भावना प्रगटेला एवा ते सपुर्ण प्रभुत्वने अवलोकता सहज सिद्ध थई शकवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथानुक्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहि तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

> घाति चतुष्टयनो अहि, थाय आत्यतिक अभाव।
> अप्रतिहत अतर ध्यानरुप, श्रेणी क्षपकनो ए प्रभाव॥
> एकादश वण ते श्रेणीना धाम, अष्टमथी द्वादश पर्यंत चार।
> ते स्पर्शी पामे त्रयोदश ते, क्षपकना गुणस्थानक ए॥३॥

अन्वयार्थ—अहिं घातिचतुष्टयनो एटले चार घातिकर्मावरणोनो आत्यंतिक अभाव थई जाय छे, अने ते अतरना विषे अप्रतिहत भावे उत्पन्न थयेल एवी स्वरुप ध्यानरुप क्षपकश्रेणीनो ज प्रभाव छे। तथारुप श्रेणीना विषे अग्यारमा उपशातमोह विना, आठमाथी बारमा पर्यंत एवा चार गुणस्थानकने ते स्पर्शी अतिम त्रयोदश एवा सयोगीकेवलीने ते पामे छे, अने क्षपकश्रेणीना मुख्यपणे बधी गुणस्थानक पण तेज छे, एम हे शिष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे कर्म आत्माना अनुजीवी-गुण-अवस्था विशेषनी व्यक्तताने रोकवामा निमित्तभुत थाय, तेने घातिकर्मना नामथी ओळखवामा आवे छे, तेना ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अने अतराय एम एकदर चार प्रकार छे। ते चारे प्रकारना कर्मनु अभावपणु थवाना यथार्थ क्रमनी शरुआत नियमा सम्यग्दर्शनथी ज थाय छे, अने तेथी सम्यग्दर्शन एज तेना अभावनु एक अनिवार्य कारण छे। तथारुप सम्यग्दर्शन उपलब्ध थये क्रमे क्रमे ते सम्यक् त्रयरुप एवी अतर्मुख साधनाना बळे जेम जेम एवो ते सम्यग्दृष्टी जीव पोते पोतानी स्वभाव एकत्वरुप स्थिरताने अवलबतो जाय छे, तेम तेम त्या निर्मल पर्यायरुप एवा ते शुद्धोपयोगनु के तथारुप एवा ते भाव-सवरनु निमित्त

थमीनें त्या घातिचतुष्टयरुप एवा ते पुद्गल कर्मनुं तेना पोताना कारणे द्रव्य-स्वरुपे परिणमतुं थई तेनुं क्रमे क्रमे परिक्षीणपणुं थतुं जाय छे, अने तथारुप क्रमथी क्रमे करी तेनुं सर्व प्रकारे अभावपणुं पण थई जाय छे।

प्रश्न—उपरोक्त कर्मनुं अभावपणुं तेना पोताना कारणे ज जो थतुं होय तो जीवना शरुआत थयेली के थती एवी अप्रतिहत भावरुप क्षपकश्रेणीनुं प्रभावपणुं दर्शावी तेने प्रशंसवानो शुं हेतु छे?

उत्तर—ते प्रशंसवानो हेतु कर्मनुं अभावपणुं थवानी अपेक्षाए नथी, पण उपशमश्रेणीनी अपेक्षाए छे, अर्थात् पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था-भेदे स्वरुप-ध्याननी अंतर्मुहूर्तश्रेणीना मुख्यत्वे करी ने प्रकार थाय छे, एक उपशमरुप, अने बीजी क्षपकरुप। आ बने प्रकारनी श्रेणीमां शुं न्यूनाधिकपणुं रहेलुं छे, अने ते बनेमाथी एकने मुख्य करी तेने प्रशंसवानो शुं हेतु छे, तेनुं यथार्थ [illegible] अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे—

१—उपशमश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ प्रतिहत भावरुप होवाथी त्यां ध्याननी श्रेणी [illegible] पहेला जेवा ज अटकी स्वकार्य सिद्धीना घातरुप बने छे, त्यारे क्षपकश्रेणीमां [illegible] पुरुषार्थ अप्रतिहत-भावरुप होवाथी त्यां ध्याननी श्रेणी शुक्ल-ध्यानना बीजा [illegible] पहोंची स्व-कार्य सिद्धीनी निश्चयताने पामे छे।

२—उपशमश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ प्रतिहत भावरुप होवाथी ते आठमाथी [illegible] चार गुणस्थानने स्पर्शी त्यांथी नियमा तेना अंतिम-समये ते ध्यानथी [illegible] जाय छे, त्यारे क्षपकश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ अप्रतिहत भावरुप होवाथी [illegible] मोह विना, आठमाथी बारमा पर्यंत एम चार गुणस्थानने स्पर्शी [illegible] श्रेणीना फळे ते त्रयोदश गुणस्थानने अर्थात् पुर्णस्वरुप वितरागपदने [illegible]।

३—उपशमश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ प्रतिहत भावरुप होवाथी त्यां [illegible] (२१) [illegible] नियमा उपशमरुपे ज परिणमे छे, त्यारे क्षपकश्रेणीमां साधकनो [illegible] होवाथी तथारुप (२१) प्रकृतिओ ते नियमा क्षयरुप थईने तेनुं [illegible]

४—उपशमश्रेणीमां साधकनो पुरुषार्थ प्रतिहत-भावरुप होवाथी [illegible] सम्यक्त्वनी खास अपेक्षा रहेती नथी, त्यारे क्षपकश्रेणीमां [illegible] होवाथी तथारुप श्रेणी आरुढ थतां त्यां क्षायिकसम्यक्त्वनी [illegible] छे, [illegible] विना तथारुप श्रेणीनो प्रारंभ थई शकतो नथी।

आ प्रमाणे पुरुषार्थनी तारतम्यरुप अवस्था-भेदे उपरोक्त बने श्रेणीमां लक्षणभेदे तफावतपणु रहेलु छे, अने तेथी तेमानी एक एवी जे क्षपकश्रेणी तेज मात्र स्वरुप-पुर्णताना हेतुरुप होवाथी तथा प्रकारनी अतर्मुख-साधनामा तेज मात्र एक सर्व प्रकारे उपादेयरुप छे, अने तेथी तेनु प्रशंसनीयपणु रहे छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

केवळ निज स्वभावनुं, अहि अखड वर्ते ज्ञान।
ते साथे त्रैलोक्य पदार्थनु, ज्ञान त्रीकाळवर्ती जाण॥
ते सर्वनी युगपत जाणे ते, क्रमबद्ध अवस्था प्रत्यक्ष ए।
एवा ऐश्वर्य-पदे ते स्थित, सर्वज्ञपद ते जाण खचीत॥ ४॥

अन्वयार्थ—अहिं ते स्वरुप-पुर्ण भगवतने केवळ निज-स्वभावनु कहेता पोताने पोताना शुद्धात्म स्वरुपनु ज्ञान अखडपणे वर्ततु होय छे, अने ते साथे त्रणे लोकना पदार्थनुं ज्ञान तेमने त्रीकाळवर्ती होय छे, एम तु जाण, अने तेथी ते सर्व पदार्थोनी क्रमबद्ध—अवस्थाने युगपत् कहेतां एक साथे पोताना ज्ञानथी प्रत्यक्ष जाणे छे। आवा परम ऐश्वर्यपदे स्थित एवा ते भगवंतना पदने सर्वज्ञपदना नामथी संबोधवामा आवे छे, एम हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी खचीत करीने जाण।

विशेषार्थ—जे कोई स्वरुप-साधक जीव पोते पोतानी स्वभाव एकत्वरुप स्थिरताना निकम क्रमने अवलबीत थई अने ते द्वारा पोते पोताना सपुर्ण वितराग स्वभावे परिणमी अखड एवी स्वभाव स्थिरताने पामे छे, तेने ज केवळ निज स्वभावनु एटले पोताने पोताना शुद्धात्म स्वरुपनु ज्ञान अखड-पणे वर्ततु होय छे, अने तेथी ते ज्ञानना धारक एवा ते स्वरुपपुर्ण भगवतने पोतानो स्व-पर ज्ञायक स्वभाव सपुर्णपणे प्रगटेलो होवाथी त्या तथारुप एवा ते पोताना ज्ञानस्वभावना विषे एटले स्व पर-प्रकाशक रुप एवी पोताना ज्ञाननी एक समयनी पर्यायमा त्रणे-लोकना पदार्थनु ज्ञान त्रीकाळवर्तीपणे सहज स्वभावे वर्ततु होय छे, अने तेथी ते भगवत प्रत्येक प्रत्येक वस्तुनी पोतपोताना स्वतत्र स्वभावने अवलबीने थती, थयेली के थवा योग्य एवी त्रणे-काळनी तेनी सर्व क्रमबद्ध-अवस्थाओने के तेनी अनादि-अनत पर्यायोने युगपत् कहेता एक साथे तथारुप एवा ते पोताना ज्ञान सामर्थ्यथी प्रत्यक्ष जाणे छे, अने तेथी परम ऐश्वर्य पदे स्थित रहेता पुर्ण एवा पोताना आत्मज्ञपदथी अलकृत थयेला एवा ते भगवतना पदने पुर्ण एवा सर्वज्ञपदना नामथी ओळखवामा आवे छे।

आ उपरथी समजाशे के जेने पुर्ण एवु पोतानु आत्मज्ञपणु प्रगट्यु होय, तेने तेना अविनाभावी सम्बन्धरूपे पुर्ण एवु सर्वज्ञपणुं वर्ततु होय, अने जेने पुर्ण एवु सर्वज्ञपणु वर्ततु होय तेने ज तेना अविना-भावी सम्बन्धरूपे पुर्ण एवु पोतानु आत्मज्ञपणु प्रगट्यु होय । मतलब के पुर्ण आत्मज्ञपणुं अने पुर्ण सर्वज्ञ-पणु ए बन्नेनी अस्ति के नास्ति साथे ज होय छे, अने एज ते उभयनु परस्पर अविनाभावी सबंध होवानु सिद्ध करे छे, अने तेथी सपुर्ण जे स्वने जाणे छे, ते सपुर्ण परने पण जाणे छे, अने सपुर्ण जे परने जाणे छे, ते सपुर्ण स्वने पण जाणे छे, अने ते उपरथी ए पण सिद्ध थई शकवा योग्य छे के संपुर्ण जे स्वने नथी जाणतो, ते संपुर्ण परने पण नथी जाणतो, अने सपुर्ण जे परने नथी जाणतो, ते संपुर्ण स्वने पण नथी जाणतो । मतलब के सपुर्ण स्वना ज्ञानपुर्वक, सपुर्ण परनु ज्ञान होवु वा सपुर्ण परना ज्ञानपुर्वक सपुर्ण स्वनु ज्ञान होवु एज वस्तुनो परमार्थ छे, अने त्यांज पुर्णात्मक पदनी सिद्धी छे ।

प्रश्न—सर्वज्ञ भगवान पोतानी सर्वज्ञशक्तिना बळे स्व पुर्वक परने एटले त्रैलोक्यना विषे रहेला सर्व पदार्थोने के ते पदार्थोनी सर्व वर्तमान अवस्थाओने ते एक साथे प्रत्यक्ष जाणी शके, पण ते सर्व पदार्थोने भूतभविष्यवर्तीपणे एटले तेनी भुत, भावी, सर्व क्रमबद्ध-अवस्थाओने वर्तमान ते नास्तिरूपे होवा छता, तेने प्रत्यक्ष कई रीते जाणी शके ?

उत्तर—जे सर्वज्ञ भगवान पोतानी सर्वज्ञशक्तिना बळे त्रैलोक्यना विषे रहेला एवा सर्व पदार्थो ने के ते पदार्थोनी सर्व वर्तमान अवस्थाओने एक साथे प्रत्यक्ष जाणी शके छे, ते सर्वज्ञ भगवान ते पदार्थोनी भुत, भावी, सर्व क्रमबद्ध-अवस्थाओने एटले पुर्वे तेनु जे जे अवस्थारूपे परिणमवु थयु हतु ते ते अवस्थारूपे, अने भावी तेनुं जे जे अवस्थारूपे परिणमवापणु थवा योग्य होय ते ते अवस्थारूपे, एम वस्तु-मात्रनी थयेली, थती, के थवा योग्य एवी त्रणे काळनी क्रमबद्ध-अवस्थाओने के [illegible] अनत पर्यायोने वर्तमानकाळे एक साथे प्रत्यक्ष जाणी शके छे । हवे ते कई रीत बनी शके छे, तेनो स्पष्टार्थ योजनु कथन नीचे प्रमाणे छे ।

पदार्थ, वस्तु वा द्रव्य ए एकार्थी वचनो छे । ते अनादि अनत पर्यायोना पिण्ड छे, अने पिंडरूप होवाथी भुत, भावी, थयेली के थवा योग्य एवी तेनी सर्व क्रमबद्ध पर्यायो वर्तमानमा ते अप्रगटरूप होवा छता पण तेनो समावेश तेमा ज अर्थात् अनादि अनंत पर्यायना पिण्ड [illegible] ते एक द्रव्यमा ज थई जाय छे । आम वस्तु स्थिति होवाथी अने द्रव्यार्थीकनये [illegible] तेम ज एटले भुत, भावी एवी ते सर्व पर्यायो त्रीकाळ एवा ते द्रव्यमा ज अस्तित्वे [illegible] ते सर्वज्ञस्वभावमा, प्रमेयत्व स्वभाव छे जेनो एवा द्रव्य, गुण, पर्यायस्वरूपे [illegible] थई शकवा योग्य छे, अर्थात् एक साथे प्रत्यक्ष ते जणाय छे ।

आ उपरथी समजाशे के आत्माना विषे रहेलो एवो जे ज्ञानगुण तेनो जेम वस्तुमात्रने जा
वानो स्वभाव छे, तेम वस्तु-मात्रना विषे रहेलो एवो जे प्रमेयत्वगुण तेनो कोईना ज्ञानमा जणाव
स्वभाव छे, अने तेथी वस्तुमात्र कोईना ज्ञाननो जाणवारुप विषय थई शके ए सहज अने स्वभावि
अने तेम होवाथी संपुर्ण विकसीत थयेलो छे ज्ञायकस्वभाव जेनो एवा सर्वज्ञस्वभावमा न जणा
काई पण रहेतु ज नथी। मतलब के सर्व द्रव्यो, सर्व द्रव्यना गुणो, अने सर्व द्रव्यनी भुत, वर्तमान,
भावी पर्यायो के तेनी त्रीकाळवर्ती क्रमबद्ध-अवस्थाओ ते प्रमेयत्व-स्वभावरुप होवाथी संपुर्ण ज्ञानी
ज्ञानमा अर्थात् एवा ते सर्वज्ञ-स्वभावमां संपुर्णपणे ते जणाय छे, अने एज जीवना सर्वज्ञ स्वभा
प्रशंशवा योग्य एवु आ अचिंत्य महात्म्य छे ।

आ उपरथी स्पष्टार्थ बोध एज ग्रहण करवा योग्य छे के वस्तुमात्रनी अनादि-अनंत एवी क्र
बद्ध-अवस्थाओ जेम थाय छे, तेम सर्वज्ञ भगवानना ज्ञानमा ते जणाय छे, अने जेम ते जणाय
तेम तेनी क्रमबद्ध-अवस्थाओ थाय छे । मतलब के त्रणे-काळना जेटला समयो, तेटली ज वस्
पर्यायो, अने जेटली वस्तुनी पर्यायो, तेटला ज त्रणे काळना समयो । आम वस्तुस्थिति हो
वस्तुमात्रनी अनादि-अनंत एवी सर्व पर्यायो क्रमबद्ध ज थाय छे, तेमानी कोई पण समयनी प
आडी अवळी के आगळ पाछळ थती नथी । आवो वस्तुस्वभावना विषे रहेलो त्रीकाळ एकरुप
जे नियम अने ते नियमानुसार वस्तुमात्रनु क्रमबद्ध-अवस्थाना चालु प्रवाहरुपे थतु परिणमन के
परिणमनने रोकवा, के तेने फेरबदल करवा, अन्य तो शुं, पण स्वय एवी ते वस्तु पण कोई
प्रकारे समर्थ नथी, अने एज उत्पाद, व्यय ध्रुवस्वरुप एवा ते वस्तुस्वभावना गुप्त चमत्कारनी त
मिमासा करतां, संपुर्ण स्व-पर ज्ञायक-स्वभाव प्रगटयो छे जेनो, एवा वर्तमान विहरमान सर्वज्ञ भगवा
अने संपुर्ण स्व पर-ज्ञायक-स्वभाव प्रगटवा योग्य शक्ति छे जेनी, एवा पोताना सर्वज्ञ-स्वभावनी वि
एनी सम्यक्रुप प्रतिती दृढत्वने पामे छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे ।
अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे ।

अनंत चतुष्टयथी प्रभु, अरिहंत पदे थई स्थित ।
दिव्यध्वनि उपदेशथी, वस्तुधर्मने बोधे नित्य ॥
परम यथाख्यात क्रमे आंय, चारित्र प्रगटे स्वरुप मांय ।
स्पर्शी त्यां अयोगी गुणस्थान, सिद्धत्वने पामे भगवान ॥५॥

अहिं भव्य जीवोने दिव्यध्वनि उपदेशथी नित्य वस्तुधर्मनो बोध करे छे, एटले वस्तुनु यथार्थ स्वरुप समजावे छे। क्रमे करी अहिं स्वरुप अवस्थाना विषे परम यथाख्यात एवुं अंतिम चारित्र प्रगटरुप थता त्या अयोगी एवा चतुर्दश-गुणस्थानने अंतिम समये स्पर्शी ते अरिहंत भगवान सिद्धत्वने पामे छे, एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे कोई स्वरुप-साधक-जीव पोते पोताना सपुर्ण वितराग-स्वभावे परिणमी पुर्ण एवा सर्वज्ञपदने पामे छे, ते भगवतने अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनतसुख, अने अनतविर्य एवा अनत-चतुष्टयनुं प्रगटपणु नियमा होय छे, अने तेथी अनत चतुष्टयथी अलकृत एवा ते भगवतने अरिहत एटले अनंत चतुष्टयनी व्यक्तताना रोधरूप प्रधान एवा रागादि-मोहशत्रुरूप शत्रुओनो विजय कर्यो छे जेणे, एवा परम रहस्यार्थयुत नामथी ओळखवामा आवे छे। ते अरिहत भगवतना तिर्थंकर नामकर्मना उदयनी तारतम्यानुसार तेमना मुख्यत्वे करी त्रण अने ते सिवायना सामान्यपणे चार एम एकदर सात प्रकार छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे।

तिर्थंकरना त्रण प्रकार

पंचकल्याणक सहीत—पुर्व भवे एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवना शुभ विकल्पनुं निमित पामीने पुद्गल-कर्मना विषे बध परिणामी थयेल एवा गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान अने निर्वाण ए पंचकल्याणरुप तिर्थंकर प्रकृतिनु वर्तमान भवे उदयरुपे थवुं ते।

त्रण कल्याणक सहीत—वर्तमान भवे ग्रहवासमा एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवना शुभ विकल्पनु निमित पामीने पुद्गलकर्मना विषे बध परिणामी थयेल एवा तप, ज्ञान, अने निर्वाण ए त्रण कल्याणकरुप तिर्थंकर प्रकृतिनु वर्तमान भवे उदयरुपे थवुं ते।

बे कल्याणक सहीत—वर्तमान भवे मुनी अवस्थामा एवा ते सम्यक्दृष्टी जीवना शुभ विकल्पनु निमित पामीने पुद्गल-कर्मना विषे बध परिणामी थयेल एवा ज्ञान अने निर्वाण ए बे कल्याणकरुप तिर्थंकर प्रकृतिनु वर्तमान भवे उदयरुपे थवुं ते।

उपरोक्त त्रण प्रकारना तिर्थंकरोमा प्रथमना पचकल्याणक तिर्थंकरो मुख्यत्वे करी भरत, ऐरावत अने महाविदेह एवा त्रण क्षेत्रोना विषे उत्पन्न थाय छे, अने बीजा अने त्रीजा प्रकारना ते बे त्रण कल्याणक तिर्थंकरो तेमनु उत्पत्तिस्थान नियमा महाविदेह-क्षेत्र ज होय छे। आ रीते तिर्थंकर-नामकर्मना उदयनी तारतम्यानुसार अरिहत भगवतना त्रण प्रकारनु निरूपण करवामां आव्युं। हवे ते सिवायना तेमना चार प्रकारनु निरुपण करवामा आवे छे।

केवलीना चार प्रकार

सातिशय केवली—जे अरिहंत भगवंतने गधकुटी विगेरे अतिशयो मुख्यपणे वर्तता होय ते।

सामान्य केवली—जे अरिहंत भगवंतने गधकुटी विगेरे अतिशयोनु खास विशेषपणु न होय ते।

अतकृत केवली—जे अरिहंत भगवंत केवळज्ञान उत्पन्न थवानी साथे ज एटले लघु अतर्मुहुर्त-काळमा निर्वाणपदने पामे ते।

उपसर्ग केवली—जे अरिहंत भगवंत उपसर्ग अवस्थामां केवळज्ञान उत्पन्न थवानी साथे ज निर्वाण-पदने पामे ते।

आ प्रमाणे सातें प्रकारना अरिहंत भगवत ज्ञानादि-गुणथी समान होवा छतां उदयनी तारतम्यानुसार तेमना पृथक् पृथक् भेद पडे छे, ते साते प्रकारना पृथक भेदमा आदिना त्रण भेदरूप एवा जे अरिहंत भगवत तेमने तिर्थंकर-नामकर्मनो उदय मुख्यरूप होवाथी तेओ भव्य जीवोने दिव्यध्वनि उपदेशथी वस्तुधर्मनो बोध करे छे, ते दिव्यध्वनि उपदेशमा ॐकारनु मुख्यपणु होवाथी तेने ॐकार-ध्वनिना नामथी पण संबोधवामा आवे छे, ते ॐकारध्वनिरूप वाणी एकाक्षरी वा निरक्षरी होय छे, अने ते आत्माना सर्व प्रदेशोथी स्फुरायमान थाय छे। ते वाणीना प्रत्येक समयना स्फुरणमा संपूर्ण ज्ञानमुख्य कथन होय छे। श्रोताजनो ते वाणीने पोताना उपादाननी योग्यतानुसार झीले छे, ते साथे जे प्रकारना बोध-श्रवणनो श्रोताजनो त्यां भाव करे ते प्रकारनो बोध ते वाणी द्वारा तेमने संपूर्ण समाधानोपूर्वक संप्राप्त थाय छे, अने ते सौ कोई पोतपोतानी भाषामा समजी पण शके छे, अने ते अपेक्षाए ते वाणीने साक्षरी दिव्यध्वनिना नामथी पण ओळखवामा आवे छे।

आ प्रमाणे अरिहंत भगवंत आयुष्यनी यावत् स्थिति-पर्यंत भव्य जीवोने दिव्यध्वनि उपदेशथी नित्य वस्तुधर्मनो बोध करे छे। तथा प्रकारनो तिर्थंकर-नामकर्मनो उदय क्रमे करी निवृत थवा, ते भगवंतनो आत्मा संपुर्ण शुद्ध एवु परम यथाख्यात-चारित्र अयोगी गुणस्थानकना अंतिम-समये संप्राप्त करे छे अने ते साथे अघातिचतुष्टयनु पण त्यां तेना पोताना कारणे सर्व प्रकारे अभावपणु थई जाय छे, एटले तेज समये अरिहंत भगवंत देहादिथी संपुर्णपणे मुक्त थई सिद्धत्वने कहेतां शाश्वत एवा निर्वाणपदने पामे छे।

समालोचना

आत्मानी कर्मना संबधथी आत्यंतिक निवृति थई पोताने पोतानी संपुर्ण शुद्धावस्था प्राप्त थवी तेनु नाम मुक्तावस्था छे, तेवी परम अवस्था अयोगी गुणस्थानकना अंतिम-समये प्रगट थता आत्मानी उर्ध्वगति

पूर्वप्रयोगथी—कोई पण लक्षविंदुनी सन्मुखतापूर्वक करेली एवी बाण छोडवारूप क्रियात्मक प्रवृत्तिनी पश्चात् ते छोडवारूप प्रेरीत क्रियानो अभाव थवा छता पण ते सहज पुर्वोक्त क्रियाना बळे तेन लक्षविंदुनी सन्मुखता तरफ वेगथी गती करतु जणाय छे, तेम मोक्षपदनी सिद्धीना मुळ हेतु रुप ध्येयनी-सन्मुखतापूर्वक करेली एवी जे ज्ञानादि सम्यक्त्रयनी शुद्ध स्वभाव सेवनारूप क्रिया, ते पुर्णतारूप सिद्धीनी पश्चात् एटले अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये आत्मानी सहज पोताना तज पदनी सन्मुखता तरफ उर्ध्वगति थवी ते।

बंधनछेदथी—मृतिकाना लेपथी बंधनग्रस्त थयेल एवी जे तुंबडी, तेनुं जळ द्वारा थयेल शुद्धीना योगे, तयारप बंधन छुटवाथी ते सहज पाणीना अग्रभाग पर तरी आवे छे, तेम पर्याय तरफना विमुख लक्षे कर्मना संगथी बंधनग्रस्त थयेल एवो जे आत्मा तेनी ज्ञानादि-सम्यक्त्रयरूप एवी शुद्ध स्वभाव सेवना द्वारा थयेल पुर्ण शुद्धीना योगे अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये समस्त कर्मजन्य वर्गणाओनु बंधनछेदपणुं थतां तेनी सहज मोक्षपदनी सन्मुखता तरफ उर्ध्वगती थवी ते।

असंगपणाथी—मृतिकाना लेपरुप संगथी बंधनग्रस्त थयेल एवी जे तुंबडी तेनु बंधनछेदपणु थवारूप एवु असंगपणु प्राप्त थता, ते असंगपणाना बळथी सहज पाणीना अग्रभाग पर तरी आवे छे, तेम कर्मरुप संगथी बंधनग्रस्त थयेल एवो जे आत्मा तेनु अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये आत्यंतिक बंधनछेदपणुं थवारूप एवुं संपूर्ण असंगपणुं प्राप्त थतां, ते असंगपणाना बळथी तेनी सहज मोक्षपदनी सन्मुखता तरफ उर्ध्वगति थवी ते।

उर्ध्वगमनस्वभावथी—प्रत्येक पदार्थनुं पोताना स्वभाविक गुणधर्मने अवलंबीने अनुसरणु थाय छे, जेम के पाषाण, काष्ट, लोढंडादि पदार्थोनुं निचे पडवापणुं, अग्निनुं उपर चढवापणु, पवननु तिर्छागमन करवापणुं, तेम आत्मानुं उर्ध्वगमन स्वभावपणु होवाथी अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये तेनी सहज मोक्षपदनी सन्मुखता तरफ उर्ध्वगती थवी ते।

आ प्रमाणे चार हेतु कारणने अवलंबीने अयोगी गुणस्थानकना अंतिम समये शुद्ध चैतन्यघन एवो जे आत्मा ते ऊर्ध्वगमन करी लोकाग्रभागे सिद्धालयना विषे, सिद्ध परमात्मापदे—उपादाननी अपेक्षाए गतिनी योग्यता त्यां सुधीनी होवाथी अने निमितनी अपेक्षाए गति सहायक एवा धर्मद्रव्यनी त्यां समाप्ती थती होवाथी—स्थिर थई परम अलौकिक एवा सहज सुखमय शांत सुधारसना आस्वादने अनुभवे छे, ते सिद्ध परमात्मानु अनंत गुणोत्कृष्टपणुं छे ते पैकी अहिं तेमना संक्षेपात्मक गुणविशेषनु प्रधानपणुं करी निरुपण करवामा आवे छे।

अष्टकर्म रहीत—ज्ञानावरणादि अष्टकर्मोनुं सर्वथा अभावपणु होवुं ते।

सुखने वेदे छे, तेम मुक्तावस्थाना विषे अतिंद्रिय-सुख एटले निज स्वभावथी उत्पन्न थयेल एवा शात रसामृतनो अनुभव करे छे। मतलब के ससार अवस्थाना विषे रहेलुं पराधीन अने अस्थिर एवु जे कल्पनात्मक सुख, तेनु मुक्तावस्थामां अभावपणु होवाथी ते अपेक्षाए त्या तथा प्रकारना सुख-रहीत, अने स्वाधीन, अने स्थिर एवु जे सत्-स्वरुपात्मक-सुख तेनु त्या सद्भावपणुं होवाथी ते अपेक्षाए त्या तथा प्रकारना सुखसहीत एम मुक्तात्मानु स्वरुप कहेवु के समजवु ते योग्य छे, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने परम शात एटले स्वरुपथी उत्पन्न थता एवा सहज सुखमय शात सुधामृतना आस्वादने अनुभवनारा एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुण-विशेषना पंचम भेदमा प्रतिपादन करवामा आव्युं छे।

ईशान मतावलवी—मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनु स्वरुप कृतकृत्य न होवानु स्वीकारे छे, अर्थात् तेने पण कांई क्रियात्मक कर्म करवानु रहेलुं छे, एम माने छे, ते मान्यतानुसार एवा अभवादी पण ईश्वरना स्वरुपने सृष्टीकर्ता होवानु आरोपण करे छे, परतु ईश्वरनुं स्वरुप तेवु नथी, कारण के ईश्वर-पदनो धारक एवो जे शुद्धात्मा, तेनु वास्तविक स्वरुप शरिर, इच्छा, अने क्रियारुप उपाधिथी सर्व प्रकारे रहीत एवु निष्क्रीय छे, अने निष्क्रीय होवाथी तेना पर सृष्टीकर्तानु आरोपण करवु ते स्वभावीक ज असिद्धरुप ठरे छे, अने सृष्टीनु स्वरुप अनादि-अनंत होवाथी तेनुं कर्तापणुं मानवुं ते पण एक बुद्धीनुं विपर्यासपणुं ठरे छे। मतलब के ईश्वरनुं स्वरुप शुद्ध स्वभाव-परिणामी होवाथी ते पर उपाधियी रहीत एवु सदा तेमनु निष्क्रीयपणुं छे, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने कृतकृत्य एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुण विशेषना छठ्ठा भेदमां प्रतिपादन करवामां आव्यु छे।

मडली मतावलवी—मुक्तावस्थाने पामेल एवा ईश्वरनुं स्वरुप सदा उर्ध्वगमन करतु होवानु स्वीकारे छे, अर्थात् ते कोई पण स्थाने स्थिर निवासने पामता नथी, एम माने छे, परन्तु तेम नथी, कारण के अयोगी गुणस्थानकना अतिम समये मुक्तावस्थाने पामेल एवो जे शुद्धात्मा ते उर्ध्वगमन करी मात्र एक ज समयमा लोकाग्रभागे स्थिर निवासने पामे छे, अने तेथी मुक्तस्वरुप एवा ईश्वरने के सिद्ध परमात्माने लोकाग्र-निवासी एटले लोकना अग्र भागे स्थिर निवासने पामेला एवुं विशेषण उपरोक्त सप्तात्मक गुण-विशेषना सप्तम भेदमा प्रतिपादन करवामा आव्यु छे।

आ प्रमाणे सिद्ध परमात्मानुं स्वरुप छे, ते अनुसार तेनी समालोचना करी जे जीव तेनो पोताना ज्ञानथी वास्तविक निर्णय करशे, ते दर्शन-विशुद्धीपूर्वक उपयोगनी अतरंग सन्मुखताने पामशे, अने ते द्वारा मतार्थ-भावनी निवृत्ति पण थशे।

उपसंहार

卐

अहिं सुधी क्रमे कही, तने बोध अवस्था आठ।
ते विचारतां अतर विषे, तेनो समजाशे परमार्थ ॥
हवे साधक श्रमणनो नाम, भिन्न करी तेना परिणाम।
लक्षण-भेदे बोधुं कांय, सुण तें सन्मुख थईने आंय ॥ १ ॥

अन्वयार्थ—अहिं सुधी अनुक्रमे तने आठ एवी बोध अवस्था कही ते अतरना विषे विचारता तेनो सर्व परमार्थ तने समजाशे। हवे तने तेना साधक श्रमणना नाम तेना भिन्नस्वरुप परिणामनी लक्षणभेदे पृथक्ता करी कांईक बोधुं छु, ते अहिं सन्मुख थईने हे शीष्य तु आ जिन-प्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आ ग्रन्थना प्रारंभमा सत्यार्थ बोधना सन्मुख थयेलो परम एवो जे आत्मार्थी जीव ते पोतानी प्राथमीक एवी ते बोध-अवस्थाना विषे सत्यार्थरुप एवी पोतानी आत्मार्थ जिज्ञासा उत्पन्न करी अने ते जिज्ञासापूर्वक पोताना उपादान कारणने तेना अनुरुप निमितरुप एवा सद्गुरु सन्मुख प्रेरी, अने क्रमे क्रमे त्या तथारुप एवा ते आत्मार्थ बोधनी अतर्मुख विचारणाना बळे सम्यक्ज्ञान-दर्शनादिनी प्राप्ती पचम एवी बोध-अवस्थाना विषे करी, अने क्रमे करी तेनु स्वभाव एकत्वरुप स्थिरता-पणु, अने ते अर्थे बाह्यातर परम एवी निग्रथ-दशानु उपासनापणुं, एम सम्यक् प्रकारे आदरी, अने ते द्वारा अतिम परम एवी अष्टम बोध-अवस्थाना विषे पोते पोताना संपुर्ण वितराग स्वभावे परिणमी, अने त्या सर्व प्रकारे शुद्ध बुद्ध थई शास्वत एवा निर्वाण पदने पामे छे। तेनो जे कोई आत्मार्थी जीव अ आठे अवस्थाना क्रमानुसार बोधनी समालोचनापुर्वक विचार करशे, तेने पोताना स्वरुप-विकासना क्रमनो, अने ते अनुसार तेना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थनो सहज एवो सम्यक् ख्याल आवशे, एम गुरुजी अहिं सुपात्र साधकने उद्देशीने कहे छे, अने ते साथे अहिं साधक श्रमणना भिन्नत्वरुप परिणामनी लक्षणभेदे पृथक्ता करी ते संबंधी शीष्यने पुनः गुरुजी नुतन उपदेश करे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

८—मिथ्यात्व साथे मताग्रहाभिनीवेशनु अविनाभावपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत विनयिक मिथ्यात्वनु अने मतार्थ दृष्टीपुर्वक थता एवा बुद्धीपुर्वक रागादिभावनुं एवा ते दोषनुं विरमवुं थतुं नथी।

९—मिथ्यात्व साथे बंध योग्य एवी दर्शन सप्तकनी मुख्य एवी (१६-२५) ४१ प्रकृतिओनु अविनाभावपणु होवाथी तेनी हयाति पर्यंत पुण्यानुबंधी पुण्यना रोधरूप एवा ते दोषनु विरमवुं थतु नथी।

१०—मिथ्यात्व साथे शुद्धोपलब्धीरुप ज्ञानचेतनानुं के शुद्ध चैतन्यात्मक धर्मनु प्रतिपक्षीपणु होवाथी तेनी हयाति पर्यंत तद्रुप लब्धी गुण धर्मनुं प्रगटपणु थतु नथी।

११—मिथ्यात्व साथे विरती परिणामरुप एवा सुप्रत्याख्याननु प्रतिपक्षीपणु होवाथी तेनी हयाति पर्यंत चारित्रगुणनी तद्रुप निर्मल अवस्थानु प्रगटपणुं थतु नथी।

१२—मिथ्यात्व साथे सम्यक्त्वपुर्वक उपलब्ध थता एवा संवर निर्जरारुप भाव-मोक्षमार्गनु प्रतिपक्षीपणुं होवाथी तेनी हयाति पर्यंत तद्रुप निर्मल गुण-अवस्थानु प्रगटपणु थतुं नथी।

आ प्रमाणे मिथ्यात्व साथे तेना अविनाभावी संबंधरुप के प्रतिपक्षीरुप एवा दोषपोषक के निर्मल गुण-अवस्था रोधक मुख्यपणे द्वादश कारणो छे, तेनी तत्व-मिमांसा करता समजाशे के द्रव्यलींगी साधुने पंच-महाव्रतादिनो स्वीकार सर्व परिग्रहना अभावरुप एवी शरिरनी बाह्य नग्न दिगम्बर-अवस्थापुर्वक थता छता अने ते व्रतोनु (२८) मुळगुण सहीत कहेता पंचमहाव्रत, पंचसमिति, पंच इंद्रियनिरोध, षट आवश्यक, नग्नता, केशलोच, अस्नान, अदंतधोवन, भुमीशयन, स्थितिभोजन, अने एक वखत आहार ग्रहण एम तेनुं निरतिचार पालन करवा छतां, पण विष मिश्र भोजनना जेम तेनु सर्व साधन मिथ्यात्वना उदयपुर्वक एवुं एकान्त पर-लक्षे होवाथी तेने विपर्य के दोषरुप ज कहेवा योग्य छे। मतलब के मिथ्यात्वरुपी विषना मिश्रपणाना लीधे त्यां एके व्रत सत्यरुप अर्थात् दोष रहीत होतुं नथी।

प्रश्न—मिथ्यात्वनी अपेक्षाए तो तेनु सर्व व्रतादि साधन दोष युक्त छे, पण ते व्रतोनुं निरतिचार पालन करवानी अपेक्षाए तेने दोष रहीत कही शकाय के केम ?

उत्तर—न कही शकाय, तेम कहेवाना हेतुमां पण अहिं मिथ्यात्वनी ज अपेक्षा रहे छे, कारण के तेना उदयपुर्वक थता एवा ते व्रतादि साधनमां तेनुं अहं ममत्वरुप परिणमन स्वभावीक ज होय छे, जेम के हुं पर जीवोनी रक्षा करु छुं, सत्य वचन बोलु छुं, अचौर्यव्रतनु पालन करुं छु, सर्व प्रकारे ब्रह्मचारी छुं अने वस्त्रादि सहीत

परिणमन मात्र एक मिथ्यात्वना योगे एवा ते पंचव्रतादि साधनमा ते द्रव्यलींगी साधुनु अवश्य होय छे, अने तेथी तेनु निरतिचार पालन जोईए तेना हठाग्रह भावपुर्वक थता छता, के स्थुल-दृष्टीए तेम देखाता छता, पण तेमा उपरोक्त दोषनुं मुख्यपणु होवाथी तत्व-दृष्टीए तेने दोषसहीत के दोषरूप ज कहेवा योग्य छे, अने तेज हेतुथी तथा प्रकारना व्रत नियमादिने जिनागमना विषे दुःप्रत्याख्यानना नामथी संबोधवामा आवे छे।

आ उपरथी समजाशे के सर्व दोषना मुळ बीजभुत एवा मिथ्यात्वरूपी महादोषनु अभावपणु थया विना, तेना आश्रयभुत एवा अन्य एवे दोषनुं अभावपणु थई शकवा योग्य नथी, अने तेथी तथारूप मुळ बीजभुत दोषना सद्भावपुर्वक पचमहाव्रतादिनो थतो स्वीकार ते कोई पण प्रकारे आत्मार्थ हेतुभुत के स्वने उपकाररूप गणावा योग्य नथी, एम जिनागम-दृष्टीए समजवा योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

बीजा भावलींगी कह्या, ते सदा स्वरुपे सावधान।
सर्व शुभाशुभ भावनु, त्यां वर्ते भेदविज्ञान॥
तेथी सुर्य खजुआनी जेम, बनेमां रह्यो अंतर तेम।
ते विचार तु अहि अतर बाळ, लक्षण-भेदे लावी ख्याल॥३॥

अन्वयार्थ—बीजा जे भावलींगी कह्या ते सदा स्वरुपे सावधान होय छे, अने तेम होवाथी सर्व शुभाशुभ भावोनु भेदविज्ञान त्या स्वाभावीक ज वर्ततु होय छे, अने तेथी सुर्य अने खजुआनी (आगीओ ए नामनु जतु के जे तिमिरना विषे क्वचित् कृत्रिम प्रकाश करे छे ते) जेम बनेमा मोटो अतर रहेलो छे, तेनो हे बाळ तु लक्षण-भेदे ख्याल लावी अहिं तेने आ जिनप्रवचनरूप श्रवण थयेला बोधना अंतर-लक्षपुर्वक विचार।

विशेषार्थ—जिनागमना विषे प्रतिपादन करेला एवा बीजा प्रकारना भावलींगी श्रमणनी अहिं समालोचना करीए तो तेने भावलींगीपणे संबोधवानो हेतु मात्र तेना ज्ञानादि-सम्यक्स्वरूप स्व शुद्ध चैतन्यात्मक गुणविशेष परिणमनने लईने ज छे, अर्थात् जे कोई स्वरूप-साधक जीव सम्यक्ज्ञान-दर्शनादि एवी आत्मिक-गुण अवस्था विशेषनी उपलब्धीपुर्वक इन्द्रीयोने जीतीने तथा स्वरूपना गुणविशेष परिणमननी अतर्मुख स्थिरताना रूपे विचरे छे, ते श्रमणनुं ज्ञान ...

स्वभाव परिणामरुप एवु ज्ञान-मुख्य होवाथी तेने सम्यक्‌दृष्टी, अने ते सम्यक्‌दृष्टी श्रमणने भावलींगी ए नामथी संबोधवामां आवे छे।

आ उपरथी उपरोक्त बने श्रमणोनी समालोचना करीए तो स्पष्ट समजाशे के ते बनेमां सुर्य अने खजुआनी जेम एटले सुर्यनो प्रकाश स्वभावीक ज पोताना वास्तविक गुणधर्मने अवलबीत होवाथी ते अनुसार ते सर्वत्र व्यापेला तिमिरनो नाश करी उज्जवळ एवा प्रकाशने प्रगटावे छे, अने खजुओ क्हेता आगीआनो प्रकाश स्वभावीक ज पोताना अवास्तविक गुण धर्मने अवलबीत होवाथी ते अनुसार तेनो कृत्रिम प्रकाश अल्पांशे पण तिमिरनो नाश करवाने समर्थ थतो नथी, तेम उपरोक्त एवा ते बंने श्रमणोना विषे रहेलो एवो जे पुर्व-पश्चिम जेटलो अतर तेने ते अनुसार एटले वास्तविक गुण धर्मने अवलबीत एवा भावलींगी श्रमणने सम्यक्‌दृष्टीरुपे, अने अवास्तविक गुणधर्मने अवलंबीत एवा द्रव्य-लींगी श्रमणने मिथ्यादृष्टीरुपे एम लक्षणभेदे रहेली बनेनी पृथक्‌ताने पृथक्‌त्वरुपे वास्तविक एवी जिनागम-दृष्टीए अवधारवा योग्य छे।

उपरोक्त बोधनो सम्यक् अवधार थता आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाशे के मोक्षमार्गनी शरुआतमा के ते मार्गनी आदिथी अत पर्यंत एवी मुनीलींगनी, निर्ग्रंथ दशानी, के साधुजीवननी सर्व बाह्यातर साधनामां सर्व दोषना मुळ बीजभुत एवा मिथ्यात्वरुपी महादोषनु स्व-लक्षे सर्वथा अभावपणु होवुं ए प्रथमथी ज परम आवश्यकरुप छे, कारण के ते विना, ज्ञानादि सम्यक्‌त्रयरुप एवा मोक्षमार्गनी, के ते मार्गना हेतु-लक्षने अवलबीने थती एवी लींग परिवर्तनरूप बाह्यातर सर्व साधनात्मक क्रियानी, अल्पांशे पण सिद्धी थई शकवा योग्य नथी, एम आत्मार्थी जीवे आत्मार्थ सद्‌विवेकपुर्वक समजवा योग्य छे, अने ते समजपुर्वक तथारुप दोषनु अभावपणु करवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

ते उभयना भेदत्वने, जाणे आत्मार्थी जन जेह।
सम्यक्‌दृष्टी श्रमणने, सेवे, सद्‌गुरु मानीने तेह ॥
शीष्य कहे तेवा गुरुनां शु, यथार्थ लक्षण पुछु हु।
गुरुजी कहे सुण तु बोध, ते लक्षण स्पष्ट कहुं अविरोध ॥४॥

अन्वयार्थ—ते उभय श्रमणना भेदत्वने जे कोई आत्मार्थी जीव जाणे छे, एटले पोताना ज्ञानमा तेनो साचो निर्णय वर्ते छे, ते जीव सम्यक्‌दृष्टी श्रमणने सद्‌गुरु मानीने सेवे छे, एटले तेनी

आश्रयभक्तिमा योजाय छे। अहिं शीष्य प्रश्न करे छे के हे गुरुजी! तेना सद्गुरुना यथार्थ लक्षण शु? ते हुं आपने पुछुं छु। अहिं गुरुजी उत्तर आपता कहे छे के ते लक्षण पुर्वापर अविरोध एवा हु तने स्पष्ट करीने कहुं छुं, ते हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—लक्ष्य एवी वस्तुनी वास्तविक प्रतितीनो सर्व आधार वास्तविक एवा लक्षण पर ज अवलंबीत होवाथी जीवे पोतानी प्राथमिक भुमीकामा पोतानी लक्ष्यरुप वस्तु लक्षणनु एटले अहिं चालु विषयना अनुसंधानमा सम्यग्दर्शनथी विभुषित एवा भावयोगी सद्गुरुनी योग्य प्रतितीनु सम्यक् प्रकारे संशोधन करवाना सन्मुखवर्ती पुरुषार्थमा योजवु ते अने एज लक्ष्यरुप वस्तुनी वास्तविक प्रतितीनो सम्यक् उपाय छे। आवा प्रकारनो आन्तर्य उपरोक्त एवा सुसाधकने उपलब्धरुप होवा छता पोते पोतानी सर्वांग समाधानी अर्थे अलंकृत एवा सद्गुरुना यथार्थ लक्षण शु? एम प्रत्यक्ष एवा सद्गुरु मन्मुख पोते विनयपुर्वक उपस्थित करे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसन्धानमा आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

ज्यां प्रयोजनभुत पदार्थनुं, होय आत्म-परिणामी ज्ञान।
ते साथे आगयभेदथी, होय अविरोध वेण प्रमाण॥
समदर्शी वेण अपुर्व होय, दृष्टीमां स्व द्रव्यने जोय।
ज्ञाता भावे सदा जे स्थित, ते सद्गुरु लक्षण जाण सर्व॥

अन्वयार्थ—ज्या प्रयोजनभुत पदार्थनु ज्ञान स्वभाव परिणामरुप [illegible]
अने ते साथे जेनु वचन आशयभेदपुर्वक एटले पुर्वापर अविरोध एवु प्रमाणरुप [illegible]
पणुं अने वाणीनु अपुर्वपणु होय, ते साथे दृष्टीमा मात्र एक पोताना [illegible]
ज जे जोनारो होय, अने ते साथे पोताना ज्ञाता स्वभावे सदा जे स्थित होय [illegible] पणु
सद्गुरुना योग्य लक्षणो छे, एम हे शीष्य तुं आ [illegible] प्रकारनो
अंतरना विषे जाण।

[illegible] थी, एवो
[illegible] परमार्थने
[illegible]

विशेषार्थ—जे पदार्थना जाणवाथी [illegible]
वियोग, वा निवृति थाय, तेने प्रयोजनभुत पदार्थना [illegible]

पणे चार अनुयोगमा प्रधानरुप एवा द्रव्यानुयोगना विषे थाय छे। तथारुप पदार्थना वास्तविक बोध पुर्वक उत्पन्न थयेलुं एवुं जे ज्ञान, ते ज्या स्वभाव परिणामरुपे स्थिरताने पाम्यु होय, एटले तथारु तत्वार्थ-बोधना अवर्णुरा चिन्तनथी भेदाभेद दष्टीना सम्यग्ज्ञानपुर्वक पोतानी विर्यात्मक-रुचीनुं बल अभेदनी अंतरंग सन्मुखता तरफ ढळेलुं होय, अने ते साथे जेनु वचन आशयभेदपुर्वक एटले निश्च व्यवहारनी अतरग सधीना हेतु-लक्षने अवलंबी मुख्य गौण दष्टीए उपदेशनु प्रतिपादन थतु होय अने पुर्वापर ते अविरोध एटले जिनाशय श्रुतना अभिप्रायने अनुसरतुं एवुं प्रमाणरुप होय, अने साथे समदर्शीपणु एटले समस्त ज्ञेयजन्य पदार्थो प्रत्ये निस्पृह-भावरुप एवु शुद्ध वितरागपणु वर्त होय, अने ते साथे वेण अपुर्व एटले जे वचन पुर्वे क्दी पण श्रवण न कर्युं होय तेवु आतम-स्पर्शी, अपु आत्मार्थ गुणप्रेरक, अने शांत रसोत्पादक एटले वैराग उपशम भावने पोषण आपनारुं होय, अने साथे दष्टीमा स्व-द्रव्यने जोय एटले पोतानी दष्टीना विषे ज्ञानादि अनंत गुण पर्यायना एक पिंडरु एवो जे पोतानो त्रीकाळी शुद्ध चैतन्यघन मुळ वस्तुनो स्वभाव तेने ज पोताना स्वामित्वभावनी एकत्व बुद्धीपुर्वक जे जोनारो कहेता ते रुपे वर्तनारो होय, अने ते साथे ज्ञाता स्वभावे सदा जे स्थित एटले स्व-पर-प्रकाशकरुप एवुं जे पोतानु ज्ञान सामर्थ्य ते पोताना विषे उपलब्धरुप थनारो स्व पुर्वक पर अने परपुर्वक स्वने एम जाणवारुप स्वभावनी मुख्यतापुर्वक ज्ञाननु ज्ञानमा स्थिरतापणु वर्ततुं होय आवा परम लक्षणोथी जे पुरुष अलंकृत होय, ते निग्रथ-दशाना साधक पुरुषने खचीत करीने सद्गुरु ए नामथी संबोधवा योग्य छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेन अनुसधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

तेवा सुगुरुनी सेवना, करे आत्मार्थी जन जेह।
तो ते अनुकूल मधीथी, पामे सम्यक् बोधीने तेह॥
ते वण अन्य गुरुनो सग, स्वरुप घातक तेह प्रसंग।
अश्रेय पामे विशेष ते, दृढ करी मिथ्यात्व ए॥६॥

अन्वयार्थ—तेवा सद्गुरुनी सेवना जो कोई आत्मार्थी जीव करे तो ते सधी आत्मार्थ अनुकूलरुप होवाथी ते जीव सम्यक् बोधीने पामे, ते सिवाय कोई जीवने अन्य गुरु कहेतां कोई अज्ञानी गुरुनो सग थयो होय तो ते योगे अतत्व-श्रद्धानरुप एवा मिथ्यात्व अज्ञानादिने पोते विशेष दृढ करी विशेष प्रकारे अश्रेयने पामे छे, अने तेथी ते प्रसगने जीवना स्वरुप-घातकरुप कहेवा योग्य छे एम हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—जे जीवने सम्यग्दर्शन जेवी परम वस्तुनी प्राप्ती थई छे, अने थाय छे, तेमा श्रपे शाळना विषे तेना अनुकूल निमितरूप एवा प्रत्यक्ष सद्गुरुना योगनी ज अपेक्षा रहे छे, कारण क ते सिवाय अन्य स्थाने ते वस्तु होती ज नथी, अने तेथी प्रत्यक्ष सद्गुरुनु ते अर्थे अत्यंत आवश्यकपणु जिनागमना विषे ठाम ठाम प्रदर्शीत करवामा आव्यु छे, अने तेज हेतुने अहि पण मुख्य वगी उपरोक्त सुत्रमा तथाप्रकारनी अनुकूल सघीनु निरूपण करवामा आव्यु छे, तेना वास्तविक बोध परमार्थने जे कोई आत्मार्थी जीव आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक अनुसरे छे, ते जीव निमित उपादाननी अनुकूल संधीना सिद्धांतिक नियमने अवलंबीत थई एटले ते नियमानुसार प्रत्यक्ष एवा कोई सद्गुरुनो योग मेळवी निज उपादान शक्तिने तेमना तत्वबोध सन्मुख प्रेरे छे, अने क्रमे करी ते द्वारा ते शुद्ध सम्यग्दर्शनने पण पामे छे, ते सिवाय जे कोई जीव तत्त्व बोधनी के स्वआत्मार्थनी मुढता अने विमुखतापुर्वक कोई असद्गुरुना आश्रये तेने सद्गुरु मानी वर्ते छे, ते जीव तथारूप सर्व विमुख कुमगना योगे अतत्त्वश्रद्धानरूप एवा मिथ्यात्व अज्ञानादिने स्वमत मतार्थ भावपुर्वक विशेष दृढ करी ते द्वारा पोते विशेष अश्रेयने पामे छे, अने तेथी ते प्रमाणे ते जीवना स्वरूप भानरूप बोधथी [illegible] छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहि तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरूपण करवामा आवे छे।

सुगुरु अने कुगुरुमां, रह्यो अंतर एम अपार।
एक निर्मल चक्षुवंत ने, बीजो अंधपणे त्यां धार ॥
तेनो सुविवेक प्रगटे चित्त, तेने थाय सुगुरु प्रतित।
ते वण बोधी न पामे कोय, एवो आशय जिननो होय ॥[illegible]

अन्वयार्थ—आ प्रमाणे सद्गुरु अने असद्गुरुमां अपार एटलो [illegible] रहेलो छे, एकने ज्ञानरूपी निर्मल चक्षु वर्ते छे, अने बीजाने अज्ञानरूपी अंधत्व [illegible] जेना चित्तना विषे तेनो सद्विवेक प्रगटे छे, एटले सत्यासत्य एवा ते बन्ने [illegible] स्फुरायमान थाय छे, तेने ज सद्गुरुनी प्रतितीनो सम्यक् लक्ष आवे छे, ते [illegible] सद्विवेक प्रगटया विना, कोई जीव सम्यग्दर्शनरूपी परम लाभने पामी शकतो [illegible] श्री जिननो आशय कहेता अभिप्राय छे, एम हे शिष्य तु आ जिनवचनरूप बोधने [illegible] श्रवण कर।

विशेषार्थ—जिनागम दृष्टीए वस्तुना परमार्थने विचारिए तो जे पुरुषना अंतरात्म-भाव ना विषे वास्तविक एवा वस्तु-स्वभावना बोधनुं सम्यकरुप एवुं शुद्ध परिणमन थई ते द्वारा ज्ञानरुपी दिव्य-प्रकाश स्फुरायमान थयो छे, अने ते प्रकाशना बळे श्री जिनना अंतरमा रहेलो परमार्थ जे शुद्धात्म-स्वरुपना अनुभवपुर्वक जाणे छे, अने वेदे छे, तेज पुरुष तेनो मार्गदर्शक बनवा योग्य छे, के तेना मार्मीक रहस्यार्थने उपदेशवा योग्य छे, अने तेना उपदेशनु निमित पामीने तेवा तत्त्व जिज्ञासु जीवो तयारुप बोधने अंतर परिणामी करी सम्यग्दर्शनरुपी परम लाभने पण पामी शक्वा योग्य छे, ते सिवाय बाह्य-वेषादि सामग्रीना बळथी मात्र व्यवहार दृष्टीए जेमने श्री जिनना आशयनुं उपदेशकत्व प्राप्तरुप छे, ते पुरुषो देशेन्युन एवा दश पुर्वनु श्रुतज्ञान धरावता होय अने तथारुप बाह्य सामग्रीनुं निमित पामीन अनेक जीवो त्याग वैरागादिरुप एवा बाह्य शुभ साधनोनी सन्मुखताने पामता होय, तो पण तेमनो उपदेश एक पण जीवने परमार्थ सन्मुख करावी शकतो नथी, कारण के तयारुप परमार्थ मार्गनी जेणे दिशा ज जोई के जाणी नथी, अनुभवी के वेदी नथी, एवो ते सर्वथा चक्षु-अंध-पुरुष ते अन्यने जोवा जाणवाना के अनुभवरुपी दीपक प्रगटाववाना निमितभुत शी रीते थई शके ? अर्थात् न ज थई शके, एम सहज बुद्धीना सद्विवेकने अवलबतां समजाय तेवु छे। मतलब के तेवा असद्गुरुना तत्त्व-विमुख उपदेशथी के तेना छटादार भाषणथी आकर्षाई तेवा अनेक आत्मार्थ सद्विवेकथी शुन्य जीवो त्याग-वैरागादिरुप एवां बाह्य-साधनोनु अंगीकृतपणु करे ए बनवा योग्य छे, पण ते योगे एटले तेना उपदेशनुं निमित पामीने एक पण जीव बोध-बीजने एटले सम्यक्ज्ञान दर्शनादि एवा शुद्ध आत्म-धर्मने पामे ए त्रणे काळना विषे बनवा योग्य नथी, अने एज श्री जिननो अंतर-आशय कहेतां अभिप्राय छे।

प्रश्न—जो एम ज होय तो जिनागमना विषे द्रव्यलींगी साधुने सम्यक्त्वादि गुण-विशेष परिणमननुं अभावपणुं छता, तेना उपदेशथी अन्य जीवो तयारुप गुण-धर्मने पामे, एवा बोध विशेष निरुपणनो शुं हेतु हशे ?

उत्तर—आवा प्रकारनुं बोध-विशेष निरुपण एज प्रथम तो जिनागमना विषे बाधकरुप छे, अने ते बाधकरुप कथनने जिनागमनुं कथन मानवु ते पण एक बुद्धीनुं विपर्यासपणु ठरे छे। मतलब के ते कथन जिनागमनुं नथी, तेम छता आजे लगभग जैनावलबनी जीवो श्रवणोपश्रवण वात पर पोताना अज्ञानजन्य अभिप्रायने दृढ करी सौ कोई ते अनुसार एटले द्रव्यलींगी साधुथी जीव सम्यक्त्वादि आत्मधर्मने पामी शके छे, एवु मुख्यरुप कथन जिनागमना विषे होवानुं माने छे, अने तेनी

साधीरुपे कोई तेना जैन नामथी प्रसिद्ध एवा आगम विरोधी कथनने मुख्य करी ते द्वारा पोतानी विपर्यय मान्यतानी विशेष प्रकारे पुष्टी पण करे छे। मतलब के तेवा कथननो समावेश जिनागम ना विषे थई शकवा योग्य छे के केम ? अर्थात् तेने जिनागम कही शकाय के केम ? आवा प्रकारनो वास्तविक निर्णय जीवे पोतानी अनोप-दशाने वश थई कर्यो नथी, अने तेथी तेवा विरोधात्मक कथननी परपरा आज पर्यंत जिनागमना नामथी प्रसिद्ध थई रकेली प्रत्यक्ष जोवामा आवे छे।

प्रश्न—तथा प्रकारना विरोधात्मक कथनना परिहारनो वास्तविक एवी जिनागम दृष्टीए शु उपाय छे ?

उत्तर—सम्यग्दर्शननी उपलब्धी नियमा पच-लब्धीपुर्वक ज थाय छे, अने तेथी तेनु बोध-विशेष परिणमन वास्तविक एवी जिनागम-दृष्टीए थतु तेज तथा प्रकारना विरोधात्मक कथनना परिहारनो सम्यक् उपाय छे, एटले अहिं तथारुप लब्धे तथारुप बोध विशेषनु विशेष प्रकारे निरुपण करवामा आवे छे।

(पंच लब्धीनुं स्वरुप)

क्षायोपशमीक

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तेना निमितभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे तेना पोताना कारणे ज्ञानावरणादिरुप एवी सर्व घातिप्रकृतिओनुं उदयाभावी क्षयरुप थवु, उदय आववा योग्य एवी ते प्रकृतिओनुं उपशमरुपे परिणमवु अने ते साथे तथारुप कर्मोनो देशघाति प्रकृतिओनुं उदयरुपे रहेवु ते।

विशुद्धी

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तथारुप एवा ते निमितरुप कर्मनी तथा प्रकारनी क्षायोपशमीक अवस्था तेना पोताना कारणे थता नैमितिक एवा जीव भावना विषे तत्त्व-सन्मुख थवा योग्य एवु विशुद्धरुप परिणमन जीवना पोताना कारणे थवु ते।

देशना

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तथारुप विशुद्धीना बळे जीव भावना विषे तत्व-बोध श्रवण जिज्ञासा उत्पन्न थवी, अने ते अनुसार प्रत्यक्ष एवा कोई सम्यक्ज्ञानी पुरुषना योगे श्रवण थयेला बोधनो निर्णयात्मक अवधार स्थुल बोध परिणमनरुपे थवो ते।

प्रायोग्य

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार तथारुप देशना-लब्धीनो स्थुल बोध, परिणमनरुपे अवधार थता, तेना निमित्तभुत एवा पुद्गल कर्मना विषे ज्ञानावरणादिरुप एवी कर्म-प्रकृतिओनी सत्तानु मंदत्वरुप परिणमन थई तेनो स्थिति-बंधनुं प्रमाण अंत. क्रोडाक्रोडी अवशेष काळ-प्रमाण रही जनु ते।

करण

जीवना पुरुषार्थनी तारतम्यानुसार देशना लब्धीरुप एवा स्थुल बोधना सम्यक चिंतवनना बळे सम्यग्दर्शनना अभेद-विषयरुप एवा अखंड-आत्मद्रव्यमा स्वभाव एकत्वरुप परिणमन थता, त्या स्वसंवेदनरुप एवी सुक्ष्म बोध परिणमनरुप अवस्थानु कहेता करण-लब्धीरुप निर्मल पर्यायनु प्रगटपणु थनु ते।

आ प्रमाणे पंच लब्धीनु स्वरुप छे। अहिं हवे तेना परस्पर संबंध विशेषरुप बोधनी समालोचना करीए तो आदिनी चार लब्धी परस्पर संबंध-विशेषरुप होवाथी प्रथमनी एक लब्धी उत्पन्न थता, बीजी, त्रीजी, अने चोथी एम अनुक्रमे चारे लब्धी जीव पुद्गलना निमित नैमितिक संबंधने लईने पोत पोताना कारणे उत्पन्नरुप थई जाय छे, अने पांचमी करण-लब्धी सम्यग्दशननी उपलब्धीना समये ज प्रगटे छे, अने तेमा पण जीव पुदगलनु परस्पर निमित-नैमितिकपणु होवानी अपेक्षा रहे छे। तथारुप पाचे लब्धीमा जीवना सद् समजणपुर्वकना पुरुषार्थनी अपेक्षा प्रधानरुप रहेती होवाथी उपरोक्त पांचे लब्धीमा तथा प्रकारना जीवना पुरुषार्थनुं ज मुख्यपणुं दर्शाव्युं छे, अने तेना बाह्य निमितनी अपेक्षाए मात्र एक सम्यग्ज्ञानी पुरुष ज प्रधानरुप होवाथी तेनु विशेष महत्वपणुं तथारुप निमितनी अपेक्षाए प्रतिपादन करवामा आव्युं छे, अने ते अनुसार तेनु स्पष्टार्थ विवरण चालु सुत्रना विशेषार्थ बोधमा करी द्रव्यलींगीना उपदेशथी अन्य जीवनी आत्मार्थ सिद्धी न थती होवानुं विशेष प्रकारे सुचव्यु छे, तेनी सन्मुख भावे विचारणा थता आत्मार्थी जीवने ते सहज समजावा योग्य छे। हवे अहिं देशना-लब्धीना प्रधान लक्षे पचलब्धीना खास नियमोनु प्रतिपादन करवामा आवे छे।

देशनादि पचलब्धीना नियमोनुं स्पष्टार्थ विवरण

१—सम्यग्दर्शननी उपलब्धी नियमा पचलब्धीपुर्वक ज थाय छे, अने तेथी सम्यग्दर्शननी उपलब्धीना समये ते लब्धीओनु होवु अनिवार्यरुप छे।

२—देशना-लब्धीना विषे सप्राप्त थयेला बोधनुं स्थुल परिणमन होवा छता बोधना निर्णयात्मक अवधारनुं तेज क्षेत्र मुख्यरुप होवाथी आदिनी चार लब्धीमा तेनु महत्वपणु छे।

३—देशना-लब्धीरूप बोधना निर्णयात्मक अवधारमा गृहीत मिथ्यात्वनुं अभावपणुं थतुं होवाथी त्यां देवादिनयनी स्फुरेली प्रतिती थोड छता निःशंकरूप होय छे ।

४—देशना-लब्धीरूप बोधना निर्णयात्मक अवधारथी आत्मार्थ-साधनामां आत्मार्थ अनुकूल निमित्तो कहेता देव, गुरु, शास्त्र केवा प्रकारना होवा जोईए, अने तेनी उपलब्धी क्यां क्षेत्रे थवी जोईए, ते व्यवहार सम्यग्दर्शननी उपलब्धीरूप क्षेत्र, प्रतितीमां आवता सहज प्रतितीरूपे मतमतांतरनी समालोचनापुर्वक दृढ थाय छे ।

५—देशना-लब्धीनी प्राप्ती प्रायमीक जीव सन्मुखवर्ती जीवोने सीधी रीते जिनागम द्वारा [illegible] शकती नथी पण ते अर्थे तेना कोई आत्मज्ञ कहेता सम्यग्ज्ञानी पुरुषनी ज अपेक्षा रहे छे, [illegible] पण एक खास नियम छे ।

६—देशना-लब्धीरूप स्थुल बोधना अंतररूप परिणमन विना, क्षायोपशमीक अने विशुद्धि आदिनी बे लब्धी थई शके नहिं, अने देशना लब्धीरूप स्थुल बोधना-[illegible] विना, चोथी प्रायोग्य-लब्धी प्रगटी शके नहि, ए पण एक खास नियम छे ।

७—देशना-लब्धी विना कोई जीवने निश्चय-सम्यग्दर्शननी उपलब्धी थई शके [illegible] देशना-लब्धीनुं उत्पत्ति क्षेत्र सम्यग्ज्ञानी पुरुष विना, अन्य [illegible] खास नियम छे ।

८—देशनादि चार लब्धी विना सम्यग्दर्शन सन्मुख [illegible] लब्धीनी उपलब्धी विना प्राप्त करी शकातुं नथी, ए पण [illegible]

९—देशनादि चार लब्धी थाय त्यां सम्यग्दर्शन थवुं [illegible] सम्यग्दर्शननी उपलब्धी समये देशनादि पांचे लब्धी [illegible]

१०—देशना-लब्धीरूप बोधने स्थुल जीव परिणमन [illegible] छे, पण ते जीव श्री जिनना अंतर आशयने [illegible] थयेलो होवाथी ते द्वारा सम्यग्दर्शननी सिद्धी [illegible] अवश्य थवा योग्य छे ।

११—देशना-लब्धीनी उपलब्धीने पामेलो जीव [illegible] निश्चयनो सिद्धांतो [illegible] अथवा सम अज्ञानी गुरुने अनुसरे [illegible] होवाथी तेम [illegible] ए पण एक खास नियम छे ।

१२—स्वरुपशुन्य वक्ता एवा द्रव्यलींगीना उपदेशथी देशना-लब्धी के सम्यक्त्वनी उपलब्धी थती होय तो स्वरुपस्थ वक्ता एवा भावलींगीनुं महात्म्य कांई पण प्रशंशवा योग्य रहेतु नथी, ते सुज्ञ जीवे विचारवा योग्य छे।

उपरोक्त बोधथी आत्मार्थी जीवने स्पष्ट समजाशे के जे पुरुष सम्यक्त्वादि स्वरुप-बोधथी अलङ्कृत छे, तेज पुरुष सत्यमां सत्यरुप एटले आत्मार्थ-साधनामा अनुकूल निमितरुप होवाथी तेना कोई आत्मार्थी जीवने तथारुप बोध-विशेषना कारणरुप थई शकवा योग्य छे, अने तेथी जे जीवने तथारुप बोधनु एटले निमित-उपादाननी अनुकूल सधी होवा संबधीना सिद्धातिक नियमनु वास्तविक एवु सम्यक् जाणपणु वर्ते छे, ते जीव ज निमित उपादाननी अनुकूल सधीना सप्राप्त योगथी सम्यग्ज्ञान दर्शनादि एवा पोताना वस्तुस्वभावने के शुद्ध आत्म-धर्मने पामे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं उत्तम, मध्यम, अने कनिष्ट एवा त्रण प्रकारना श्रोताओनुं लक्षणभेदे आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

जिनाशय तत्वार्थने, समजे श्रोता तेह सुजाण।
सुविवेक सत्यासत्यानो, सरल मध्यस्थ सुविचारवान ॥
विशाल बुद्धी पण ते साथ, सुगुरु भक्ति अतर आत्मार्थ।
पहेला प्रकारना उत्तम ते, बोधी योग्य सभा पण ए ॥८॥

अन्वयार्थ—जेना अतर परिणामना विषे सत्यासत्यनो परम सद्विवेक प्रगट्यो होय, अतरमा सरलपणु अने मध्यस्थपणुं होय, परम सुविचारकपणु अने बुद्धीनु विशालपणुं वर्ततुं होय, अने ते साथे सद्गुरु प्रत्ये विनयादि सेवनारुप भक्तिनु प्रधानपणु अंतर आत्मार्थ-भावपूर्वक स्थिरताने पाम्यु होय, एवो जे सुजाण कहेता साची समजणनो धारक श्रोता होय तेज जिनाशय तत्वार्थ-बोधना परमार्थने समजी शक्वा योग्य छे, अने तेथी तेवा प्रकारना श्रोताओने पहेला प्रकारना एवा उत्तम श्रोता कही शकवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारना श्रोताओनी सभाने पण बोधी योग्य सभा एवा परम अलकृत नामथी सबोधवा योग्य छे, एम हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—श्री जिनना अतर आशयमा रहेला एवा तत्वार्थ बोधना-परमार्थने समजवा योग्य पात्रनी मिमासा करवा अगाऊ अहिं तत्वार्थ शब्दना रहस्यार्थनी मिमासा करवी अति आवश्यकरुप छे, एटले तेना स्पष्टार्थ बोधनु अहिं निरुपण करवामा आवे छे।

बुद्धीनी सरलता विना, आशयनी विशालता विना, जिनागम श्रुतना तत्त्वार्थ-बोधनो परमार्थ कोई पण जीवने कोई पण प्रकारे समजवा योग्य के आत्म-परिणामी थई शकवा योग्य नथी, एटलु ज नहिं पण जे जीवना विषे सुविचार श्रेणीनु मुढत्वपणु छे, अनेकांत दृष्टीनी गेरहाजरी छे, अने तुलनात्मक शक्ति पागळी छे, ते जीव कोई पण दर्शन संबंधी वास्तविक निर्णय करवा माटे सर्वथा अनधिकारी छे। मतलब के उपरोक्त गुणातीशयरुप निर्मळ अवस्थानुं प्रगटपणु थये ज जीव तथारुप बोध परमार्थने समजवानो के दर्शन संबंधी निर्णय करवानो अधिकारी थई शके छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं बीजा प्रकारना मध्यम श्रोताओनुं आगळ निरुपण करवामां आवे छे।

बीजो प्रकार श्रोता तणो, जेने अंश न वस्तु विवेक।
तेथी सत्यासत्यना, विषे, होय विपर्यय के मुढत्व छेक ॥
मध्यम श्रोता कहीए ते, बोधी अयोग्य समा ए।
तेथी न प्रणमे तेने कांय, वस्तुबोध त्यां अंतर मांय ॥९॥

अन्वयार्थ—ते श्रोताओना बीजा प्रकारना जीवोने अंश मात्र पण वस्तु-विवेक कहेतां तत्व संबधी बोध होतो नथी, अने तेथी सत्यासत्यना विषे ते जीवोनु विपर्ययपणुं के छेक मुढत्वपणु वर्ततु होय छे, ते श्रोताओने मध्यम श्रोता कहीए, अर्थात् कहेवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारना श्रोताओनी समाने बोधी-अयोग्य एवा विशेषणथी संबोधवा योग्य छे, अने तेथी त्यां तेना अंतर परिणामना विषे वस्तु-बोधनु परिणमन कांई कहेतां अंश मात्र पण थई शकतु नथी, एम हे सौम्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—आत्मार्थ हेतुभुत एवा सर्व प्रकारना सद्विवेकनी उत्पत्तिनो मुळ आधार तेना मुळ बीजभुत एवा मात्र-एक वस्तु-विवेक पर एटले वस्तुनी यथार्थ समजण पर अवलंबीत होवाथी अने तथारुप वस्तु-विवेक साथे त्रयात्मक सद्विवेकनो एटले सत्यासत्यनो, हिताहितनो, अने कार्याकार्यनो एवा त्रण प्रकारना सद्विवेकनो संबंध मुख्यपणे रहेवाथी तथारुप एवा ते वस्तु विवेकनु सर्व विवेकमा प्रधानपणु छे। तथाप्रकारना प्रधानरुप एवो ते वस्तु-विवेक प्रत्ये एटले हु कोण छु ? ते संबंधीना वास्तविक एवा तत्व निर्णय प्रत्ये, के तथारुप निर्णयना हेतुभुत एवा आत्मबोध के आत्मबोधना विचार प्रत्ये, के ते विचार उत्पन्न थवाना असाधारण निमितरुप एवा श्रीसद्गुरु के सम्यक्ज्ञानी पुरुष प्रत्ये,

ज्या सुधी जीवनुं पराङ्मुखपणु वर्ते छे, त्या सुधी सत्यासत्यरुप एवा उभयात्मक तत्वोना विषे ते जीवनु विर्षययपणु एटले तत्वमा अतत्व-श्रद्धानरुप अने अतत्वमा तत्व-श्रद्धानरुप एवुं बुद्धीनुं विपर्यासपणु अथवा तो छेक मुढत्वपणुं कहेता ते उभय तत्वोमा समान बुद्धीपणुं एवा वस्तु अविवेकने लईने त्या स्वभावीक ज होय छे। आवा प्रकारनुं मुढत्वपणु ते जीवोना अंतर परिणामना विषे तत्व-दृष्टीए होवा छतां पण स्थुल-दृष्टीए तेनु खास विरोधात्मकपणु के अममानपणु प्रत्यक्ष एवा कोई सद्गुरुना के तेवा कोई स्थितिप्रज्ञ पुरुषना संप्राप्त योगमा दृष्टीगोचर थई शके तेवु होतु नथी, अने तेथी तथारुप दृष्टीए तेवा प्रकारना श्रोताओने मध्यम श्रोता कहेवा योग्य छे, अने ते साथे बोध-बीजनी खास योग्यता न होवाथी तेवा प्रकारना श्रोताओनी समाने बोधीअयोग्य, एवा विशेषणथी तेने संबोधवा योग्य छे। आवा प्रकारनी बोध सन्मुख थवानी वर्तमान योग्यताना अभावे तेवा जीवोने सद्गुर्वादि प्रज्ञपुरुषनो संप्राप्त योग पण अप्राप्तरुप कहेता निष्फलरुप थाय, ए स्वभावीक छे, अने तेथी तेवा जीवोना अंतर परिणामना विषे वस्तु-बोधनुं परिणमन थई कहेता अंश मात्र पण न थई शके, एम उपरोक्त गाथासुत्रमां कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं त्रीजा प्रकारना कनीष्ट श्रोताओनु आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

त्रीजो प्रकार श्रोता तणो, जेने होय मतार्थनुं मान।
तेथी दुराग्रहमां रही, करे सद्गुरुनुं अपमान॥
कनीष्ट श्रोता कहीए ते, धर्मद्रोही जाण सभा ए।
तेथी प्रणमे बोध त्यां जेम, पय विष रुपे सर्पने तेम॥१०॥

अन्वयार्थ—ते श्रोताओना त्रीजा प्रकारना जीवोने मतार्थनु मान कहेता पोताना सप्रदायनु अहं-ममत्वरुप मिथ्यात्व मुख्यपणे वर्ततुं होय छे अने तेथी ते तथा प्रकारना दुराग्रहमा रही प्रत्यक्ष एवा ते सद्गुरुनु अपमान कहेता ते धर्मात्मा व्यक्तिनो द्रोह करनारो होय छे, तेने कनीष्ट श्रोता कहीए अर्थात् कहेवा योग्य छे, अने तेवा प्रकारना श्रोताओनी समाने पण धर्म-द्रोही एवा विशेषणथी संबोधवा योग्य छे, अने तेथी जेम सर्पने दूध पावाथी ते विषरुपे परिणमे छे, तेम त्या बोधनु परिणमन पण तेने तेवा ज प्रकारे थाय छे, एम हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण करी अंतरना विषे जाण।

विशेषार्थ—मताग्रह दृष्टीरुप अभिनीवेश ए मुख्यपणे गृहीत मिथ्यात्वने अवलंबीत

होवाथी ज्यां ज्या तथारुप मिथ्यात्वनु अस्तित्व वर्ततुं होय छे, त्यां त्या तथा प्रकारना अभिनीवेशनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते अवश्य होय छे । तथारुप मिथ्यात्वना एकदर पाच प्रकार छे, ते अनुक्रमे निचे प्रमाणे छे ।

एकांतिक मिथ्यात्व

अनंत गुण पर्यायना पिंडरुप एवी जे सामान्य विशेषात्मक वस्तु ते अनत धर्मात्मक होवा छतां तेने कोई एक गुण धर्मरुपे स्वीकारवारुप एटले आत्माने सर्वथा क्षणीक के नित्य माननारुप अने ते अनुसार तेना अन्य अनेक धर्मोनुं खंडन करवारुप एवु विरोधात्मक प्रतिपादन मताग्रह दृष्टीने अवलंबीत थई करवु ते ।

विपरीत मिथ्यात्व

शुद्ध आत्म-धर्मनी प्राप्तीना योग्य अनुकूल निमितरुप एवा सद्गुर्वादिक त्रयात्मक-तत्वोना के श्री जिन देवनी वितरागी प्रतिमाना परमार्थने भुली तथारुप तत्वोना विरोधात्मक बोधने मतार्थ भावे ग्रहण करवारुप, अने ते अनुसार तेने तीव्र मिथ्याभिनीवेशपुर्वक सेववारुप एवी विपरित रुचीने दृढ करवी ते ।

सांशयिक मिथ्यात्व

वस्तु-धर्मना वास्तविक निर्णय के तेना सत्यार्थ बोधना अभावे ते संबंधीनी एटले आत्माना अस्तित्वनी के तेना षट्-दर्शनात्मक पदना होवा संबंधीनी एवी अनेक प्रकारनी शंकाओने मती मुढ भावे पोषी तेने व्यक्त के अव्यक्त परिणामे टकावी राखवी ते ।

अज्ञानिक मिथ्यात्व

मती भ्रमथी के मुढ दृष्टीथी त्रयात्मक-सद्विवेकथी विरुद्ध एवा सत्यासत्यना, हिताहितना, अने कार्याकार्यना असद्विवेकने अवलंबी अनेक प्रकारना असत्यार्थरुप एवा पशुवध आदि अधर्मना कार्यने धर्म माननारुप, अने तथारुप बुद्धीए तेने सेवनारुप एवी हिंसात्मक प्रवृतिने कुळधर्म-बुद्धीए दृढ करवी ते ।

वैनयिक मिथ्यात्व

मती भ्रमथी के मुढ दृष्टीथी सत्यासत्य देव गुर्वादिक स्वरुपनो विरोध निर्णय कल्पी के ते बनेमा समानपणानो आरोप करी ते उभय स्थान प्रत्ये विनयादि सेवनानुं विपरितपणुं के समान बुद्धीपणु पोषवारुप एवा मिथ्याभिनीवेशने वळगी रहेवु ते ।

श्रवणरुप बोध विचारनु अंतरना विषे स्व-सन्मुखपणु वर्ततुं होय, तेने पहेला प्रकारना नामथी सबो धवामा आवे छे, अहिं ते बोध-विचार क्रमे करी नित्य स्वभाव लक्षे स्थिर थाय छे, अने तेज लक्षे त्या क्रमे करी पोता संबंधीनो निर्णय छेक कहेतां सर्व प्रकारे थईने पोताने वस्तु विवेक कहेता स्व-स्वरुपनु यथार्थ भान प्रगटे छे, एम हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—वस्तु विवेक एटले पोताने पोताना स्वरुपनी यथार्थ सद्समजण के स्वरुपनुं साचुं भान प्रगट थवु ते। तथा प्रकारना वस्तु-विवेकनी उपलब्धीनो मर्म आधार मात्र एक पोतानी स्वभाव सन्मुख दृष्टी पर ज रहेलो छे, अर्थात् जे कोई आत्मार्थी जीव जिनाशय सत्श्रुतनी श्रवणरुप बोध-विचारणाने अनुक्रमे स्व-सन्मुख प्रेरीत करे छे, एटले सत्श्रुतना श्रवण थयेला बोधनुं ते अनुसार ग्रहण, ग्रहण थयेला बोधनु ते अनुसार चिंतवन, चिंतवन थयेला बोधनुं ते अनुसार स्व-निर्णयात्मकरुप परिणमन, अने स्व-निर्णयात्मकरुपे परिणमन थयेला एवा ते बोधनुं ते अनुसार स्वभाव एकत्वरुप स्वसंवेदन, एम अनुक्रमे श्रवण, ग्रहण, चिंतवन, स्व निर्णयात्मकरुप परिणमन, अने स्वभाव एकत्वरुप स्व-संवेदन, एवी पचात्मक विर्य-प्रवृतिने स्वभाव लक्षे अवलंबवाथी परम एवी वस्तु विवेकनी उपलब्धी थाय छे। आवा प्रकारनी वस्तु विवेकनी उपलब्धी साथे तेना अविनाभावी संबधरुप एवा त्रयात्मक सद्विवेकनुं कहेता सत्यासत्यना, हिताहितना, अने कार्याकार्यना ए त्रण प्रकारना सद्विवेकनुं होवुं अनिवार्यरुप होवाथी ते पण तेनी साथे ज उपलब्धरुप थई जाय छे, अने तेथी ते अनुसार उत्तम एवा ते पहेला प्रकारना श्रोतानी सहज आत्मार्थ अनुकूलपणे सर्व प्रवृत्ति थवी शरु थाय छे, अने क्रमे करी ते तथारुप वस्तु-विवेकना बळे पुर्णस्वरुप वितरागत्वने पण पामे छे।

आ प्रमाणे उत्तम एवा ते पहेला प्रकारना श्रोताओ उपरोक्त क्रमानुसार पोते पचात्मक विर्य-प्रवृतिने स्वभाव लक्षे अवलंबी ते द्वारा ते वस्तु विवेकनी उपलब्धीने सम्यक्प्रकारे पामे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

हवे उत्तम श्रोता तणो, कहु बीजो तने प्रकार।
त्यां पर्याय लक्षे अतरे, स्वथी विमुख बोध विचार॥
तेथी न प्रगटे तेने कांय, वस्तु विवेक अंतर मांय।
स्वनिर्णयविना एम अतर जाण, कहीए स्वथी ते वेभान॥१२॥

अन्वयार्थ—हवे ते उत्तम श्रोतानो बीजो प्रकार तने कहुं छुं, त्यां श्रवणरूप बोध विचारनु श्रवणना विषे पर्यायाश्रीत लक्षे एवु स्वयी विमुखपणुं वर्ततुं होय छे, अने तेथी तेना अंतर परिणामना विषे पोता संबंधीना निर्णय विना, तेने साई वस्तु-विवेक रहेता स्व-स्वरूपनु यथार्थ भान प्रगटतुं नथी, अने तेथी तेने स्वथी रहेता पोताना स्वरूपथी वेमान थईए अर्थात् रहेवा योग्य छे, एम हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरूप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—वस्तु विवेकनी उपलब्धीनो सर्व आधार मात्र एक पोतानी स्वभाव सन्मुख दृष्टी पर ज रहेलो छे, अने तेज हेतुनी सिद्धी अर्थे पुर्वोक्त सुत्रमा जिनाशय सत्श्रुतना बोधनु श्रवण ग्रहण, चिंतवन, स्व निर्णयात्मकरूप परिणमन, अने स्वभाव एकत्वरूप स्वसंवेदन एवी [illegible] विपर्य-प्रवृतिने स्वभाव लक्षे अवलंबनानु प्रतिपादन करवामा आव्युं छे। आवा प्रकारना श्रवणरूप [illegible] तथा प्रकारे ग्रहण, कोई सद्गुरु योगे थता छतां, जे जीवे पोताना स्वछंदादि दोषने [illegible] पर्यायजन्य मुढताने वश थईने, ते ग्रहणरूप बोधना वास्तविक चिंतवनपुर्वक पोते पोतानी दृष्टी [illegible] तरफ प्रेरी नथी, के ते प्रकारनी दोषजन्य मुढताने पोते अंशे पण आत्मार्थ सन्मुखतापुर्वक [illegible] ते जीव तथारूप दोषजन्य मुढताने वश थई पर्यायात्मक एवी ते विपर्य-प्रवृतिना [illegible] एवा एकांत पर्यायाश्रीत लक्षे परिणमावी एटले तथा प्रकारना श्रवणरूप बोधनु [illegible] थईए ग्रहण, अने ग्रहणरूप बोधनु तथारूप विमुख लक्षे चिंतवन, अने चिंतवन [illegible] लक्षे एटले पर्याय बुद्धीए स्व निर्णयात्मकरूप परिणमन, अने ते [illegible] संवेदन एम स्वभाव लक्ष चुकीने पोते पोतानु अस्तित्व एकांत पर्यायाश्रीत [illegible] प्रकारनी विमुखतापुर्वक वर्ते छे।

समजाशे आथी तने, प्रगटी विवेक सर्व प्रकार ।
ज्यां वर्ते विवेक वस्तुनो, त्यां जाणपणुं सत्य धार ॥
ते वण जाणपणु होय ज्यां, बुद्धी रुपे कहीए त्यां ।
शुष्क अध्यात्मी तेने जाण, वर्ते पर लक्षे बेभान ॥१३॥

अन्वयार्थ—आ उपरथी तने सर्व प्रकारनो विवेक प्रगटी समजाशे के ज्यां वस्तु-विवेक करेतां पोताना वस्तु स्वभावनी यथार्थ सद्समजण वर्ते छे, त्यां तत्-संबंधी बोधनु सत्यार्थरुप जाणपणु होवानु तु धार । ते सिवाय तथारुप बोधनुं ज्या जाणपणु वर्ततु होय, त्या तेने बुद्धीरुपे कहीए, अर्थात् कहेवा योग्य छे, अने तेने ज तुं शुष्क-अध्यात्मी जाण, के जे पर लक्षे एकांत बेभान-पणे वर्ते छे, एम हे शीष्य तु आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर ।

विशेषार्थ—जिनाशय सत्-श्रुतना बोध श्रवणथी के तेना अभ्यासथी संप्राप्तरुप थयेल एवु जे तेनु द्रव्य-श्रुतरुप जाणपणुं तेना वास्तविक महात्म्यनी सिद्धी पचात्मक विर्य-प्रवृतिना अनुक्रमपुर्वक भावश्रुतरुप एवु स्वभाव सन्मुख परिणमन थवाथी ज थाय छे । आवा प्रकारनुं सम्यक् जाणपणु जे कोई जीवने आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक वर्ते छे ते तथारुप लक्षे स्व सन्मुख-पुरुषार्थमां योजाई ते द्वारा वस्तु विवेकनी उपलब्धीरुप एवी स्व-सिद्धीनी विजयताने पामे छे, ते सिवाय एटले तथा प्रकारना सम्यक् जाणपणाथी के आत्मार्थ सद्विवेकथी जे जीवनु पराङ्मुखपणु वर्ते छे, ते जीवने तथा प्रकारनु द्रव्यश्रुतरुप जाणपणु होवा छता, के थवा छता उपरोक्त मुढताना लीधे ते पंचात्मक विर्य-प्रवृतिने स्वभाव सन्मुख प्रेरीत करतो नथी, अने तेना अभावे ते वस्तु विवेकनी उपलब्धीने पण पामतो नथी ।

आ उपरथी उभयात्मक उत्तम श्रोतानी समालोचना करता स्पष्ट समजाशे के पहेला प्रकारना उत्तम श्रोताना विषे पचात्मक विर्य-प्रवृतिनु स्वभाव सन्मुख परिणमन आत्मार्थ सद्विवेकपुर्वक होवाथी त्या तथा प्रकारना बोध-विशेष जाणपणाने सत्यार्थरुप जाणपणु, अने सत्यार्थरुप जाणपणु होवाथी त्यां स्वरुप-अध्यात्मपणुं ए विशेषणथी संबोधवा योग्य छे, अने बीजा प्रकारना उत्तम श्रोताना विषे पचात्मक एवी ते विर्य-प्रवृतिनु स्वभाव विमुख परिणमन आत्मार्थ मुढतापुर्वक होवाथी त्या तथा प्रकारना बोध विशेष जाणपणाने असत्यार्थरुप जाणपणुं अने असत्यार्थरुप होवाथी त्या शुष्क-अध्यात्मपणुं ए विशेषणथी संबोधवा योग्य छे, एम उभयात्मक उत्तम श्रोताओना भेदत्वने परमार्थ दृष्टीए समजवा

योग्य छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हो अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगल निरुपण करवामा आवे छे।

तेथी उत्तम श्रोता विषे, पण उत्तम पहेलो प्रकार।
प्रणमे ते पहेला प्रकारने, सुबोध आ अंतर धार॥
तेवो श्रोता तुजने आंय, जोई दया आणी मन मांय।
उपदेश्यो में सम्यक् बोध, पुर्वापर लक्षे अविरोध॥१४॥

अन्वयार्थ—तेथी उत्तम श्रोताना विषे पण विशेष उत्तम पहेलो प्रकार छे, ते पहेला प्रकारना श्रोताने परम एवो आ सुबोध तेना अंतरना विषे परिणमे, एम तु धार। तेवो श्रोता अहिं में, तने जोईने अंतरना विषे करुणात्मक भाव लावी आ सम्यक् बोध पुर्वापर लक्षे अविरोध-एटले पुर्वे जे ज्ञानी पुरुष थई गया ते अनुसार उपदेश्यो छे, ते हे शीष्य तु आ निजप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—पुर्वोक्त सुत्रमा कह्या प्रमाणे त्रने प्रकारना उत्तम श्रोताओमां पहेला प्रकारना उत्तम श्रोताओना विषे पचात्मक विर्य-प्रवृतिने स्वभाव सन्मुख परिणमाववा योग्य एवु आत्मार्थ सद् विवेकरु योग्यपणु होवाथी ते प्रकारना उत्तम श्रोताओ जिनाशय सत् श्रुतनो सम्यक् बोधे अवधारण करी शके ए सहेज अने स्वभावीक छे, अने तेथी उपरोक्त सुत्रमा तेनुं मुख्यपणु दर्शावी तथारुप लक्षे अहिं प्रत्यक्ष बोधदाता, एवा जे श्री सद्गुरु भगवंत, ते तथा प्रकारनी योग्यता वर्ती रही छे जेनी, एवा ते श्रवण-बोधना अधिकारी जीवने उद्देशीने कहे छे, के हे उत्तम जीव! तेवो उत्तम श्रोता अहिं मे तने जोईने एटले तारु उपादान वस्तु-विवेकनी उपलब्धीने सहज पामी शके, एवु तारु यथार्थ निरीक्षण करीने, अने तथारुप लक्षे अंतरना विषे करुणात्मक भाव लावीने, तने आ सम्यक्-श्रुत-बोध पुर्वापर लक्षे अविरोध एटले पुर्वे जे श्री तिर्थंकरादि आत्मज-पुरुष थई गया, तेमना अंतर आशयने अनुसरीने उपदेश्यो छे, एम श्री सद्गुरु भगवत एवा ते अधिकारी जीवने तेनी विशेष आत्मार्थ सन्मुखता के स्वरुप दढता अर्थे अती करुणात्मक भावे सुचवे छे, एम उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे, हवे अहिं तेना अनुसंधानपुर्वक आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

ते स्व लक्षे विचारतां, तने स्फुरशे वस्तु विवेक।
अनुप्रेक्षा विशेषथी, थशे दढत्व निजनु छेक॥

तेथी स्वाध्याय तेनो नित्य, करजे सुविवेक लावी चित्त।
तो तेथी सम्यग्दर्शन तु, पामीश अंतिम कहुं छुं हु ॥१५॥

अन्वयार्थ—तथारुप बोधने स्व लक्षे कहेता स्वभाव तरफ द्रष्टी प्रेरीने विचारता तने वस्तु विवेकनी उपलब्धी थशे, अने तेनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा थता निज चैतन्यात्मक स्वभावनुं छेक कहेता तेनु तने विशेष प्रकारे दढत्वपणुं आवशे, तेथी तुं चित्तना विषे सद्विवेक लावीने तेनो नित्य स्वाध्याय करजे तो तेथी तुं सम्यग्दर्शनने पामीश, एम हुं तने अतिम एटले आ छेल्ली गाथानो परमार्थ कहुं छु, ते हे शीष्य तुं आ जिनप्रवचनरुप बोधना परमार्थने श्रवण कर।

विशेषार्थ—पुर्वोक्त सुत्रना अनुसंधानपुर्वक अहिं पुनः श्री सद्गुरु भगवत एवा ते श्रवण-बोधना अधिकारी जीवने उद्देशीने कहे छे, के हे उत्तम जीव ! अहि सुधी तने अपायेलो एवो जे जिनाशय मत् श्रुतनो उपदेश तेने स्वलक्षे विचारतां एटले तारा शुद्ध द्रव्यस्वभाव तरफ द्रष्टी प्रेरी तथारुप बोधनी तत्व-मिमांसा करता, तने वस्तु-विवेकनी उपलब्धी थशे, एटले तारो आत्मस्वभाव जेम छे, तेम तेनु तने यथार्थ एवु सम्यक् भान आवशे, अने ते अनुसार तेनी विशेष प्रकारे अनुप्रेक्षा थता, एवा ते तारा शुद्ध चैतन्यात्मक स्वभावनु तने विशेष प्रकारे दढत्वपणु कहेता अपुर्व एवु स्वरुप निःशंकत्वपणु आविर्भावने पामशे, तेथी हे उत्तम जीव ! तु चित्तना विषे सद्विवेक लावीने एटले परम कल्याण कारी एवा तारा आत्मार्थ सबधी हितने मुख्यरुप करीने, तथारुप बोधनो तु नित्य स्वाध्याय कहेता स्व-लक्षे तेनु चिंतवन मनन करजे। मतलब के जे प्रकारे पचात्मक निर्य-प्रवृतिना अंतर अनुक्रमपुर्वक ते वस्तु-विवेकनी उपलब्धीना हेतुरुप थाय, ते प्रकारे तथारुप बोधने स्वभाव सन्मुख परिणमाववा तु उद्यमवत थजे, तो तेथी तु सम्यग्ज्ञान दर्शनादि एवा शुद्ध आत्मधर्मने पामीश, एम हुं तने अंतिम एटले बोध समाप्तिरुप एवी आ छेल्ली गाथानो परमार्थ कहु छु, एम श्री सद्गुरु भगवत, एवा ते अधिकारी जीवने अंतिम सद्शिक्षानु सुचन करी उपदेश प्रवृतिनी समाप्ति करे छे, अने एज उपरोक्त गाथासुत्रमा कहेवानो परमार्थ छे। हवे अहि परमोपकारक एवा श्री सद्गुरु प्रत्ये शीष्यने स्फुरेला भक्तिउल्लास-भावसबधी आगळ निरुपण करवामा आवे छे।

शीष्य कहे गुरुजी कर्यो, आज आपे महा उपकार।
अष्ट अवस्था बोधीने, समजाव्यो तत्वनो सार॥

अन्वयार्थ—हे भगवंत ! आपना अत्यत एवा आ उपकारना बदलामा हुं आपना चरण समीपे एवी कई वस्तु धरु, आप प्रभु तो परम निष्काम छो, वळी आ जगतना विषे आत्माथी अधिक तो एवु काई पण नथी, पण ते करता हिनत्वपणु तो सर्व पदार्थोनु देखाय छे, अने तेथी हे सद्गुरु भगवत ! हु आपनी भक्तिमा लीन थईने आपना चरणाधीन रहेता आपनी आज्ञानुसार वर्तुं, अने एज सद्विवेक मने सदा अतरना विषे छेक रहेता सर्व प्रकारे स्वरुप लक्षे वर्तो, एम याचना करी, हे श्री सद्गुरु भगवत ! हु आपने जय जय कहेता सदा जयवत वर्तो, एम अतर-उद्‌गारपूर्वक वदन करु छु ।

विशेषार्थ—जगतना सर्व पौद्‌गलीक पदार्थोनु मुख्य एवी आत्म दृष्टीए निरीक्षण करीए तो तेनु हिनत्वपणु सहज सिद्ध थई शकवा योग्य छे, अने ते सिद्ध थतां आत्माथी अधिक एटले ते करता विशेष मुल्यवान एवो एक पण पदार्थ आ जगतना विषे होवानु ए त्रणे काळना विषे स्वभावीक ज असिद्धरुप ठरे छे । मतलब के षट् द्रव्यात्मक एवा आ लोकना विषे स्व पर-प्रकाशक एवी ज्ञानात्मक शक्ति विशेषथी अलंकृतपणु वर्ती रह्युं छे जेनु, एवु जे एक आत्म-द्रव्य तेज मात्र एक तथारुप गुणना दिव्य प्रकाश वडे करीने जगतना अन्य सर्व पदार्थोमां परम ऐश्वर्यवान एवी एक प्रधानरुप वस्तु छे।

आवी प्रधानरुप चैतन्यात्मक वस्तुनु सम्यक् प्रकारे जाणपणु उपलब्धरुप थयु छे जेनु, अने ते अनुसार स्वभाव एकत्वरुप स्व-सवेदन वर्ती रह्युं छे जेनु, एवा ते वीतरागत्व परिणामरुप अतर-व्यापक दृष्टीना धारक पुरुषने जगतना अन्य सर्व पदार्थो प्रत्ये पोतानी निस्पृह बुद्धी होवाथी तेमने परम निष्काम ए विशेषणथी संबोधवा योग्य छे। आवी परम निष्काम वृत्तिना धारक एवा श्री सद्गुरु भगवतना प्रत्यक्ष योगे बोध-परिणामी थयेल एवो जे शीष्य, ते तथारुप उपकारना बदलामा ते प्रभुना चरण-समीपे एवी कई वस्तु धरे । मतलब के परम निष्काम एवा ते सद्गुरु भगवतने न कोई अन्य पदार्थनी स्पृहा छे, के न तेमने योग्य स्वरुप-सवेदनना परम आनदथी अधिक एवो कोई जगतना विषे पदार्थ छे । आवा प्रकारनो अतर आत्मार्थ सद्विवेक उपरोक्त एवा ते आत्मार्थी शीष्यने उपलब्धरुप होवा छता, मात्र शीष्य धर्मे तथारुप उपकारना बदलामा हु आपना चरण समीपे एवी कई वस्तु धरु, एवा एक अत्यत निर्दोल्लास परिणामे उत्पन्न थयेला विकल्पने ते सद्गुरु सन्मुख निवेदन करे छे, अने ते साथे तेनु अंतर समाधान पण तथारुप सद्विवेकना वडे करी पुन. सद्गुरु सन्मुख पोतानी अतरउर्मी प्रगट करे छे, के हे भगवत ! हु आपनी भक्तिमा लीन थईने आपना चरणाधीन रहेता आपनी आज्ञानुसार वर्तुं, एवो सद्विवेक मने सदा अतरना विषे छेक रहेतां सर्व प्रकारे स्वरुप-लक्षे

વર્તો, એવા પ્રકારની યાચના વિનયપુર્વક કરે છે, એમ ઉપરોક્ત ગાથાસુત્રના કહેવાનો પરમાર્થ છે। હવે અહિં તેના અનુસધાનપુર્વક પુન: શીષ્યની અંતિમ યાચના સંબંધી આગળ નિરુપણ કરવામા આવે છે।

> आशिष मागुं आपनी, हवे अंतिम एज कृपाळ।
> पुर्ण स्वरुपने पामवा, रहो पुर्णनो अतर ख्याल॥
> ते माटे विभावे थईने उदास, वर्तो दृष्टी द्रव्य अंतर खास।
> अगणित वार नमावी शीश, आशिष मागुं ए अहर्नीश॥१८॥

अन्वयार्थ—હે પરમ કૃપાળુ ગુરુદેવ! હવે અંતિમ આપની પાસે એજ આશિષ માગુ છુ, કે પુર્ણસ્વરુપને પામવા પુર્ણ એવા વસ્તુ-સ્વભાવનો મને અંતરના વિષે ખ્યાલ રહેતા લક્ષ રહો, અને તે માટે વિભાવ ભાવો પ્રત્યે ઔદાસીનપણુ થઈને અંતરના વિષે દ્રવ્ય-દ્રષ્ટી મને ખાસ રહેતા મુખ્યપણે વર્તો, અને એજ આપની પાસે અગણિત વાર શીશ નમાવી અહર્નીશ આશિષ માગુ છુ, અને એજ અંતિમ યાચના કરી હે શ્રી સદ્ગુરુ ભગવત! હુ આપને જય જય કહેતા સદા જયવંત વર્તો એમ અંતર-ઉદ્ગાર પુર્વક વદન કરુ છુ।

विशेषार्थ—પુર્ણસ્વરુપ વિતરાગત્વને પામવાનો સર્વ આધાર પુર્ણ એવા વિતરાગ-સ્વભાવની એકત્વરુપ સ્થિરતા પર જ રહેલો છે, અને તથી જે જીવ સમ્યક્દ્રષ્ટી થાય છે તે જીવનો મુખ્ય ધ્યેય પણ તેજ રહેતા તદ્રુપ એવી તે દ્રષ્ટીને અવલંબીત થવારુપ જ હોય છે। આમ વસ્તુ-સ્થિતિ હોવાથી જે કોઈ આત્માર્થી જીવ શુદ્ધ સમ્યગ્દર્શનની ઉપલબ્ધીપુર્વક તેના વિષયભુત એવી તે દ્રષ્ટીને અવલંબીત થાય છે, તે નિયમા પુર્ણસ્વરુપ વિતરાગત્વને પામે છે। આવા પ્રકારનુ બોધ વિશેષ પરિણમન ઉપરોક્ત એવા તે શીષ્યને સમ્યગ્દર્શનપુર્વક હોવાથી તે તદ્રુપ લક્ષે સ્વરુપ-પુર્ણતારુપ ધ્યેયની અતર્મુખ સિદ્ધી અર્થે પોતાના મુળ એવા તે અંતર-આશયને શ્રી સદ્ગુરુ સન્મુખ પ્રગટ કરે છે, અને તે માટે શુભાશુભ સર્વ વિભાવ ભાવો પ્રત્યે પોતાનુ ઔદાસીનપણુ થઈને મુખ્ય એવી દ્રવ્ય-દ્રષ્ટી પોતાના અંતર પરિણામના વિષે વર્તો। આવા પ્રકારની સ્વરુપ પુર્ણતારુપ ધ્યેયની અંતરંગ ભાવનાને અવલંબી તથા પ્રકારની પરમ એવી આશિષની યાચના વિનિતરુપે શ્રી સદ્ગુરુનુ બહુમાન લાવી તેમના પ્રત્યે અતિ વિનયપુર્વક કરે છે, અને એજ સુપાત્ર શીષ્યનુ પ્રશંસા યોગ્ય એવુ આ ઉત્તમોત્તમ લક્ષણ છે, અને ઉપરોક્ત ત્રણે ગાથાસુત્રના બોધથી સમજવા યોગ્ય પણ તેજ છે।

अंतिम उद्देश्य अने ग्रन्थनी समाप्ति

卐

गुरु शीष्य संवाद रुप, बोध अवस्था आठ।
कही क्रमानुसार ते, समजाव्यो परमार्थ ॥१॥
ते उत्तम श्रोताना विषे, पण उत्तम जे जन।
ते अधिकारी झीलतां, बोध थशे स्थिर मन ॥२॥
ते माटे आ ग्रथ मे, आगमना अनुसार।
लख्यो क्षेत्र उज्जैन विषे, अंतर करी विचार ॥३॥
स्वाध्याय तेनो अतरे, करे स्व-लक्षे नित्य।
तो स्वरुप विचार त्यां, थई पामे समकित ॥४॥
ज्ञान उघाड-शक्ति अने, स्थिरता पण अल्प।
तेथी सक्षेपे लख्यो, ग्रंथ थवा निर्वीकल्प ॥५॥
अक्षरथी पद-योजना, पदथी वाक्यो होय।
वाक्योथी बन्यो ग्रंथ आ, स्व-कृति न तेमां कोय ॥६॥
तथारुप विकल्पनुं, पण थई स्वमां स्थित।
मात्र कर्युं ते ज्ञान मे, लावी वस्तु प्रतित ॥७॥
शुद्ध बुद्ध चैतन्यघन हुं, स्वपर प्रकाशक छुं।
ते लक्षे ध्यानविजय कहे, थऊ स्थिर अतिम हु ॥८॥

* समाप्त *

शुद्धि-पत्र

पेज	लाईन	अशुद्ध	शुद्ध
मुखपृष्ठ	५	ध्यानविजय जी	ध्यानविजयजी
प्रभु-प्रार्थना	१०	अप्रहित	अप्रतिहत
४	४	विपे	विपे
९	९	बोध	ओध
९	२२	उपदान	उपादान
१२	७	चार	चार बोध
१३	छेल्ली लाईन	सदगुर	सद्गुरु
१५	९	हेतुरुप	हेतुरुप
२०	११	पृथक्त्तापुवक	पृथक्तापुर्वक
२२	प्रथम लाइन	भावाश्रय	भावाश्रव
२२	१३	दोपानु	दोषोनुं
२३	१५	एव	एवा
२४	८	कहेता	कहेता
३०	२३	स्व तरफथी	स्व तरफनी
३३	२०	प्रेरता	प्रेरता
३४	२	उमरोक्त	उपरोक्त
३९	१४	एज	एज उपरोक्त
४३	५	होवथी	होवाथी
४४	४	क्तापणु	कर्तापणु
४४	२३	कोई	कोई पण
४९	प्रथम लाइन	वहा	कह्या
४९	७	वळे	चळे
४९	६	बोधना	बोधना
४९	९	उपलब्धिपणु	उपलब्धपणु
५१	२	पुरुषाथ	पुरुषार्थ
५३	छेल्ली लाईन	चोथी	चोथी
५३	"	विशेनु	विशेषनु
५७	७	तेने	तेनेज
६१	६	मुक्तारुवक	मुक्तापुर्वक
६१	गाथामा २	रुो	रुपे
६५	६	पैकी	पैकी तेने
६६	५	वततो	वर्ततो
६७	१७	जाणतो	जाणनारानो
७०	प्रथम लाईन	द्रढ करे	द्रढ करे छे।
७०	१६	विल्परुप	विकल्परुप
७३	गाथामा२	वोध	बोध
७५	२	त्रकाळ	त्रीकाळ
७९	गाथामा२	वरतुनो	वस्तुनो
९०	१६	असगपणे	असगपणे अने
९५	त्रीजी गाथामा २	तु	तु
९६	१८	अने छे	आने छे
९६	छेल्ली लाईन	होताथी	होवाथी
९७	९	सम्मुख	सन्मुख
१०१		गाथा ॥५॥	गाथा ॥६॥

पेज	लाईन	अशुद्ध	शुद्ध
१०६	१५	अने अने	अने
१०७	२४	अशुभत्व	अशुभ
११२	२२	ते द्वारा	ते द्वारा तें
११७	२६	अद्वागीज	अद्वागीम
१२३	४	संक्रातिरुप	सक्रातिरुप
१२३	९	वीचारमा	वीचारना
१२४	१६	एवुं ज	एवुं जे
१२९	२	वात	वात
१२९	१७	भान	भान

पेज	लाईन	अशुद्ध	शुद्ध
१३०	१६	पुर्णतानी	पुर्णताना
१३१	५	वच्चे	वच्चे
१३६	छेल्ली-लाईन	आळेसगामा	ओळसगामा
१४१	प्रथम लाईन	घाण	घाण
१४४	१३	निष्क्रीय	निष्क्रीय
१४८	२५	करु छे	करु छु
१५०	२१	प्रसगने	प्रसगने ते
१५८	गाथामा२	सत्यासत्यानो	सत्यासत्यनो
१९१	३	घात	घात